ISSN 0975-4083

# रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

**Peer-Reviewed Research Journal**
UGC Journal No. (Old) 2138 Impact Factor 4.875 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory
ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक - 25, हिन्दी संस्करण, वर्ष-13, अप्रैल-सितम्बर 2023

Centre for Research Studies
REWA (M.P.)

**2023**

www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0975-4083

# रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

**Peer-Reviewed Research Journal**
UGC Journal No. (Old) 2138
Impact Factor 4.875
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

**अंक-25 हिन्दी संस्करण वर्ष-13 अप्रैल - सितम्बर 2023**

**डॉ. अखिलेश शुक्ल**
प्रधान सम्पादक (ऑनरेरी)
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाज कार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

**डॉ. संध्या शुक्ल**
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

**डॉ. गायत्री शुक्ल**
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

**डॉ. आर. एन. शर्मा**
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

**सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा**
की मुख्य शोध पत्रिका

## Experts & Members of Advisory Board


- Prof. Hemanta Saikia, Assistant Professor, Department of Rural Development,Debraj Roy College, Circuit House Road, Golaghat, Assam, India.Pin-785621
  jio84hemant@gmail.com
- Dr. K. S. Tiwari, Professor, Regional Director, Regional Centre Bhopal, IGNOU, Bhopal
  kripashankar19954@gmail.com
- Dr. Puran Mal Yadav, Department of Sociology, Mohan Lal Sukhadia University
  UDAIPUR – 313001 (Rajasthan)
  pnyadav1964@gmail.com
- Dr. Ram Shankar. Professor of Political Science, RDWVV Jabalpur University, (M.P.)
  rs_dubey@yahoo.com
- Prof. Anjali Bahuguna, Department of Economics, School of Humanities and Social Sciences (SHSS),, HNB Garhwal University, (A Central University), Srinagar-246174 (Garhwal)
  anjali shss@gmail.com
- Dr. Sanjay Shankar Mishra, Professor of Commerce, Govt. TRS PG College, Rewa (M.P.)
  ssm6262@yahoo.com
- Dr. Pramila Shrivastava, Associate Professor, Department of Economics, Govt. Arts College Kota (Raj),
  dr21pramila@gmail.com
- Dr Alka Saxena, D. B. S. College, Kanpur (U.P.)
  alknasexna65@yahoo.com
- Dr. Deepak Pachpore, Journalist
  deepakpachpore@gmail.com
- Dr. C. M. Shukla, Professor of History Government Maharaja College, Chhatarpur District Chhatarpur(M.P.),
  rajan.19shukla@gmail.com

## Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract,Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

**लेखकों से निवेदन-**

- रिसर्च जरनल ऑफ आर्टस एण्ड मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेज (ISSN-0975-4083) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है।
  शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग-अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष मार्च तथा सितंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक, मोबाइल नं., ई-मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50-100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010 (फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

### सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

- **researchjournal97@gmail.com,**
- **researchjournal.journal@gmail.com**
- शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

| एक अंक रुपये 500.00 | -सदस्यता शुल्क - | |
|---|---|---|
| अवधि | व्यक्तिगत सदस्यता | संस्थागत सदस्यता |
| वर्ष एक | 2000-00 | 2500-00 |
| वर्ष दो | 2500-00 | 4000-00 |

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रक: ग्लोरी ऑफसेट
नागपुर

## संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कालोनी
रीवा- 486001 (म.प्र.)
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in
**दूरभाष - 7974781746**

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

# सम्पादकीय

रिसर्च जर्नल ऑफ आर्ट्स मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेज का 25 वॉं अंक अप्रैल-सितम्बर 2023 आपके समक्ष प्रस्तुत है। आज विमर्श का विषय बदलती जीवन मूल्य और हमारी चुनौतियां है, मेरा मानना है जीवन मूल्य व्यक्ति के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं वैयक्तिक जीवन को प्रभावित करते हैं। मूल्यों के अभाव में व्यक्ति परिवार समुदाय समाज मूल्यों के अभाव में व्यक्ति जीवन अथवा मानव जीवन की उन्नति, प्रगति एवं विकास कल्पना मात्र ही है। अत: सभी प्रकार के मूल्य जीवन मूल्य हैं। जीवन मूल्य व्यक्ति के जीवन को प्रभावित कर, उसे उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन है। आधुनिक युग में सामाजिक मूल्य व आदर्श बदल रहे हैं। सामाजिक संबंधों का रूप बदल रहा है। पारिवारिक व व्यक्तिगत आवश्यकताओं के बढ़ने के फलस्वरूप अर्थोपार्जन हेतु कार्यभार स्त्री और पुरुष दोनों पर ही पड़ने लगा है, जिससे मानसिक असन्तोष व तनाव बढ़ता जा रहा है,जो संयुक्त परिवार प्रणाली के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। शहरी जीवन इतना व्यस्त हो गया है कि व्यक्ति पारिवारिक जीवन से कोई लगाव अनुभव नहीं करता। जीवन में समरसता न होने से सामाजिक आदर्शों और मूल्यों में इतनी विविधता आ गई है कि उनके कारण पारिवारिक संगठन शिथिल हो रहे हैं। माँ, पिता और बच्चे के वैवाहिक तथा पारिवारिक आदर्शों में भी वैभिन्नय के दर्शन होते है। इस प्रकार के मत भेदों से अवांछनीय तनाव परिवारों में उत्पन्न होता है, जो उन्हें विघटित करता है। पाश्चात्य सम्पर्क और कुछ आधुनिक शिक्षा प्रणाली व समय की माँग के कारण नयी पीढ़ी भौतिकवादी व व्यक्तिवादी होती जा रही है। पाश्चात्य उदार जीवनदर्शन तथा उसके परिणाम स्वरूप व्यक्तिवादी भावना संयुक्त परिवार के विघटन तथा आणविक परिवार के सैद्धान्तिक आधार के लिए उत्तरदायी है और यह भविष्य में व्याप्त होने वाली है। विवाह के आधार में भी परिवर्तन हुए हैं। नयी पीढ़ी विवाह को एक समझौता मानने लगी है। विवाह विच्छेद को आजकल बुरा नहीं समझा जाता। विवाह का आधार प्रेम या श्रद्धा की भावना न रहकर, भौतिकता की भावना हो चुकी है। इसके अतिरिक्त अन्तर्जातीय विवाह भी पारिवारिक विघटन के प्रमुख कारणों में है। अधिकांश युवक युवतियाँ बिना सोचे-समझे गलत चुनाव करके, प्रेम विवाह रचा बैठते हैं और बाद में एक दूसरे की रुचियाँ, मानसिक स्तर भिन्न पाने पर, एक दूसरे से दूर भागते हैं। यह प्रवृत्ति भी संयुक्त परिवार प्रथा को समाप्त कर रही है। इसके अतिरिक्त नई पीढ़ी ही नहीं, पुरानी पीढ़ी भी पारिवारिक विघटन के लिए काफी सीमा तक जिम्मेदार है। माता-पिता भी परिवर्तित मानमूल्यों व सिद्धान्तों के साथ समझौता करने की तैयार नहीं होते। वे नई पीढ़ी से आशा करते हैं कि उनकी जीर्ण-शीर्ण मान्यताओं और रूढ़वादिता की वे सहर्ष स्वीकार कर जीवन में अपनाए। नियन्त्रण में रहे। लेकिन जब उनकी इच्छाओं के विरुद्ध पीढ़ी मनमाना आचरण करती है,तो वृद्धजन उनकी कटु आलोचना करते हैं, जो पारिवारिक वातावरण को दूषित करती है। जिससे पारिवारिक सदस्य एक दूसरे से दूर होते जाते हैं।

आज के भौतिकवादी युग में धर्म का भी महत्व घट रहा है। पहले तलाक को पाप समझा जाता था लेकिन आजकल विवाह विच्छेद अधार्मिक पाप कृत्य नहीं समझा जाता जैसा कि 'वैस्टर मार्क' ने लिखा है, "पारिवारिक जीवन व्यक्ति के लिए आज उतना महत्वपूर्ण नहीं रहा जितना कि कई वर्ष पूर्व था। यह स्त्री और पुरुष दोनों के लिए ही कम महत्वपूर्ण हो चुका है। अवैवाहिक जीवन की तुलना में वैवाहिक जीवन के लाभ कुछ अर्थों में कम हो गए है। संयुक्त पारिवारिक जीवन की पवित्रता, उच्चता में विश्वास समाप्त होता जा रहा है। इस प्रकार ये सब कारण पारिवारिक सुख और शान्ति तथा सुव्यवस्था को भंग कर रहे हैं। वर्तमान युग में इस पारिवारिक विघटन का सर्वाधिक उत्तरदायित्व औद्योगीकरण पर ही है, जिसके कारण अनेक प्रकार के पारिवारिक, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक तनाव विकसित हुए हैं तथा व्यक्तियों का भौतिकवादी दृष्टिकोण पनपा है।

मनुष्य की प्रतिष्ठा का मूल्यांकन उसके जीवन मूल्यों से किया जाता है वास्तविक सफलता के लिए आवश्यक है। हमारे जीवन मूल्य वैदिक काल से लेकर अब तक अगर हम विश्लेषण करें तो हम जिन महापुरुषों को याद करते हैं, उन्हें उनके जीवन मूल्यों और उन मूल्यों को जीवन में अनुसरण करने के कारण ही याद करते हैं। जीवन मूल्य व्यक्ति को सही मार्ग मैं ले जाते हैं और सकारात्मक सोच का निर्माण करते हैं। जो व्यक्ति मूल्य विहीन जीवन जीते हैं, उनका समाज में यथार्थ में कोई भी अस्तित्व नहीं होता। वह किसी का मार्गदर्शन नहीं कर सकते उनके जीवन में कोई गति और निरंतरता नहीं होती और सिद्धांतों के अभाव में ऐसे लोग अपने जीवन के अमूल्य क्षणों को बर्बाद कर देते हैं। किसी भी परिवार समुदाय यह समाज का संचालन और विकास आदर्शों और सिद्धांतों के माध्यम से ही होता है। यदि व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में इनका अभाव हो जाए तो हमारा पूरा का पूरा ताना-बाना विकृत होने लगता है, अनुशासन बिगड़ने लगता है, जीवन अनियमित हो जाता है और अन्य अनेक प्रकार की नकारात्मक चीजें हमें दिखाई देने लगती है। समाज हमेशा से उन लोगों का अनुसरण करता है, जिनके जीवन मूल्य हमेशा ऊंचे रहे हैं। सामाजिक मान-सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को मूल्य आधारित जीवन जीना ही पड़ेगा। व्यक्ति समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी और सार्थक तभी बन सकता है, जब वह विधि सम्मत मूल्यों से आधारित जीवन को अपनाएं। हां इस मार्ग में कुछ कठिनाइयां आती हैं परेशानियां आती हैं लेकिन त्याग और सत्य के माध्यम से हम इन मूल्यों को आत्मसात कर सफल और सकारात्मक जीवन जी सकते हैं।



**डॉ. अखिलेश शुक्ल**
**प्रधान सम्पादक**

# अनुक्रमणिका


01. समाजिक-राजनीतिक चेतना के विकास में पवाई रूल्स विरोधी आंदोलन (बघेलखंड के विशेष संदर्भ में) 09

**अखिलेश शुक्ला**

02. ग्राम पंचायतों में दलित महिलाओं की कार्य स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन (खोराबार विकासखण्ड के सन्दर्भ में) 18

**अनीता यादव**

**राकेश प्रताप सिंह**

03. मलिन बस्ती में हो रहे परिवर्तनों का अभिमुखन (किशोर बालिकाओं के सन्दर्भ में) 26

**पूजा भारती**

**आभा सक्सेना**

04. विवाह का संस्थात्मक स्वरूप एवं वर्तमान नगरीय समाज 34

**आराधना पटेल**

**आभा सक्सेना**

05. पर्यावरण संरक्षण की वर्तमान प्रवृत्तियाँ 41

**कुमुद श्रीवास्तव**

06. जनजातीय समाज में महिला सशक्तिकरण : एक आॅकलन 46

**मीनू कुमारी**

**आभा सक्सेना**

07. ग्रामीण समाज में वृद्धों की सामाजिक स्थिति का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (औरैया, उत्तर प्रदेश, जनपद के लुहियापुर गाँव के सन्दर्भ में) 52

**हेमलता सांगुड़ी**

08. जननी सुरक्षा योजना का स्वास्थ्य संबंधी प्रभाव (जिला सतना के विशेष संदर्भ में) 59

**विमलेश द्विवेदी**

**अखिलेश शुक्ल**

09. व्यक्तित्व संवेगों को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन 68

**विनेता**

10. रोजगार के अवसरों का सृजन करने वाली नीतिः राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 76

**मंजरी अवस्थी**

11. भारत की राजनीति में महिलाओं की भागीदारी विश्लेषणात्मक अध्ययन 80

**रेनू**

12. मध्यप्रदेश में जैविक कृषि की वर्तमान स्थिति 85

**तेज प्रताप तिवारी**

13. बिरहोर जनजाति में भाषा एवं शिक्षा की स्थिति का अध्ययन (छत्तीसगढ़ के कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में) 94

**गिरजा शंकर गौतम**

14. नाद क्या है? संगीत में नाद साधना की उपयोगिता तथा मानव जीवन में इसका महत्त्व 103
**दीपिका तिवारी**

15. मीरा स्त्री विमर्श 110
**खुशबू**

16. ब्रह्मण्ड पुराण में वर्णित धार्मिक मान्यतायें 115
**प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी**

17. नैतिकता और खेल भागीदारी 119
**ममता**

18. बलौदाबाजार जिले के कसडोल तहसील में पर्यटन की संभावना 125
**प्रशांत कुमार गौरहा**

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# समाजिक-राजनीतिक चेतना के विकास में पवाई रूल्स विरोधी आंदोलन (बघेलखंड के विशेष संदर्भ में)

•अखिलेश शुक्ल

**सारांश- पवाई रूल्स द्वारा पवाईदारों के परम्परागत अधिकारों को प्रतिबंधित किया गया था। उनसे पवाईदारों की इस धारणा पर आघात हुआ था कि पवाइयां उनकी पैतृक सम्पत्ति हैं और उनके उपभोग का उन्हें न्यायोचित अधिकार है। तत्कालीन सामाजिक और धार्मिक प्रथाओं के अनुसार किसी निःसन्तान व्यक्ति को अपना इच्छित वारिस (उत्तराधिकारी) घोषित करने का अधिकार था किन्तु इलाकेदारों और पवाईदारों के इस अधिकार को भी पवाई रूल्स द्वारा प्रतिबन्धित किया जा रहा था। 1930 के दशक तक राज्य में शिक्षित व्यक्तियों की संख्या में काफी वृद्धि हो चुकी थी। इसमें सन्देह नहीं कि अब भी जनसंख्या के अनुपात से पड़ोसी ब्रिटिश भारत के प्रान्त यू.पी. की तुलना में यहां शिक्षित व्यक्तियों की संख्या बहुत कम थी। सम्पन्न घरानों के कुछ व्यक्ति उच्च शिक्षा प्राप्त कर चुके थे और ब्रिटिश भारत में चल रहे राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रभावित थे। उनमें से कुछ राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग भी ले रहे थे। उन्हीं के प्रयासों से रीवा में कुछ राजनैतिक संस्थाओं की स्थापना भी हो चुकी थी और यहां के प्रमुख नेताओं का सम्पर्क रीवा से 80 मील दूर इलाहाबाद में कांग्रेस कार्यकर्ताओं से था। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक था कि रीवा राज्य में राजा की निरंकुश सत्ता का विरोध हो। 14 अगस्त 1930 को प्रस्तुत किये गये आवेदन पत्र की कुछ मांगें यद्यपि इलाकेदारों और पवाईदारों के हितों की रक्षा से सम्बन्धित थीं, किन्तु अधिकांश मांगे ऐसी थीं जिन्हें लोकतांत्रिक कहा जा सकता है। राज्य में शिक्षण संस्थाओं और सुविधाओं का विस्तार किया जाय, भाषण और संगठन की स्वतंत्रता प्रदान की जाय; नगरपालिकाएं निर्वाचित हों; और शासन एक निर्वाचित कौंसिल की सहायता एवं परामर्श से चलाया जाय, आदि मांगें यह सिद्ध करती है कि यहां के लोगों में राजनैतिक जागरूकता आ रही थी। यह भी सत्य है कि यद्यपि 1930 के इस आन्दोलन में मुख्य भाग यहां के पवाईदारों और इलाकेदारों ने लिया किन्तु यह इस क्षेत्र का प्रथम जन आन्दोलन था।**

**मुख्य शब्द - किसान, रियासती काल, कोठार, पवाई, काश्तकार, बन्दोवस्त**

मध्यप्रदेश के रीवा, सतना, सीधी और शहडोल जिलों के सम्पूर्ण क्षेत्र को साधारण बोलचाल में बघेलखण्ड कहते हैं। इसके अन्तर्गत ब्रिटिशकालीन भारत की

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

मध्यभारत एजेंसी को (Central India Agency) रीवा, मैहर, नागौद, कोठी, सोहावल, बरौंधा, जसो व चित्रकूट की चोबियाना जागीर का रियासती क्षेत्र आता है। बघेलखण्ड की मुख्य रियासत रीवा के नरेश सोलंकी अर्थात् चालुक्य क्षत्रिय जाति की बाघेल शाखा के राजपूत थे। इस क्षेत्र में आने से पूर्व इन राजपूतों ने दक्षिण भारत और गुजरात के इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। गुजरात के ही एक सोलंकी जिनका नाम बाघदेव (या व्याघ्रदेव) था, ने इस क्षेत्र को जीतकर यहां अपना राज्य स्थापित किया। उनके नाम से उनके वंशज बघेल कहलाये और इस प्रकार इस क्षेत्र का नाम बघेलखण्ड पड़ा। मुसलमानों के आने से पहले यह प्रान्त महाकौशल, चेदि देश या दाहाल देश आदि नामों से सम्बोधित किया जाता था। मुसलमानी ऐतिहासिक ग्रन्थों में इस क्षेत्र को भट देश या भट-गोड़ देश कहा गया है। अकबर के शासनकाल के पूर्व यह क्षेत्र भट-गोड़ देश का ही अंग था। अकबर के समय में इस क्षेत्र का कुछ भाग भट-गोड़ देश में और कुछ भाग इलाहाबाद के कालिंजर क्षेत्र के अन्तर्गत कर दिया गया था। ब्रिटिश सरकार के पत्रों में 1853 के बाद से इस नाम का उल्लेख बराबर मिलता है। 1862 में रीवा में ब्रिटिश सरकार की एक एजेंसी खोली गई थी, जिसे कुछ समय बाद तोड़ दिया गया। 1870 में सेन्ट्रल इण्डिया एजेंसी के अन्तर्गत बघेलखण्ड पोलिटिकल एजेंसी की स्थापना हुई और 1871 में कर्नल सर एडवर्ड रिडले कार्लबोर्न ब्रोडफोर्ड (बैरोनेट) इसके प्रथम पोलिटिकल एजेन्ट नियुक्त किये गये। बघेलखण्ड एजेंसी का मुख्यालय सतना था। इस तरह यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि राजनैतिक स्तर पर इस क्षेत्र के लिये बघेलखण्ड शब्द का प्रयोग कम से कम 1870 से तो अवश्य हुआ है।

**पवाई रूल्स विरोधी आन्दोलन-** इस क्षेत्र के अधिकांश निवासी किसान हैं। रियासती काल में कुल जमीन "कोठार" और "पवाई" क्षेत्रों में बटी थी। कोठार क्षेत्र की जमीन में काश्तकारों का सीधा सम्बन्ध दरबार से था और काश्तकार जमीन का लगान सीधे दरबार को देते थे। बन्दोवस्त के बाद उन्हें अपनी जमीन के पट्टे भी मिल गये थे जिन पर उनका स्थायी हक़ था। किन्तु कोठार की जमीन राज्य की कुल जमीन की 40 प्रतिशत ही थी। बाकी 60 प्रतिशत जमीन पवाई क्षेत्र में आती थी।[1] इस पर इलाकेदारों या पवाईदारों का अधिकार था। पवाई क्षेत्र में काश्तकारों का प्रत्यक्ष सम्बन्ध दरबार से न होकर अपने इलाकेदार या पवाईदार से था। इस क्षेत्र में भी पट्टेदार काश्तकार थे, किन्तु उन्हें पट्टे अपने इलाकेदार या पवाईदार से ही प्राप्त होते थे जिन्हें इन पट्टों को कभी भी निरस्त करने का हक़ था। कोई आश्चर्य नहीं कि पवाई क्षेत्र में काश्तकारों की हालत बहुत ही खराब थी।

यहां यह विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि रीवा राज्य के इलाकेदारों और पवाईदारों में तथा देश के अन्य क्षेत्रों के जमीनदारों में मौलिक अन्तर था। यहां के कुछ इलाकेदार और पवाईदार ऐसे थे, जिनका यहां पर बघेलों का राज्य स्थापित होने के पूर्व से ही अस्तित्व था। बघेलों का राज्य स्थापित हो जाने के बाद यद्यपि ये सभी उनके अधीन हो गये तथापि उनका एक निजी अस्तित्व बना रहा। तत्कालीन सामन्ती व्यवस्था के अन्तर्गत उन्हें एक निश्चित सेना रखनी पड़ती थी जिसे आवश्यकता पड़ने पर वे राज्य की रक्षा के लिये भेजते थे। अपने इलाके के अन्दर उन्हें प्रशासन, न्याय, दण्ड आदि के अधिकार थे।

रीवा दरबार को उन्हें प्रतिवर्ष एक निश्चित धनराशि जिसे "मामला" कहा जाता था, देनी पड़ती थी। दूसरे प्रकार के इलाकेदार वे थे जो कि महाराज रीवा के भाई और सम्बन्धी थे। उन्हें इलाका एक प्रकार से उनके हिस्से के रूप में मिला था। उन्हें भी इलाके के अन्दर सभी प्रकार के प्रशासनिक अधिकार प्राप्त थे। दरबार को इन्हें भी प्रतिवर्ष मामला[2] देना पड़ता था। तीसरे प्रकार के इलाकेदार और पवाईदार वे थे जिन्हें इलाका उनके पूर्वजों या स्वयं उनके द्वारा राज्य के हित में लड़े गये किसी युद्ध में दिखाई गई वीरता के कारण दिया गया था। इस प्रकार की पवाई "वृत" और "मुड़वार" कहलाती थी। चौथे प्रकार के इलाकेदार और पवाईदार वे थे जिन्हें पवाइयां पुरस्कार के रूप में या धार्मिक कारणों से दी गई थीं। इस प्रकार की पवाई "जागीर" या "पेपखार" कहलाती थीं। इनके अलावा कुछ पवाइयां "देवार्थ" भी दी गई थीं। देवार्थ पवाइयों की जमीनें किसी मन्दिर से लगी होती थीं। इन सभी प्रकार के इलाकेदारों और पवाईदारों को राज्य में एक विशिष्ट भूमिका थी। इस वर्ग के लोगों को "सरदार" कहा जाता था। यही रियासती काल में यहां का प्रमुख वर्ग था।[3] रीवा राज्य में सुपरिंटेण्डेंटी काल (1875 से 1895) से इन वर्ग के प्रशासनिक अधिकारों में कमी की जाने लगी थी। इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ इलाकेदार ओर पवाईदार अपने वर्ग के हितों की रक्षा हेतु व्यक्तिगत विरोध के स्थान पर संगठित विरोध की बात सोचने लगे। उन्होंने अपने इस विचार को कार्यक्रम में परिणित करने के लिये 1917 में एक "सरदार समिति" का गठन किया। इस समिति ने अपना काम आरम्भ ही किया था कि 1918 में राज्य में पुनः ब्रिटिश सरकार का प्रत्यक्ष शासन स्थापित हो गया।4 इस काल (1918-22) में इलाकेदारों और पवाईदारों के अधिकारों पर कुछ और प्रतिबंध लगाये गये। 1921 में इस वर्ग के कुर्की सम्बन्धी अधिकार में कमी की गई।[5]

31 अक्टूबर 1922 को महाराज गुलाब सिंह को राज्याधिकार प्राप्त हुआ। राज्य का सरदार वर्ग आशा कर रहा था कि महाराज गुलाबसिंह उनके हितों की रक्षा करेंगे[6] किन्तु महाराज गुलाबसिंह ने अपने शासनकाल के प्रारम्भिक वर्षों में ही कुछ ऐसे आदेश (रुक्कार) निकाले जिनसे इस वर्ग को दुख हुआ। ऐसे कुछ आदेशों का विवरण नीचे दिया जा रहा है जो कि इलाकेदारों और पवाईदारों की दृष्टि में उनकी प्रतिष्ठा के विरुद्ध थे-

1. राज्य के सभी जंगलों में दरबार का हक होगा, यह तो पहले ही तय हो चुका था, परन्तु इन जंगलों से इलाकेदार और पवाईदार अपनी आवश्यकतानुसार लकड़ी निःशुल्क प्राप्त करते थे। रीवा दरबार ने अपने आदेश क्रमांक 352-सी दिनांक 12-6-1924 द्वारा निर्देश दिया कि इलाकेदारों को प्रचलित कर का चौथा भाग देकर अपनी आवश्यकतानुसार इमारती एवं जलाऊ लकड़ी प्राप्त करनी होगी। विशेष प्रकरणों पर ही दरबार द्वारा ठाकुरों को रियायत दी जायगी।[7]
2. इधर कुछ वर्षों से (महाराज रघुराज सिंह के शासनकाल से) कुछ इलाकेदार और पवाईदार दरबार के समय उपस्थित नहीं होते थे। महाराज गुलाबसिंह ने इसे पसन्द नहीं किया। उन्होंने अपने आदेश (रुक्कार) दिनांक 25-6-1924 द्वारा राज्य के सभी सरदारों को भविष्य में दरबार में शरीक होने का निर्देश दिया। आदेश में स्पष्ट निर्देश दिया गया कि यदि भविष्य में कोई सरदार बिना किसी खास कारण के दरबार में गैरहाजिर पाये जावेंगे तो उनके खिलाफ कार्रवाई होगी।[8]

3. 1923 में (तीसरे) सर्वे सेटलमेण्ट का कार्य प्रारम्भ हुआ। इस सर्वे सेटलमेण्ट का उद्देय यह था कि राज्य की कोई जमीन बिना लगान के न बचे तथा मौजूदा लगान में उचित वृद्धि, जो कि वर्तमान लगान की चार या पांच गुनी तक हो, की जाय।[9]
4. महाराज गुलाबसिंह ने "पवाई रूल्स" के नाम से पवाइयों के सम्बन्ध में नियम बनवाये। वस्तुतः इसके पूर्व पवाइयों के सम्बन्ध में कोई भी विस्तृत कानून लिखित रूप में नहीं बना था। 1924 में इस कानून का प्रारूप तैयार हुआ।[10] महाराज रीवा ने इसे गोपनीय रखा। चूंकि उन्हें योरोप यात्रा में जाना था इसलिये इस पर उन्होंने तत्काल कोई कार्रवाई नहीं की।
5. 1927 में महाराज गुलाबसिंह अपनी प्रथम योरोप यात्रा में गये। इस यात्रा के दौरान उन्होंने योरोपीय महाद्वीप के अनेक देशों की यात्रा की। कहा जाता है कि महाराज गुलाबसिंह के ऊपर इंगलैण्ड के तत्कालीन उस नियम का काफी प्रभाव पड़ा जिसके अन्तर्गत वहां पर जागीरदारों के निःसन्तान होने पर उनकी मृत्यु के पश्चात उनकी जागीर सम्राट की हो जाती थी।[11] कुछ भी हो, महाराज गुलाबसिंह ने इस यात्रा से लौटकर पवाई रूल्स के प्रारूप में इसी प्रकार का प्रावधान कराया।[12] यहां यह उल्लेखनीय है कि पवाइयों के अन्तर्गत लावारिस जायजाद के सम्बन्ध में दरबार के हक में 1907 व 1913 में ही आदेश पारित हो चुके थे।[13]

प्रस्तावित पवाई रूल्स का राज्य के प्रमुख वर्ग द्वारा कड़ा विरोध किया गया। वास्तव में पवाई रूल्स के द्वारा इस वर्ग के कुछ महत्वपूर्ण अधिकारों पर आघात किया गया था। पवाई रूल्स के जिन प्रावधानों से यह वर्ग विशेष रूप से असंतुष्ट था उनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है-

1. यहां के इलाकेदार और पवाईदार इलाके और पवाई में अपना उसी प्रकार का अधिकार मानते थे जिस प्रकार राज्य में दरबार का था। पवाई रूल्स के अन्तर्गत उनकी इस मान्यता को समाप्त किया गया एवं यह प्रावधान किया गया कि "पवाई एक देनी है" और पवाइयां महाराज अच्छी सेवा के एवज में और विशेष कारणों से देते हैं। दरबार को पवाई को कायम रखने या जप्त करने, उसकी सीमा में कमी या वृद्धि करने एवं देने की शर्तों में परिवर्तन करने का अधिकार है।[14]
2. यदि किसी इलाकेदार या पवाईदार के कोई वारिस न हो तो ऐसी स्थिति में पवाई की जमीन को या सम्पूर्ण पवाई को गहन रखने, बेंच देने, इनाम में देने या किसी के नाम वसीयत करने का अधिकार इलाकेदार या पवाईदार को था। पवाई रूल्स के द्वारा उनके ऊपर यह प्रतिबन्ध लगाया गया कि इलाकेदार या पवाईदार को ऐसा करने के पूर्व दरबार की अनुमति प्राप्त करनी होगी।[15]
3. रीवा राज्य के कुछ इलाकेदारों और पवाईदारों के पास उनके इलाके एवं पवाइयों के सम्बन्ध में दरबार द्वारा प्रदत्त लिखित पाट, सनदें या हुकुम्[16] नहीं थे। उनके लिये यह कहा गया कि वे 6 मास के अन्दर दरबार से सनद या हुकुम प्राप्त कर

लें अन्यथा ऐसी पवाइयां मौजूदा काबिज के मरने के बाद जप्त[17] कर ली जायगी।[18]

4. जो पवाई इनाम के रूप में दी गई हैं उस पर पाने वाले को पुस्तैनी हक तब तक न होगा, जब तक कि सनद में स्पष्ट रूप से ऐसा न लिख दिया गया हो।[19]
5. इलाकेदारों और पवाईदारों के पास जो पाट, सनद या राजाज्ञा उनकी पवाई के सम्बन्ध में हों वे जाली नहीं होने चाहिये। विवाद की स्थिति में उन्हें सच्चा साबित करने का दायित्व सम्बन्धी इलाकेदार या पवाईदार का होगा। ऐसी स्थिति में यदि वह पाट, सनद या राजाज्ञा जाली सिद्ध हुई तो पवाई जप्त हो जावेगी।[20]
6. वे पवाइयां, जो 1-10-1854 के पूर्व किसी पर दया करके दरबार द्वारा दी गई थीं, मौजूदा काबिज के जीवन काल तक ही कायम रहेंगी। उसके पश्चात उन्हें कायम रखना दरबार की इच्छा पर निर्भर रहेगा।[21]
7. इसी तरह 1-10-1854 से 1-4-1875 के बीच जो पवाइयां किसी पर दया करके दी गई थीं उन पर मौजूदा काबिज का हक 55/4522 का रहेगा। उसके मरने के पश्चात् वे पवाइयां दरबार की इच्छानुसार या तो उसके वारिस के पास कायम रखी जायगीं और या जप्त कर ली जायगीं।[23]
8. महाराज रघुराज सिंह के द्वारा 1-4-1875 के पश्चात् जो पवाइयां दी गई थीं उन्हें यदि मौजूदा दरबार द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है तो वे मान्य नहीं होंगी।[24]
9. सभी पवाईदारों को उनकी पवाइयों के पाट, सनद या राजाज्ञा में लिखित करों के अतिरिक्त समय-समय पर दरबार द्वारा लगाये जाने वाले अतिरिक्त लगान, सायरकर (Cesses) और दस्तूरी नजराने,[25] जैसे नजर-न्यौछावर भी देने पड़ेंगे।[26]
10. वे पवाइयां, गांव या जमीनें जो किसी मन्दिर या मस्जिद के लिये दी गई हैं किसी भी समय जप्त की जा सकती हैं और उनके स्थान पर उन्हें नकद रुपया उस समय तक दिया जा सकता है जब तक कि मूर्तियां, मन्दिर और मस्जिद मौजूद हैं और उनकी हिफाजत ठीक ढंग से होती है। महन्त व इमाम दरबार की इच्छानुसार ही नियुक्त किये जायेंगे या निकाले जायेंगे।[27]
11. जो जनाना जागीरें राज खानदान की किसी लड़की को दी गई है, वे उस लड़की के पश्चात दरबार द्वारा जप्त कर ली जायंगीं।[28]
12. पवाइयों के पाट, सनद या हुकुम में जितनी जमीन लिखी गई है, यदि उससे ज्यादा पाई जायगी तो वह राज्य (कोठार) में शामिल कर ली जायगी।[29]
13. इन नियमों में यह भी प्रावधान किया गया कि जब तक पाट, सनद या हुकुम में-(1) नसलन ब़ाद नसलन; (2) वंश परम्परा; (3) पुश्त दर पुश्त; (4) यावत चन्द्र दिवाकर (जब तक चन्द्रमा और सूर्य रहेंगे) शब्द न होंगे तब तक कोई पवाई पीढ़ी दर पीढ़ी की नहीं समझी जायगी।[30]
14. इसी तरह इन नियमों में यह भी स्पष्ट किया गया कि, पुस्त दर पुस्त चलने वाली पवाई का काबिज यदि बिना सन्तान मर जाय तो पवाई जप्त कर ली जायगी। नियमों में यह भी कहा गया कि काबिज के खानदान में यदि कोई स्त्री हो तो

उसके लिये दरबार द्वारा उचित गुजारे की व्यवस्था की जायगी।[31]

15. पवाई रूल्स की अन्तिम धारा 46 में यह कहा गया कि यदि सेवा नहीं दी जाती या पाट, सनद या हुकुम की शर्तें तोड़ी जाती हैं तो जागीर, पवाइयां किसी समय भी जप्त की जा सकती हैं।

इन पवाई नियमों के अतिरिक्त महाराज रीवा ने दिनांक 29 मार्च 1928 को जारी किये गये एक रूक्कार द्वारा उन इलाकेदारों और पवाईदारों को दण्डित करने की व्यवस्था की जो दशहरा या इसी तरह विशेष अवसरों पर होने वाले दरबार में अनुपस्थित होते थे। इस राजाज्ञा (रूक्कार) में यह प्रावधान किया गया कि ऐसी स्थिति में इलाकेदारों और पवाईदारों को मिलने वाली ताजीम, दरबार में बुलाये जाने का हक अथवा इलाका या पवाई जप्त की जा सकती है। रूक्कार में यह भी कहा गया कि इलाकेदारों और पवाईदारों द्वारा नियत संख्या में अपने साथ प्यादे (सिपाही), घोड़े और हाथी न लाने पर उनसे क्रमशः 24 रुपया, 50 रुपया एवं 360 रुपया प्रति प्यादा, घोड़ा और हाथी आर्थिक दण्ड वसूल किया जायगा।[32]

स्पष्ट है कि इन नियमों का सीधा प्रभाव राज्य के प्रमुख वर्ग पर पड़ता था। इससे राज्य का पवाईदार वर्ग सोचने लगा कि रीवा दरबार उनके पैतृक अधिकारों को छीनना चाहते हैं। राज्य के प्रमुख वर्ग ने इन कानूनों को "काला कानून" कहकर सम्बोधित किया। राज्य के इलाकेदारों और पवाईदारों का नेतृत्व बैकुण्ठपुर के इलाकेदार हारौल नर्मदा प्रसाद सिंह कर रहे थे। कहा जाता है कि वे इस कानून का विरोध प्रकट करने के लिये महाराज गुलाबसिंह से मिले और उन्हें महाराज रीवा ने इस कानून को वापस लेने का मौखिक आश्वासन भी दिया[33] परन्तु पवाई रूल्स वापस नहीं लिये गये और उन्हीं के अनुसार कुछ पवाइयों को रीवा दरबार द्वारा जप्त किया गया।[34] हारौल नर्मदा प्रसाद सिंह पवाई रूल्स के विरोध में तुरन्त ही आन्दोलनात्मक रुख अपनाना चाहते थे परन्तु उस समय अन्य इलाकेदारों और पवाईदारों ने खुले रूप में उनका साथ नहीं दिया।[35] लाचार होकर उन्हें राज्य छोड़कर प्रयाग (ब्रिटिश भारत के संयुक्त प्रान्त) जाना पड़ा।[36] प्रयाग में रहकर हारौल नर्मदा प्रसाद सिंह पवाई रूल्स के विरोध में तत्कालीन प्रकाशित होने वाले समाचार पत्रों में अपने विचार प्रकट करते रहे।

1929-30 तक यहां के कुछ मात्र उच्च शिक्षा प्राप्त कर रीवा आ गये थे। उनमें कप्तान अवधेश प्रताप सिंह तथा लाल यादवेन्द्र सिंह के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। ये लोग भी या तो स्वयं पवाईदार थे और या पवाईदारों से सम्बन्धित थे। इन सबने मिलकर महाराज रीवा की इन कार्यवाहियों का संगठित रूप से विरोध करने हेतु राव साहब चुरहट लाल शिव बहादुर सिंह को अपना अध्यक्ष बनाया।[37] यह तय किया गया कि रीवा दरबार के समक्ष अपनी मागों के सम्बन्ध में एक आवेदन-पत्र प्रस्तुत किया जाय।

14 अगस्त 1930 को राज्य के कुछ इलाकेदारों और पवाईदारों ने एक आवेदन पत्र महाराज रीवा के समक्ष प्रस्तुत किया। उनमें लाल शिव बहादुर सिंह, राव साहब चुरहट, लाल राजेन्द्र बहादुर सिंह, ठाकुर साहब सोहागपुर, लाल उपेन्द्र रमण सिंह, ठाकुर साहब चँदिया, लाल वीर बहादुर सिंह, राजा साहब विछरहटा, लाल गोपालशरण सिंह, ठाकुर साहब नईगढ़ी, हारौल लाल पद्‌भनाम सिंह, ठाकुर साहब बैकुण्ठपुर, कप्तान

लाल अवधेश प्रताप सिंह, कुंवर साहब रामपुर, तथा सरदार अमरजीत सिंह, ठाकुर साहब डीह (त्योंथर) के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। 1930 के आन्दोलन के एक नेता के अनुसार इस आवेदन-पत्र पर यहां के सभी वर्गों एवं जातियों के लगभग 500 प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने हस्ताक्षर किये थे।[38] आवेदन पत्र की मुख्य मागें निम्न थीं-

1. इलाकेदार, पवाईदार और जमींदार वर्ग की शिकायतों को दूर करने हेतु एवं रीवा दरबार के साथ उनके सम्बन्ध निश्चित करने के लिये प्रतिनिधि सभा बैठाई जाय;
2. ब्रिटिश भारत में लागू "हिन्दू ला" और "मुस्लिम ला" को लागू किया जाय;
3. परमट टैक्स कम किया जाय;
4. जंगल कानून में सुधार किया जाकर निस्तार बहाल किया जाय;
5. नगरपालिकाएं निर्वाचित हों और उन्हें कुछ वास्तविक अधिकार दिये जांय;
6. राज्य में शिक्षा की उन्नति की जाय;
7. 1913 से जब तक जो जायजादें जप्त की गई हैं उन पर फिर से विचार किया जाय;
8. रीवा राज्य में यहीं के नागरिकों को राज्य सेवा में रखा जाय;
9. देजावन, नजराना आदि कर हटा लिये जांय;
10. भाषण और संगठन की स्वतंत्रता प्रदान की जाय; और
11. प्रजा द्वारा निर्वाचित एक कौंसिल का निर्माण किया जाय जिसकी सहायता व सलाह से राज्य का कार्य संचालित किया जाय।

रीवा दरबार द्वारा तत्काल इन मार्गों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। अतः असंतोष बढ़ता गया और इलाकेदारों तथा पवाईदारों की उक्त मागों के समर्थन में राज्य के कुछ प्रमुख अधिकारियों ने त्यागपत्र दे दिया।[39] इसी बीच महाराज रीवा प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने इंगलैण्ड चले गये। अतः उनकी अनुपस्थिति में आन्दोलन चलाना उचित नहीं समझा गया। इस तरह यह आन्दोलन अधिक जोर न पकड़ सका।[40] परन्तु राज्य के प्रमुख वर्ग में असन्तोष बना रहा। परिणाम यह हुआ कि इस वर्ग के कुछ लोग ऐसे मंच की तलाश करने लगे जिसके माध्यम से वे राज्य में रहते हुए अपने हितों की रक्षा के साथ-साथ राजा की निरंकुश सत्ता का विरोध भी कर सके।

**निष्कर्ष-** पवाई रूल्स और उन पर पवाईदारों द्वारा की गई मांगों का अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि पवाई रूल्स द्वारा पवाईदारों के परम्परागत अधिकारों को प्रतिबंधित किया गया था। उनसे पवाईदारों की इस धारणा पर आघात हुआ था कि पवाइयां उनकी पैतृक सम्पत्ति हैं और उनके उपभोग का उन्हें न्यायोचित अधिकार है। तत्कालीन सामाजिक और धार्मिक प्रथाओं के अनुसार किसी निःसन्तान व्यक्ति को अपना इच्छित वारिस (उत्तराधिकारी) घोषित करने का अधिकार था किन्तु इलाकेदारों और पवाईदारों के इस अधिकार को भी पवाई रूल्स द्वारा प्रतिबन्धित किया जा रहा था। 1930 के दशक तक राज्य में शिक्षित व्यक्तियों की संख्या में काफी वृद्धि हो चुकी थी। इसमें सन्देह नहीं कि अब भी जनसंख्या के अनुपात से पड़ोसी ब्रिटिश भारत के प्रान्त यू.पी. की तुलना में यहां शिक्षित व्यक्तियों की संख्या बहुत कम थी। सम्पन्न घरानों के कुछ व्यक्ति उच्च शिक्षा प्राप्त कर चुके थे और ब्रिटिश भारत में चल रहे राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रभावित थे।

उनमें से कुछ राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग भी ले रहे थे। उन्हीं के प्रयासों से रीवा में कुछ राजनैतिक संस्थाओं की स्थापना भी हो चुकी थी और यहां के प्रमुख नेताओं का सम्पर्क रीवा से 80 मील दूर इलाहाबाद में कांग्रेस कार्यकर्ताओं से था। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक था कि रीवा राज्य में राजा की निरंकुश सत्ता का विरोध हो। 14 अगस्त 1930 को प्रस्तुत किये गये आवेदन पत्र की कुछ मागें यद्यपि इलाकेदारों और पवाईदारों के हितों की रक्षा से सम्बन्धित थीं, किन्तु अधिकांश मांगे ऐसी थीं जिन्हें लोकतांत्रिक कहा जा सकता है। राज्य में शिक्षण संस्थाओं और सुविधाओं का विस्तार किया जाय, भाषण और संगठन की स्वतंत्रता प्रदान की जाय; नगरपालिकाएं निर्वाचित हों; और शासन एक निर्वाचित कौंसिल की सहायता एवं परामर्श से चलाया जाय, आदि मागें यह सिद्ध करती हैं कि यहां के लोगों में राजनैतिक जागरूकता आ रही थी। यह भी सत्य है कि यद्यपि 1930 के इस आन्दोलन में मुख्य भाग यहां के पवाईदारों और इलाकेदारों ने लिया किन्तु यह इस क्षेत्र का प्रथम जन आन्दोलन था।[41]

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


1. गुरू रामप्यारे अग्निहोत्री, रीवा राज्य का इतिहास (म०प्र० शासन साहित्य परिषद, 1972), पृष्ठ 101 तथा रीवा राज्य दर्पण, पृष्ठ 253
2. मामला एक प्रकार का वार्षिक कर था।
3. इलाकेदारों और पवाईदारों का यह वर्गीकरण रीवा राज्य दर्पण, पृष्ठ 260 से 262 तथा प्रकाश, "रीवा", (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1, 1931) के पृष्ठ 19 से 21 में दिये गये विवरण पर आधारित है।
4. 1918 में तत्कालीन महाराज वेंकटरमण सिंह की मृत्यु हो गई। उस समय युवराज गुलाबसिंह अल्पवयस्क थे। अत: 1918 से 1922 तक रीवा राज्य में रीजेन्सी प्रशासन रहा।
5. रीजेंट रीवा स्टेट के आदेश क्रमांक 723 दिनांक 21-7-1921 द्वारा कुर्की के समय क्रिमिनल प्रासीक्यूसन की कार्रवाई को निरस्त किया गया। पवाईदारों और इलाकेदारों को निर्देश दिया गया कि वे रैयत के ऊपर क्रिमिनल फोर्स का उपयोग कुर्की के वक्त न करें। Quoted from Private pepers of Pt. Narsingh Pd. Shukla. Vol.I, page 30-31.
6. प्रकाश, रीवा, (देशी ग्रन्थमाला-1, 1931), पृष्ठ 77.
7. Private Papers of Pt. Narsingh Prasad Shukla, Vol.I, Page 40.
8. Ibid, Page 41-42.
9. गुरू रामप्यारे अग्निहोत्री, रीवा राज्य का इतिहास, (म०प्र० शासन साहित्य परिषद भोपाल, 1972), पृष्ठ 168
10. नर्मदा प्रसाद सिंह, रीवा राज्य का पवाई रूल्स नामी काला कानून (प्रकाशक-कृष्णदास अवस्थी, 140 मुट्ठीगंज, प्रयाग), Year of publication not given, Page 1.
11. राव साहब रणबहादुर सिंह तत्कालीन संसद सदस्य से प्राप्त जानकारी
12. पवाई रूल्स की धारा 33 में प्रावधान किया गया, पुस्त दर पुस्त चलने वाली पवाई का काबिज यदि बिना सन्तान मर जाय तो पवाई जप्त कर ली जायगी। देखिये-रीवा राज्य पवाई रूल्स (दरबार आदेश 471, दिनांक 13-3-34 द्वारा स्वीकृत)।
13. Private papers of Pt. Narsingh Pd. Shukla, Vol.I, page 2 & 10.11 तथा प्रकाश, रीवा, (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1), पृष्ठ 122.
14. पवाई रूल्स धारा 4, 14
15. पवाई रूल्स धारा 24

16. हुकुम का अर्थ राजाज्ञा है।
17. जप्ती का अर्थ पवाई की जमा (Land Revenue) को राज्य मालगुजारी में मिला लेना था।
18. पवाई रूल्स धारा 6,7
19. पवाई रूल्स धारा, 11(6)
20. पवाई रूल्स धारा, 16
21. पवाई रूल्स धारा 17(अ)
22. इसका अर्थ यह था कि पवाई की आय का 55 भाग राज्य का और शेष 45 भाग सम्बन्धी काबिज का रहेगा।
23. पवाई रूल्स धारा 17 (स)
24. पवाई रूल्स धारा 17 (द)
25. दस्तूरी नजराने-उस समय प्रचलित रीति रिवाजों के अनुसार पवाईदारों को उनकी हैसियत के अनुसार सामयिक नेग आदि देने पड़ते थे। ''नजर-न्यौछावर'' एक प्रकार का सामयिक नेग था। महाराज रीवा से मिलने पर (विशेष अवसरों पर) नजर-न्यौछावर करनी पड़ती थी।
26. पवाई रूल्स धारा 18
27. पवाई रूल्स धारा 19
28. पवाई रूल्स धारा 21
29. पवाई रूल्स धारा 25(अ)
30. पवाई रूल्स धारा 31(अ)(ब)
31. पवाई रूल्स धारा 33(अ)(ब)
32. प्रकाश, रीवा, (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1, मार्च 1931), पृष्ठ 124-128
33. प्रकाश, रीवा, (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1 मार्च 1931), पृष्ठ 22
34. वही, पृष्ठ 77
35. वही, पृष्ठ 78 (1926 में सिंगरौली के वेणुवंशी राजा की रानी श्री नीवस्न कुमारि का राज्य रीवा राज्य में शामिल कर लिया गया था। महारानी सिंगरौली को 1500) रु. वार्षिक गुजारा रीवा दरबार ने देना स्वीकार किया था। 1933 में सिंगरौली नाम की तहसील स्थापित की गई।) (इसी तरह, विछरहटा के सेंगर राजा नि:सन्तान स्वर्गवासी हुए। उनका इलाका राज्य में शामिल किया जाकर उनके अवशिष्ट कुटुम्बियों को बंधी रकम गुजारे के लिए दी जाने लगी थी।-गुरू रामप्यारे अग्निहोत्री "रीवा राज्य का इतिहास" (म.प्र. शासन साहित्य परिषद, 1972), पृष्ठ 108 व 109 से उद्धृत।
36. वही, पृष्ठ 77
37. प्रकाश, रीवा (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1, मार्च 1931), पृष्ठ 78-80
38. वही, पृष्ठ 182-184
39. प्रकाश, रीवा, (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1, मार्च 1931), पृष्ठ 83-85
40. प्रकाश, रीवा, (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1, 1931), पृष्ठ 85
41. प्रकाश,रीवा, (देशी राज्य ग्रन्थमाला-1, मार्च 1931), पृष्ठ 80

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# ग्राम पंचायतों में दलित महिलाओं की कार्य स्थिति का समाजशास्त्रीय अध्ययन (खोराबार विकासखण्ड के सन्दर्भ में)

• अनीता यादव

•• राकेश प्रताप सिंह

**सारांश- भारतीय ग्रामीण संस्थाओं में ग्राम पंचायत एक महत्वपूर्ण राजनैतिक संस्था है। प्राचीन काल से ही ग्राम पंचायतें ग्रामीण प्रशासन का महत्वपूर्ण अंग रही हैं। गांव पंचायतों की कार्य-प्रणाली के आधार पर ही भारतीय ग्रामों को लघु गणतन्त्रों की संज्ञा दी गयी थी। महात्मा गांधी अपने स्वप्नों के भारत में आदर्श गांव पंचायतों की स्थापना करना चाहते थे। ग्रामीण पुनर्निर्माण में वे ग्राम पंचायतों को मुख्य कड़ी मानते थे। भारत पंचायती राज प्रणाली दुनिया में जमीनी स्तर पर लोकतंत्र का अनोखा और एकदम नायाब उदाहरण है। इसमें निर्णय लेने की प्रक्रिया का विकेन्द्रीकरण होता है और यह ग्रामीण समाज को अपनी जरूरतों और विकास संबंधी प्राथमिकताओं का स्वयं निर्धारण करने का अवसर प्रदान करती है। हमारी ग्रामीण आबादी का करीब आधा हिस्सा महिलाओं का है। ये लोग पंचायती राज संस्थाओं का महत्वपूर्ण घटक हैं। लेकिन सच तो यह है कि 33 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था होने के बावजूद पंचायतों में उनकी वास्तविक भागीदारी एक ऐसा लक्ष्य बना हुआ है जो पूरा नहीं हो पाया है। इस विसंगति को ध्यान में रखते हुए सरकार ने महिला सरपंचों को प्रशिक्षण देने का राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम प्रारंभ किया है ताकि वे अपने गांवों में नेतृत्व की भूमिका सही तरीके से निभा सकें। ग्रामीण प्रशासन और राजनैतिक जीवन को समझने के लिए पंचायतों का अध्ययन आवश्यक है। ग्रामीण विकास तीव्रगति से हो रहा है जैसे-जैसे सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक स्तर पर व वर्ग के आधार पर निर्मित हो रहा है। इससे यह प्रतीत होता है कि महात्मा गांधी द्वारा देखा गया सपना कि भारत की आत्मा ग्रामों में निवास करती है और हर उस आखिरी व्यक्ति को लाभ मिले जो विकास की योजनाओं से वंचित है जिसके केन्द्र में नारी उत्थान की अहम भूमिका होनी चाहिए।**

**मुख्य शब्द - दलित, ग्राम पंचायत, ग्रामीण प्रशासन, ग्रामीण पुनर्निर्माण, लोकतंत्र**

**ऐतिहासिक सन्दर्भ-** आदि काल से ही ग्राम पंचायतें भारत में न केवल प्रशासन की,

• शोध अध्येता, समाजशास्त्र विभाग, बापू पी.जी. कॉलेज, पीपीगंज, गोरखपुर

•• एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, बापू पी.जी. कॉलेज, पीपीगंज, गोरखपुर

वरन् ग्रामीण अर्थव्यवस्था की भी आधार रही हैं। विभिन्न युगों में शासन बदलते रहे, उत्थान और पतन आये, सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन हुए, किन्तु ग्रामीण पंचायतों का अस्तित्व हर युग में किसी न किसी रूप में बना रहा। देश में सदा ही पंच को परमेश्वर कहकर पंच और पंचायत के महत्व को प्रकट किया जाता रहा है। के. एम. पणिक्कर ग्राम पंचायतों के महत्व को प्रकट करते। हुए लिखते हैं, "प्राचीन इतिहास का यही एकमात्र स्थायी आधार है, जिस पर भारत का प्रत्येक साम्राज्य फला-फूला है। प्राचीन ग्राम पंचायतें प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों पर आधारित थीं। डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी ग्राम पंचायतों को प्रजातन्त्र का देवता मानते हैं। वे लिखते हैं, "ये समस्त जनता की सामान्य लोकसभा के रूप में अपने सदस्यों के समान अधिकार एवं स्वतन्त्रताओं के लिए दृढ़ रहती है जिससे कि सबके मस्तिष्क में समता, स्वतन्त्रता तथा समानता के विचार रहने चाहिए।'' डॉ. के. सी. जायसवाल लिखते हैं, "पुरातन काल के प्रलेखों में लोकप्रिय सभाओं एवं संस्थाओं द्वारा राष्ट्रीय जीवन एवं पद्धतियां प्रदर्शित की जाती थीं। ऋग्वेद एवं अथर्ववेद में भी ग्राम पंचायतों का उल्लेख मिलता है। ये पंचायतें स्वतन्त्र एवं आत्मनिर्भर थीं और ये गांव की रक्षा का प्रबन्ध करती थीं और राज्य का कर एकत्रित करती थीं। वे नये कर लगाने, झगड़ों का फैसला करने एवं लोक हित की योजनाएं बनाने का कार्य करती थीं। सार्वजनिक ऋण, आदि की सहायता से अकाल और अन्य संकटों के निवारण का प्रयास करती थीं। वे पाठशालाएं व अनाथालय चलाती थीं तथा मन्दिरों के द्वारा अनेक धार्मिक व सांस्कृतिक कार्य करती थीं। लड़ाई छेड़ने और सन्धि करने के अतिरिक्त इन्हें राज्य के शेष सभी अधिकार प्राप्त थे।

दसवीं सदी के एक ग्रन्थ शुक्र नीति में ग्राम पंचायतों की विभिन्न विशेषताओं का उल्लेख किया गया है जैसे- ग्राम पंचायतों के सदस्य निर्वाचित होते थे, सदस्यों को कार्यपालिका एवं न्यायपालिका दोनों के अधिकर प्राप्त थे, सदस्यों का सम्मान किया जाता था, गांव की चरागाह भूमि एवं अन्य भूमि पर पंचायत का अधिकार था, भूमि का वितरण एवं कर वसूली पंचायत का कार्य था, पंचायतें शान्ति, सुरक्षा, शिक्षा, स्वास्थ्य और सार्वजनिक निर्माण के कार्य करती थीं तथा गांव पंचायत विवादों का निपटारा करती थी। दक्षिणी भारत के चिंगलपुट जिले के उत्तर मैकर गांव में प्राप्त लेखों में ग्राम पंचायतों का उल्लेख किया गया है। अंग्रेजों ने प्राचीन ग्रामीण पंचायतों की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। चार्ल्स मैटकाफ लिखते हैं, "ग्राम पंचायतों में गणतन्त्र के समस्त गुण पाये जाते हैं। हर एक गांव एक छोटा स्वतन्त्र देश है। वह बाहर के सम्बन्धों से पूर्ण स्वतन्त्र है। जिन चीजों की रक्षा कहीं नहीं हो सकी उनकी रक्षा इन गांवों में की गयी है।'' उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि ग्राम पंचायतें भारत में अति प्राचीन हैं और गांव की प्रशासनिक एवं आर्थिक संरचना में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

**औपनिवेशिक सन्दर्भ-** प्राचीन ग्राम पंचायतें मुगल काल में भी जीवित रहीं, किन्तु ब्रिटिश काल में उनका विघटन होने लगा। जमींदारी एवं भूमिकर में वृद्धि, आदि के द्वारा अंग्रेजों ने किसानों का शोषण प्रारम्भ किया। अब जमींदार ग्रामीण प्रशासक बन गये। गांवों में बेकारी, दरिद्रता, भुखमरी और अकाल, आदि के प्रकोप बढ़े। धीरे-धीरे ग्राम पंचायतें शक्तिहीन होने लगीं। कांग्रेस ग्राम पंचायत समिति की विज्ञाप्ति में ब्रिटिश काल की ग्राम

पंचायतों की स्थिति का इस प्रकार से उल्लेख किया गया है, ''ईस्ट इण्डिया कम्पनी की असाधारण स्वार्थी प्रवृत्ति ने शनैः-शनैः ग्रामीण पंचायतों के ढांचे को तोड़ दिया। जमींदारी तथा रैयतवारी व्यवस्था के प्राकृतिक प्रारम्भ ने ग्राम भूमि व्यवस्था के विरुद्ध ग्रामीण समुदायों के सहयोग पूर्ण जीवन को असहनीय आघात पहुंचाया।'' गांधी जी ने हरिजन पत्रिका में लिखा, ''अंग्रेजी सत्ता की भूमि कर प्रणाली की निर्दयी व्यवस्था ने इन पुरातन प्रजातन्त्रों को पूर्ण रूप से नष्ट कर दिया जो इस भूमि कर के आघात से पुनः खड़ी नहीं हो सकीं।''

**औपनिवेशिक काल में ग्रामीण पंचायतों के विघटन का कारण-**

**जमींदारी प्रथा -** ब्रिटिश काल से पूर्व गांव की समस्त कृषि भूमि का कर वसूल करने का कार्य गांव पंचायतें करती थीं। किन्तु अंग्रेजों ने जमींदारी प्रथा प्रारम्भ की और ग्राम पंचायतों के कर वसूल करने सम्बन्धी एवं अन्य कार्यों को जमीदारों को सौंप दिया जिससे ग्राम पंचायतों की शक्ति घटी। साथ ही उनकी कार्यशैली प्रभावित हुई।

**पुलिस विभाग की स्थापना-** औपनिवेशिक काल से पूर्व गांव में शान्ति और सुरक्षा रखने का कार्य ग्राम पंचायतों का अधिकार क्षेत्र था। अंग्रेजों ने जब पुलिस विभाग की स्थापना की तो ग्राम पंचायतों से ये अधिकार छिन गये और गांव में उनका प्रभाव शिथिलता के साथ शून्यता को प्राप्त हुआ।

**न्यायालयों की स्थापना-** प्राचीन समय में ग्राम पंचायतें ही गांव में विवादों को निपटाने एवं न्याय का कार्य करती थीं। किन्तु अंग्रेजों ने नयी न्याय व्यवस्था प्रारम्भ की जिसके अन्तर्गत दीवानी और फौजदारी न्यायालयों की स्थापना की गयी। अब ग्राम पंचायतों के न्यायिक अधिकार छीन लिए गये उन्हें पंगु बनाया गया।

**औद्योगिक विकास-** अंग्रेजों ने भारत में औद्योगीकरण की नींव डाली। उत्पादन बड़ी-बड़ी मशीनों की सहायता से होने लगा। सारे देश में रेलों और यातायात के नवीन साधनों का जाल बिछा दिया गया। लोग गांव छोड़कर व्यवसाय की खोज में नगरों और औद्योगिक केन्द्रों की ओर जाने लगे जिसके फलस्वरूप गांवों में उन लोगों की कमी हो गयी जो ग्राम पंचायतों के कार्य का भली-भांति निर्वहन कर रहे थे।

**पश्चात्य सभ्यता एवं व्यक्तिवाद-** ग्राम पंचायत की सफलता समूहवादी भावना और पारस्परिक विश्वास तथा मेल-जोल पर निर्भर करती है। अंग्रेजों के आगमन से भारत में पश्चिमी सभ्यता एवं सांस्कृतिक मूल्यों का प्रभाव पड़ा। उनके व्यक्तिवादी विचारों को भारतीयों ने ग्रहण किया। व्यक्तिवाद की यह भावना ग्राम पंचायतों के लिए अहितकर सिद्ध हुई। इन कारकों के अतिरिक्त अन्य कारक- नगरीकरण, यातायात के नवीन साधनों, शिक्षा का बढ़ता महत्व, संयुक्त परिवार एवं जाति के विघटन आदि के कारण भी परम्परात्मक ग्राम पंचायतों का ह्रास हुआ।

**पंचायतों का पुनर्गठन-** औपनिवेशिक काल में भारत में ग्राम पंचायतों का पतन तो हुआ, किन्तु अंग्रेज सरकार ने इनके महत्व को देखते हुए इनके पुनर्गठन के लिए प्रयास भी किये। वर्ष 1822 में रिपन ने स्थानीय स्वायत्त शासन की विचारधारा को कार्य रूप में परिणत करने का प्रयत्न किया। वर्ष 1909 में विकेन्द्रीकरण के रॉयल कमीशन ने गांव पंचायतों के पुनर्गठन पर बल दिया। वर्ष 1919 के विधान में गांव पंचायतों को पुनः

शक्तिशाली बनाने के लिए कदम उठाने की बात कही गई। परिणामस्वरूप अनेक प्रान्तों में गांव पंचायत अधिनियम बने। उनमें से प्रमुख हैं-बंगाल स्वायत्त शासन अधिनिमय 1919, मद्रास पंचायत अधिनियम 1920, असम स्वायत्त सरकार अधिनियम 1920। इसी प्रकार से विहार, पंजाब, उत्तर प्रदेश, आदि में भी 1920 में ग्राम पंचायत अधिनियम बनाये गये। देशी राज्यों जैसे इन्दौर, बीकानेर, पटियाला, बड़ौदा, मैसूर, आदि ने भी पंचायत अधिनियम पारित किये। इस समय महात्मा गांधी का स्वदेशी आन्दोलन भी चल रहा था जिसमें ग्रामोत्थान एवं पंचायतों के पुनर्गठन पर बल दिया गया। इस प्रकार से ब्रिटिश काल में सरकार एवं कांग्रेस दोनों ने ग्राम पंचायतों के पुनर्गठन पर बल दिया। इस काल में पारित विभिन्न अधिनियमों द्वारा ग्राम पंचायतों को पूर्ण अधिकार नहीं दिये गये और सरकारी हस्तक्षेप के बने रहने से इन पंचायतों को उतनी सफलता नहीं मिली जितनी अपेक्षित थी। उक्त पंचायती व्यवस्था में अंग्रेजों द्वारा किया गया सुधारात्मक कार्य स्वतंत्रता संग्राम के परिणाम स्वरूप समझा जा सकत है।

**स्वतन्त्र भारत में ग्राम पंचायतें-** सन् 1947 में भारत आजाद हुआ और हमारी नयी सरकार ने ग्रामीण पंचायतों के पुनर्गठन पर ध्यान दिया। संविधान में राज्य के नीति निदेशक तत्वों के अनुच्छेद 40 में लिखा है, "राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए अग्रसर होगा तथा ऐसी शक्तियां और अधिकार प्राप्त करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों।" वर्ष 1954 में कांग्रेस ने 5 सदस्यों की ग्राम पंचायत कमेटी बनायी जिसे पंचायतों का अध्ययन कर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने का काम सौंपा गया। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में भी ग्राम पंचायतों की संख्या बढ़ायी गयी। वर्ष 1955 में शिमला अधिवेशन में ग्राम प्रशासन के विकेन्द्रीकरण और पंचायतों के अधिकार क्षेत्र को विकसित करने का प्रस्ताव पारित किया गया। भारत सरकार ने बलवन्तराय मेहता की अध्यक्षता में एक कमेटी की स्थापना की। इस कमेटी ने पंचायती राज की स्थापना के द्वारा लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की सिफारिश की। पंचायती राज के अन्तर्गत जिला स्तर पर परिषद्, खण्ड स्तर पर पंचायत समिति और ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत की स्थापना करने का सुझाव दिया गया। इस समिति की सिफारिश को स्वीकार करने में राजस्थान ने पहल की और 2 अक्टूबर, 1959 में नागौर में पण्डित नेहरू ने राजस्थान में पंचायती राज का उद्घाटन किया। वर्तमान में विभिन्न राज्यों में पंचायती राज व्यवस्था लागू है। भारत में पंचायती राज संस्थाओं के कानूनी ढांचे और इसमें महिलाओं के स्थान पर अगर ध्यान दिय जाये तो ये प्रावधान राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद 40 को प्रतिष्ठापित किया गया है और व्यवस्था की गई है कि राज्य ग्राम पंचायतों के गठन के लिए कदम उठाएगा और उन्हें ऐसे अधिकार और शक्तियां देगा जो उन्हें स्वशासन की इकाइयों के रूप में सुचारू रूप से कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए जरूरी हैं। इसके अनुपालन में कई राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं का गठन किया गया, लेकिन उनके कामकाज में बहुत-सी कमियां नजर आईं। इनके चुनाव नियमित रूप से आयोजित नहीं किए जाते थे और आमतौर पर उनके पास कोई वास्तविक शक्तियां या विकास संबंधी भूमिकाएं नहीं थीं। इसलिय यह महसूस किया गया कि पंचायती राज संस्थाओं को कुछ अनिवार्य विशेषताओं से युक्त बनाने के प्रावधानों को

संविधान में शामिल किया जाए ताकि उनमें निश्चितता, निरंतरता और शक्ति का संचार हो। इसी बात को ध्यान में रखते हुए 73वां संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 अस्तित्व में आया। 73वें संशोधन से संविधान में एक नया खंड IX जोड़ा गया जिसका शीर्षक है "पंचायतें"। इसमें अनुच्छेद 243 से 243 (ओ) के प्रावधानों को सम्मिलित किया गया। इसके अलावा एक नई 11वीं अनुसूची भी शामिल की गई जिसके तहत पंचायतों के कार्यों के दायरे में 29 नए विषयों को शामिल किया गया है। इस संशोधन के जरिए राज्य के नीति निर्देशक तत्वों संबंधी अनुच्छेद 40 पर अमल शुरू हुआ है। लेकिन राज्यों को इस बात की पूरी स्वतंत्रता दी गई है कि वे अपनी भौगोलिक, राजनीतिक- प्रशासनिक एवं अन्य स्थितियों को ध्यान में रखकर पंचायती राज प्रणाली अंगीकार करें।

**नारी हेतु आरक्षित प्रावधान-** जहां संविधान का 73वां संशोधन इस बात का अधिकार देता है कि पंचायतों की एक तिहाई सीटें महिलाओं के लिए आरक्षित हों, वहीं देश में कम से कम पांच राज्य ऐसे हैं जिन्होंने पंचायतों में महिलाओं के लिए आरक्षण का अनुपात 50 प्रतिशत तक कर दिया है। बिहार ऐसा पहला राज्य था जिसने 2006 में इसका प्रावधान किया। इसके बाद छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश भी इसी तरह का प्रावधान करने को आगे आए और उन्होंने महिलाओं के लिए आरक्षण बढ़ाकर 50 प्रतिशत कर दिया। सिक्किम ने इसे 40 प्रतिशत रखा है।

**73वें संविधान संशोधन अधिनियम की विशेषताएं-**

- त्रि-स्तरीय पंचायत प्रणाली। (ग्राम, ब्लॉक और जिला स्तर पर)
- पंचायतों का कार्यकाल 5 वर्ष का होगा।
- ग्रामसभा की मतदाता सूचियों में पंजीकृत सभी लोग इसके सदस्य होंगे।
- सभी पंचायतों में सीधे तौर पर चुनाव के जरिए भरी जाने वाली सीटों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था होगी जो उनकी कुल जनसंख्या के अनुपात में होगी और इनमें से एक तिहाई सीटें इन समूहों की महिलाओं के लिए आरक्षित होंगी।
- राज्यों के राज्यपाल राज्य वित्त आयोग का गठन करेंगे जो पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा करेंगे और सिफारिशे करेंगे।

देश में यह बात अधिकाधिक महसूस की जाने लगी है कि पंचायती राज संस्थाओं में महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण के बावजूद निर्वाचित महिला प्रतिनिधि कोई कारगर भूमिका नहीं निभा पा रही हैं। इसका कारण यह है कि उनके पास गांव के प्रशासन के लिए उपयुक्त जानकारी और पर्याप्त कौशल नहीं होता। साथ ही पितृसत्ता की समस्त बाधाएँ उन्हें चार दिवारों के अन्दर रहने को मजबूर करती हैं। नतीजा यह होता है कि उनके पति ही पंचायत के कर्ता-धर्ता बन जाते हैं। इसलिए निर्वाचित महिला प्रतिनिधियों और अन्य महिला नेताओं में क्षमताओं के सृजन की आवश्यकता महसूस की जा रही थी। समाज में बनी मूल्यजनित असमानाता भी अपनी अहम निभाती है।

**अध्ययन क्षेत्र-** प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र गोरखपुर जनपद के खोराबार विकास खण्ड पर आधारित है। खोराबार विकास खण्ड में 52 ग्राम पंचायते हैं जिनमें कुल गांवों की संख्या 92 है। शोध छात्रा का यह अध्ययन क्षेत्र वृहदता को दर्शाता है अतः अपने अध्ययन को

वस्तुनिठ बनाने हेतु उसने अपने अध्ययन को वस्तुनिष्ठ बनाने हेतु उसने अपने अध्ययन क्षेत्र को 5 ग्राम पंचायतों –जंगल बेलवार, तरकुलही, मोतीराम अड्डा, गहिरा, जंगल अयोध्या प्रसाद के 10 गांव जो निम्न हैं – बेरवार, करमहिया, गोपालगंज, तरकुलही, मोतीराम, गोला, गहिरा, मधोदारी, सेमरी, अहिरावती आदि पर क्रेन्द्रित है जहाँ दलितों की पर्याप्त संख्या है जो शोध के साथ निष्पक्षता, स्पष्टता को दर्शाएगा। शोधार्थिनी गांव का चयन प्रासंगिकता को ध्यान में रखते हुए उद्देश्यपूर्ण विधि द्वारा किया है तथा दलित महिला उत्तरदात्रियों का चुनाव दैव निदर्शन विधि से किया है।

**अध्ययन उद्देश्य-**

1. ग्राम पंचायत में दलित स्त्री की वास्तवित सामाजिक प्रस्थिति को स्पष्ट करना।
2. ग्राम पंचायतों में आरक्षण के बाद दलित स्त्रियों को सशक्तीकरण की वास्तविकता को समझना।
3. ग्राम पंचायतों में दलित स्त्रियों में हो रहे सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन करना।

**उपकल्पना-**

1. ग्राम पंचायतों में दलित नारी की सामाजिक प्रस्थिति सुदृढ़ हुई है।
2. ग्राम पंचायत में आरक्षण प्राप्त दलित नारी आर्थिक, राजनैतिक व शैक्षणिक रूप से सशक्त हुई है।
3. ग्राम पंचायतों में दलित नारी एक परम्परागत मूल्यों से आधुनिक मूल्यों की ओर प्रगतिशील है।

**अध्ययन पद्धति -** शोधार्थिनी का शोध कार्य अन्वेषणात्मक तथा वर्णनात्मक प्रकृति पर आधारित है। साथ ही तथ्यों का संकलन क्षेत्रीय अध्ययन के आधार पर किया गया है व द्वितीय स्रोतों हेतु शोध छात्रा ने अपने अध्ययन विषय से जुड़े साहित्यों का अध्ययन किया। प्राथमिक अध्ययन के दौरान साक्षात्कार–अनुसूची व अवलोकन का प्रयोग करते हुए उत्तरदाताओं का चयन निदर्शन की दैव विधि का प्रयोग किया गोरखपुर जिले के खोराबार विकास खण्ड की 5 ग्राम पंचायतों में से 10 ग्रामों का चुनाव कर प्रत्येक गांव को उद्देश्य आदर्श पद्धति के आधार पर चयनित किया। प्रत्येक ग्राम की ग्राम पंचायत के अन्तर्गत उनकी जनसंख्या के आधार पर 10 प्रतिशत दलित महिलाओं का चयन किया। उनसे तथ्यों का संकलन साक्षात्कार अनुसूची द्वारा किया गया। शोध छात्रा ने समंकों के संकलन हेतु मौखिक वार्तालाप व अवलोकन द्वारा वास्तविक जानकारी को संकलित करने का प्रयास किया।

**सारणी क्रमांक 01**

| शोध क्षेत्र | चयनित उत्तरदात्री | दलित नारी की ग्राम में वास्तविक सामाजिक प्रस्थिति | | |
|---|---|---|---|---|
| खोराबार विकास खण्ड की 5 ग्राम पंचायतों के 10 गाँव | दलित नारी 450 | | संख्या | प्रतिशत |
| | | उच्च प्रस्थिति | 25 | 5.5 |
| | | निम्न प्रस्थिति | 365 | 81.11 |
| | | पता नहीं | 60 | 13.33 |
| | | योग | 450 | |

प्रस्तुत अध्ययन में सारणी क्रमांक 1 में दलित नारी की ग्राम में वास्तविक

सामाजिक प्रस्थिति का विश्लेषण किया है। शोधार्थिनी ने कुल 450 उत्तरदात्रियों को लिया है जिनमें से 25 या 5.5 प्रतिशत उच्च प्रस्थिति, 365 या 81.11 प्रतिशत निम्न प्रस्थिति तथा 60 या 13.33 प्रतिशत पता नहीं वाली उत्तरदात्री मिली। उक्त सारणी में शोधार्थिनी ने अध्ययन परिकल्पना शोध क्षेत्र में दलित स्त्री की वास्तविक सामाजिक प्रस्थिति सुदृढ़ है से सम्बन्धित है परन्तु अध्ययन उपरान्त यह ज्ञात हुआ कि शोध क्षेत्र में नारी की सामाजिक प्रस्थिति पुरूष अधीनता को दर्शाती है आज भी दलित नारी दोहरे शोषण के दंश को सहन करती है। दलित स्त्री की निम्नता समाज में दोयम दर्जे के रूप में अवलोकित हुई।

**सारणी क्रमांक 02**

| शोध क्षेत्र | चयनित उत्तरदात्री | आरक्षण पश्चात दलित नारी का समाज में सशक्तीकरण | | |
|---|---|---|---|---|
| खेराबार विकास खण्ड की 5 ग्राम पंचायतों के 10 गाँव | दलित नारी 450 | | संख्या | प्रतिशत |
| | | हाँ पूर्ण सहमत | 75 | 16.66 |
| | | हाँ आशिक रूप से सहमत | 125 | 27.77 |
| | | पता नहीं | 250 | 55.55 |
| | | योग | 450 | |

प्रस्तुत अध्ययन में सारणी क्रमांक 02 में आरक्षण के पश्चात् दलित नारी का समाज में सशक्तीकरण के विवरण का विश्लेषण किया गया है। शोधार्थिनी ने कुल 450 उत्तरदात्रियों को लिया है जिनमें से 75 या 16.66 प्रतिशत उत्तरदात्री मिली जिनका उत्तर हाँ पूर्ण सहमत, 125 या 27.77 प्रतिशत उत्तरदात्री मिली जिनका उत्तर हाँ आंशिक रूप से तथा 250 या 55.55 प्रतिशत उत्तरदात्री मिली जिनका उत्तर पता नही था। शोधार्थिनी द्वारा द्वितीय उपकल्पना की ग्राम पंचायतों में नारी की आर्थिक राजनैतिक व शैक्षणिक रूप से सशक्तीकरण से सम्बन्धित है परन्तु अध्ययन से प्राप्त हुआ कि शोध क्षेत्र में नारी सशक्तीकरण के क्षेत्र में अत्यन्त पिछड़ी हुई है उसके निर्णयों में पुरूष का हस्तक्षेप अधिक है। उनकी सहमती से ही वह व्यवहार का निर्वहन करती है।

**निष्कर्ष-** ग्राम पंचायत में महिला कार्यस्थिति आज भी उनकी सशक्तता के बावजूद निम्नता को दर्शाती है क्योंकि पुरूष प्रधानता उनके अधिकारों को प्रभवित करती हैं। समाज में बनी धारणायें कि नारी शारीरिक रूप से कमजोर तथा मानसिक रूप से अक्षमता को दर्शाती हैं। इसलिए उसे पुरूष की सहायता लेनी ही पड़ेगी अधित्तर स्त्री की अशिक्षा उसकी पराधीनता को बनाये रखने में बल देती हैं। जिस कारण वह अपने समस्त निर्णयों की बागडोर पुरूष को सौंप कर उसके अधीन बनी रहती है। इसको सैदव ऐसे ही बनाये रखने का हर सम्भव प्रयास पितृसत्ता द्वारा किया जाता है। वर्तमान में नारी के प्रति बनी धारणाएं परिवर्तित हो रही हैं। वह शिक्षा जगत में सक्षमता के सादर आगे बड़ी रही है अर्थिक व अन्य क्षेत्रों निर्णन स्वयं ले रही है इस निर्णयों का प्रभाव क्रमिक रूप से स्थानीय प्रशासन प्रणाली की मुख्य भूमिका निर्वहन करने वाली ग्राम पंचायतों में शनैः शनै स्पष्ट होता जा रहा है कि जिन ग्राम पंचायतों में नारी प्रधान है उनकी व्यवस्था पुरूषों प्रधानों तुलना में सशक्त हो रही है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. जायसवाल, डॉ. के.पी., हिन्दू पॉलिटी, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1954
2. शर्मा, ब्रजकिशोर, भारत का संविधान, प्रेंटिस हॉल ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 2005
3. पाण्डेय, एस.एस., समाजशास्त्र, टी.एम.एच. प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009
4. कश्यप, सुभाष, हमारा संविधान, एन.बी.टी. प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
5. शर्मा, डी.,डी. एवं गुप्ता, एम.एल., भारतीय ग्रामीण समाजशास्त्र, साहित्य पब्लि., आगरा, 2011
6. प्रो. तिवारी, जयकान्त, भारत का समाजशास्त्र, उत्तर प्रदेश, हिन्दी, संस्थान, लखनऊ, 2003
7. दुबे, एस.सी., भारतीय समाज, एन.बी.टी. प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
8. सिंह, जे.पी., आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, पी.एच.आई. प्रा. लि., नई दिल्ली, 2019
9. जोशी, गोपा, भारत में स्त्री असमनता, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय नई दिल्ली, 2006
10. प्राथमिक सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्य- 2022

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# मलिन बस्ती में हो रहे परिवर्तनों का अभिमुखन (किशोर बालिकाओं के सन्दर्भ में)

• पूजा भारती
•• आभा सक्सेना

**सारांश- मलिन बस्तियों के परिवार की आर्थिक स्थिति निम्न होने के कारण यहाँ की किशोरियों की आवश्यकताओं की पूर्ति आंशिक रूप से ही हो पाती है। यद्यपि वर्तमान समय की कुछ मलिन बस्तियों में यह अवलोकन किया गया है कि यहाँ की किशोरियाँ व इनके माता-पिता दोनों ही शिक्षा के महत्व एवं लाभ को समझने लगे हैं। यहाँ की किशोर बालिकाएँ शिक्षा के मौलिक अधिकार को समझ रही हैं। इसलिए वह विद्यालय जाने लगी हैं और आगे उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा भी रख रही हैं जिससे कि वह समाज में अपना एक विशेष स्थान स्थापित कर पायें। बालिकाओं के ऐसे विचारों और आकांक्षाओं को देख मलिन बस्तियों के माता-पिता अपनी किशोरियों को शिक्षित बनाने का प्रयास करने लगे हैं जिससे इनकी बालिकाओं के शिक्षा में किसी प्रकार की रूकावट न आ पाये। किन्तु व्यवहारिक स्तर पर सूक्ष्म विश्लेषण से यह दृष्टिगोचर होता है कि वास्तव में मलिन बस्ती युवा बालिकाओं को विभिन्न प्रकार की विपरीत दशाओं का सामना करना पड़ता है, जैसे-शिक्षा की समुचित व्यवस्था और अवसर की प्राप्ति न होना, स्वच्छता की मानसिकता न होने की समस्या, स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ, संसाधनों के अभाव की समस्या, संकुचित सोच के कारण विकसित मानसिकता के अभाव की समस्या, समुचित निर्णय न ले पाने की समस्या, अपने उद्देश्यों को प्राप्त न कर पाने की समस्या अन्ततः कुंठित होने की समस्या परिणामतः सभ्य समाज (शिक्षित संस्कारित) में समायोजन की समस्या आज भी परिलक्षित हो रही है। आज आवश्यकता है मलिन बस्तियों के वास्तविक सुधार और उत्थान की जिसमें वैयक्तिक और सामाजिक स्तर पर विकास की मानसिकता बनाई जा सके तभी सही अर्थों में इनके निजत्व और विकास का अभिमुखन सम्भव हो पायेगा।**

**मुख्य शब्द - मलिन बस्ती, अभिमुखन, आर्थिक स्थिति, मानसिकता**

मलिन बस्ती वह नारकीय क्षेत्र है जहाँ पर मकान जीर्ण-शीर्ण, पानी और साफ-सफाई का अभाव पाया जाता है। यहाँ के मकानों में नालियों की समुचित व्यवस्था

• शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग,श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज,वाराणसी, सम्बद्ध महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
•• प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

नहीं होती जिसके कारण मकान का गन्दा पानी इधर-उधर कहीं पर भी बहता रहता है। यहाँ पर कूड़े-कचरे के फेंकने का कोई निश्चित स्थान नहीं होता है और यहाँ का वातावरण भी अत्यन्त दूषित होता है। मलिन बस्तियों में नैतिक पतन अधिक देखने को मिलते हैं जिसके परिणामस्वरूप इन गन्दी बस्तियों के लोग मद्यपान, वेश्यावृत्ति, जुआ, शराब एवं अपराध जैसे कार्यों को बढ़ावा देते हैं, जिससे समाज में विघटन को प्रोत्साहन मिलता है।[1]

जोरबॉग (1929) के अनुसार, गन्दी बस्ती को एक विशिष्ट खण्डित तथा असंगठित क्षेत्र बताया जो आवास के लिए बिल्कुल अनुपयुक्त है। यह व्यक्तिवादिता और स्वतंत्रता का क्षेत्र है इस क्षेत्र में असामाजिक तत्व और अपराधी दोनों रहते हैं।[2]

बाल्कर (1938) के अनुसार, मलिन बस्ती वह स्थान है जो शहर के पिछवाड़े गन्दी तथा अव्यवस्थित सड़क के किनारे स्थित होता है और जहाँ पर मैले-कुचैले तथा दुराचारी प्रवृत्ति के लोग बसे हुए होते हैं, जहाँ का पूरा पड़ोस निम्न कोटि के गन्दे लोगों का होता है।[3]

**साहित्य की समीक्षा-** मोहसिन, एन. (1979) ने मलिन बस्ती के बच्चों की समस्याओं का अध्ययन किया और स्पष्ट किया कि यहाँ के बच्चे शारीरिक व मानसिक रूप से अस्वस्थ होने के कारण कुपोषण से पीड़ित होते हैं।[4]

वर्मा, एच.एस. (1985) ने यह स्पष्ट किया कि मलिन बस्ती में रहने वाले लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति न होने के कारण यह लोग सर्वदा ही संकटों से घिरे रहते हैं तथा इन्हीं परिस्थितियों का सामना करते हुए ये लोग जीविकोपार्जन करते हैं।[5]

झा, एस.एस. (1986) ने मलिन बस्तियों के सन्दर्भ में अध्ययन किया तथा इनका यह अध्ययन आर्थिक दृष्टिकोण के लिए प्रभावशाली माना जाता है। जो कि मलिन बस्ती की महिलाओं को आवास, शुद्ध पानी एवं स्वच्छता के अभाव के कारण अपमानित भरी जिन्दगी जीने के लिए विवश कर देता है।[6]

प्रस्तुत शोध पत्र किशोर बालिकाओं के सन्दर्भ में है। अत: किशोरावस्था की विशेषता किशोर बालिकाओं के सन्दर्भ में इस प्रकार वर्णित है।

**किशोर बालिका-** समस्त अवस्थाओं में से किशोरावस्था बालिकाओं के लिए एक प्रभावशाली अवस्था होती है, इसलिए इस अवस्था को किशोरियों का बसंत काल कहा जाता है, क्योंकि जिस प्रकार बसंत ऋतु में पेड़-पौधे विकसित व हरे-भरे होकर हरियाली का मौसम लाते हैं, ठीक उसी प्रकार किशोरावस्था किशोरियों के जीवनकाल में शारीरिक उत्थान के साथ-साथ इनमें बहुत से पदोन्नति अथवा उत्साह लेकर आती है। किशोर बालिका बारह से उन्नीस वर्ष आयु की बालिकाओं को कहा जाता है। इस अवस्था में किशोरियों में शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं के विकास के साथ-साथ इनमें नई-नई आकांक्षा और अभिलाषा का जन्म भी होता है। इसलिए इस उम्र में किशोरियों के मनोवृत्तियों एवं विचारों को अर्थपूर्ण समझना अत्यावश्यक होता है।[7]

**किशोर बालिकाओं की प्रवृत्तियाँ और आकांक्षाओं का स्वरूप-** किशोर बालिकाओं के जीवन के महत्वपूर्ण अवस्था को किशोरावस्था कहते हैं क्योंकि इस अवस्था का प्रारम्भ किशोरियों में बाल्यावस्था के अन्तिम समय में होता है तथा प्रौढ़ावस्था के प्रारम्भ

में समाप्त हो जाता है। अतः इस अवस्था में किशोरियों में शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, सामाजिक परिवर्तन बहुत ही तीव्रता से होती है जिसका सीधा प्रभाव किशोरियों के आकांक्षाओं एवं आवश्यकताओं पर पड़ता है। किशोर बालिकाओं की प्रवृत्तियाँ और आकांक्षाओं का स्वरूप निम्नलिखित है-

**1. शरीर को प्रबल बनाने की आवश्यकता-** किशोरियों में शारीरिक परिवर्तन बहुत ही तीव्र गति से होती है इसी कारण किशोरियाँ अपने शरीर पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित करती है और यह अपने को मजबूत व प्रबल बनाने के लिए अत्यधिक पौष्टिक आहार उचित मात्रा में एवं उचित समय पर ग्रहण करना पसन्द करती हैं जिससे कि इनका शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक विकास पूर्ण रूप से हो सके।

**2. खेलकूद में भाग लेने की आकांक्षा-** किशोरियाँ विभिन्न प्रकार के खेलों में रुचि रखती हैं और यह खेलकूद में इतनी व्यस्त रहती हैं कि इन्हें खाने-पीने का भी ध्यान नहीं रहता है तथा इन्हें इस उम्र में खेलने-कूदने में थकान का भी कोई एहसास नहीं होता है।

**3. आत्मनिर्भरता की आकांक्षा-** जिन किशोरियों के निर्धनता के कारण उनकी आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय होती है वह किशोर बालिकाएँ अपनी आवश्यकता की पूर्ति करने हेतु किसी न किसी कार्यों में संलग्न हो जाती है जिससे कि इनकी आर्थिक स्थिति मजबूत हो जाये। वर्तमान समय में प्रत्येक किशोरियाँ आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनना चाहती हैं, इसलिए यह किसी भी प्रकार के मेहनत-मजदूरी करने से पीछे नहीं हटती हैं।

**4. शारीरिक सौन्दर्य की आकांक्षा-** प्रत्येक किशोरियों का ध्यान उनकी शारीरिक सुन्दरता पर होता है। यह अपने को सुन्दर एवं आकर्षित दिखने के लिए लगातार प्रयासरत रहती हैं जिसके लिए यह प्रतिदिन स्नान करती हैं, डिजाइनर वस्त्र पहनती हैं और सजावट का भी विशेष ध्यान देती हैं। किशोर बालिकाएँ फैशन के अनुसार स्वयं को सुन्दर एवं आकर्षित बनाती हैं।

**5. विषमलिंगी से प्रेम की आकांक्षा-** किशोरावस्था की बालिकाओं में विषमलिंगी के प्रति प्रेम बहुत ही गतिशीलता से बढ़ता है और मन में जीवनसाथी पसन्द करने की इच्छा भी बहुत तीव्रता से जागृत होती है। इसके साथ-साथ किशोरियाँ अपने जीवनसाथी के विषय में अपने सखी-सहेलियों से विचार-विमर्श करके उनके साथ वैवाहिक जीवन की शुरुआत करना चाहती हैं।

**6. यौन शिक्षा की आवश्यकता-** किशोरियों में यौन भावना अत्यधिक प्रबल होती है और इनके इस भावना को दबाया नहीं जा सकता है, चूँकि यह किशोरियों के जीवन को हरा-भरा बना देता है। किशोरियाँ यौन शिक्षा की आवश्यकता महसूस करती हैं और इनकी इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु विद्यालयों में ऐसी कोई शिक्षा की व्यवस्था नहीं होती है जिससे कि इनकी इस इच्छा की पूर्ति हो सके। इसलिए यह अश्लील फिल्मों व पत्र-पत्रिकाओं की ओर अधिक आकर्षित होती हैं।

**7. मनोवैज्ञानिक आवश्यकता-** इसमें किशोरियाँ अपने माता-पिता व समस्त परिवार से प्रेम, घर-परिवार में सम्मान व प्रतिष्ठा और भाई-बहनों में भेदभाव न होकर के बल्कि समान स्थान पाना चाहती हैं।

**8. विचरण की आकांक्षा-** किशोरियाँ विचरण की आकांक्षा के प्रति नये-नये जगहों व पर्यटक जैसे स्थानों पर घूमना-फिरना ज्यादा पसन्द करती हैं और विद्यालयों द्वारा अपने मनचाहे स्थानों पर घूमने की हठ करती हैं।

**9. मान्यताएँ एवं आत्म सम्मान की आकांक्षा-** किशोरावस्था की बालिकाओं में स्वयं के प्रति आत्मसम्मान की भावना बढ़ जाती है और इनकी यह भावना बहुत तीव्र होती है जिसके फलस्वरूप यह कभी नहीं चाहती कि इन्हें कोई भी व्यक्ति छोटा बच्चा जानकर इनकी अवहेलना करे और यदि कोई इनकी अवहेलना करता है या इन्हें बहुमूल्यता नहीं देता तो इस स्थिति में किशोरियों के हृदय में उस व्यक्ति के प्रति हीन, घृणा की भावना जागृत हो जाती है।

**10. संयम विमुक्त होने की आकांक्षा-** किशोरावस्था में बालिकाएँ स्वयं को अंकुश विमुक्त रखना चाहती हैं और वह अपने से जुड़े किसी भी कार्यों जैसे-खेलकूद, नहाने-धोने, श्रृंगार करने में किसी भी प्रकार की रोक-टोक नहीं चाहती हैं। यदि इनके किसी भी कार्यों में कोई नियंत्रण रखने की कोशिश करता है तो यह क्रोधित हो जाती हैं।

**11. शारीरिक प्रदर्शन की आकांक्षा-** शारीरिक प्रदर्शन में किशोरियाँ शरीर को सिर्फ प्रबल ही नहीं बनाती वरन् शारीरिक क्रियाओं में भाग लेकर शरीर के मजबूती का प्रमाण भी देती हैं।

**12. किसी को आदर्श बनाने की आकांक्षा-**किशोरावस्था में बालिकाएँ किसी भी खिलाड़ी, वैज्ञानिक, साहित्यकार, क्रांतिकारी वीर, फिल्मी सितारे आदि में से किसी भी एक मानव को अपना आदर्श बनाकर उसके प्रति श्रेष्ठ होती हैं।

**13. कुछ बनने की आकांक्षा-** किशोरियों में कुछ बनने की आकांक्षा अधिक होती है जिसके कारण वह स्वयं को किसी भी बहादुर व्यक्ति, सामाजिक कार्यकर्त्ता, खिलाड़ी, फिल्मी सितारे तथा राजनेता आदि के रूप में परिपक्व करने की लालसा को सँवारने लगती हैं। जिससे कि भविष्य में किशोरी की समानता किसी विशिष्ट व्यक्ति के रूप में जानी जाये।

**14.सामाजिक गौरव प्राप्त करने की आकांक्षा-**किशोरावस्था एक ऐसी अवस्था है जिसमें बालिकाओं में सामाजिक विकास बहुत ही तीव्रता से होती है तथा इस अवस्था में किशोरियाँ अनेक उपलब्धि एवं सफलता को प्राप्त कर स्वयं को श्रेष्ठ बनाना चाहती है जिससे कि उनकी समाज में एक अलग पहचान बन सके और समाज में उसके उपयुक्त समायोजन की सम्भावनाएँ बढ़ जाये। इसके लिए यह विभिन्न समूहों की सदस्या से जुड़ती हैं और समारोहों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेती है जिससे कि इनकी सफलताओं से इनकी अन्त:क्रिया में वृद्धि और इनकी आकांक्षा के स्तर में भी विकास हो सके।[8]

**15. स्वग्राही होने की आवश्यकता-** किशोरियों को अपने से बड़ों की बातें हमेशा बुरी लगती हैं और इनको अपने से बड़ों की अच्छाई का एहसास स्वयं गलती करके ही होता है। गलती करने के बाद ही यह कुछ अच्छा सीखती हैं। यह वही कार्य करना पसन्द करती हैं जो इन्हें पसन्द हो फिर चाहे वह गलत ही क्यों न हो किन्तु जब यह गलती कर देती है, तो इन्हें अपने माता-पिता की बातें याद आती है और फिर यह कुछ अच्छा सीख पाती है।

**16. जीवन दर्शन की प्रवृत्ति एवं आकांक्षा-** किशोरावस्था में बालिकाएँ मानसिक रूप

से प्रौढ़ होती हैं इसीलिए यह जीवन की प्रतिक्रिया में स्वतंत्र दृष्टिकोण रखती हैं।[9]

17. **नये ज्ञान की आकांक्षा-** किशोरियाँ नये-नये ज्ञान व अनुभव में अधिक रुचि रखती हैं और इनकी यह पसन्द ज्यादातर सन्तुष्ट पर्यटन, जीम तथा विद्यालय के पाठ्यक्रम सम्बन्धित क्रियाओं में होती है।

18. **सुरक्षा की आकांक्षा-** किशोरियाँ अपने समस्याओं का कष्ट स्वयं ही उठाती हैं तथा वह अपने माता-पिता से यह सहानुभूति चाहती है कि उनके माता-पिता उनके साथ स्नेहपूर्वक व्यवहार करें, जिससे कि बालिकाएँ निराशाओं की समस्याओं से बची रहें।[10]

**वर्तमान समय में हो रहे परिवर्तनों का मलिन बस्तियों पर प्रभाव-** नगरीय विकास योजनाओं में मलिन बस्ती के सफाई के सुधार की योजना का आरम्भ 1956 में किया गया था। यह योजना राज्य व केन्द्र शासित प्रदेशों द्वारा मलिन बस्ती के लोगों को किसी भी स्वच्छ क्षेत्रों में मकान देने की वित्तीय सहायता प्रदान की जाने वाली योजना है। जिसके लाभ से समाज में यह बदलाव देखने को मिल रहा है कि मलिन बस्तियों के लोगों के मकानों का निर्माण अब स्वच्छ स्थानों पर हो रहा है। जिसका सकारात्मक प्रभाव मलिन बस्तियों में निवास करने वाले लोगों में यह नजर आ रहा है कि अब मलिन बस्तियों के निवासी स्वयं को सामान्य समाज के लोगों से अलग नहीं महसूस कर रहे हैं।[11] भारत के शहरी क्षेत्रों को मलिन बस्ती विमुक्त बनाने के लिए केन्द्र सरकार द्वारा बनाई गयी राजीव आवास योजना से वर्तमान समय के मलिन बस्ती समाज में यह परिवर्तन परिलक्षित हुए हैं कि अब यहाँ के निवासियों को अभावयुक्त मकानों की सुविधा एवं गन्दगियों से पनपने वाली बीमारियों की समस्याओं का समाधान नजर आ रहा है, जिससे इनके मनोदशा पर यह प्रभाव दिखाई दे रहा है[12] कि अब यह लोग भी जर्जरयुक्त मकान से मुक्ति पाकर अपना जीवनयापन एक सुविधाजनक मकान एवं स्वच्छतापूर्वक पर्यावरण में व्यतीत कर सकते हैं, जहाँ का सामाजिक जीवन नीरसता योग्य न होकर के बल्कि सामान्य है। इसके साथ-साथ सरकार ने मलिन बस्तियों के सहायता के लिए कुछ प्रबंध और भी किये हैं, जैसे-राष्ट्रीय स्लम विकास कार्यक्रम, अम्बेडकर मलिन बस्ती आवास योजना, शहरी गरीबों के लिए बुनियादी सेवाएँ, शहरी निर्धनों के आवास के लिए ब्याज सब्सिडी योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना आदि। इन विकास की योजनाओं के सुविधाओं से मलिन बस्ती समाज इस प्रकार से परिवर्तित हो रहे हैं कि अब मलिन बस्ती क्षेत्रों के लगभग सभी मकान पक्के व सुविधाजनक हैं तथा इन मकानों में शौचालय, पानी आदि की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। इनमें से कुछ मकानों में रसोईघर की भी सुविधा है।[13] सरकार द्वारा इन सुविधाओं के देने से मलिन बस्ती के लोगों के बौद्धिक स्थिति पर इसका यह प्रभाव दिखाई दे रहा है कि और अब कुछ मलिन बस्ती समाज के व्यक्ति भी अन्य समाज के व्यक्तियों जैसे ही अपने आस-पास के वातावरण को स्वच्छ रख रहे हैं और अपने मकानों में प्रत्येक सुख-सुविधा एवं अपने परिवार के सदस्यों के जरूरतों का भी विशेष ध्यान दे रहे हैं जिससे इनके परिवार के सदस्य को किसी भी तरह की कोई परेशानी न हो सके।

इसके अतिरिक्त किशोरियों के लिए सरकार ने अनेक योजनाएँ बनाई है, जैसे-बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ, उत्तर प्रदेश मुफ्त शिक्षा योजना, बालिका समृद्धि योजना, सुकन्या योजना आदि की सहायता से कुछ मलिन बस्तियों की बालिकाओं के जीवन में

यह खुशहाली की लहर दिखाई दे रही है कि अब यह भी अन्य समाज की बालिकाओं जैसे शिक्षित व समाज में उठने-बैठने के काबिल हो सकती हैं।[14] इन योजनाओं के लाभ से वर्तमान समय के कुछ मलिन बस्तियों के माता-पिता अपनी बालिकाओं को स्वयं के ऊपर बोझ नहीं समझ रहे हैं और ना ही अपनी बालिकाओं के शादी विवाह की कोई चिन्ता करते हैं। माता-पिता के ऐसे व्यवहार को देख मलिन बस्तियों की किशोरियों में यह प्रभाव देखने को मिला है कि अब बालिकाएँ भी बालकों जितना अपने माता-पिता की आर्थिक समस्याओं में सहायता प्रदान करने का प्रयास कर रही है और समाज के किसी भी क्षेत्र में अपना एक विशेष योगदान देने के योग्य स्वयं को सक्षम समझती हैं। सरकार द्वारा विकास की योजनाओं के लाभ से कुछ मलिन बस्तियों की किशोरियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करने में अभिलाषा रख रही हैं जिससे कि यह कोई भी छोटी-मोटी नौकरी करके अपने व अपने परिवार के आवश्यकताओं को पूर्ण कर सकें और अपने आने वाली पीढ़ी के प्रत्येक सदस्य को शिक्षित बनाने में सहायता प्रदान कर सकें।

**किशोर बालिकाओं की दशा और दिशा-** मलिन बस्ती की किशोरियों की सर्वप्रमुख समस्या निर्धनता की है, जो इन्हें एक ऐसे विशेष दशा का बोध कराता है जो अत्यन्त ही कष्टदायक है। मलिन बस्ती की आर्थिक स्थिति अत्यन्त निम्न होती है जिसके फलस्वरूप यहाँ की किशोरियों को छोटे से उम्र में ही अपनी छोटी-छोटी खुशियों का त्याग करना पड़ता है। यहाँ की निर्धनता यहाँ की किशोरियों के समाजीकरण में एक विशेष बाधा उत्पन्न करती है, मलिन बस्ती में शिक्षा का स्तर अत्यन्त निम्न पाया जाता है एवं यहाँ के लोगों में जागरुकता की कमी भी दिखाई देती है। जो बालिकाओं को कभी-कभी एक विषम परिस्थिति में डाल देता है।

वर्तमान समय में मलिन बस्तियों की किशोरियों के व्यक्तित्व पर इनके पारिवारिक समस्याओं का अधिक प्रभाव दिखाई दे रहा है तथा माता-पिता का अपने किशोरियों के साथ आपसी समायोजन न होने के कारण ये अपनी किशोरियों के मानसिक स्थिति को समझ नहीं पाते हैं। अत: इनके ऐसे व्यवहार के कारण किशोरियाँ अपराधी प्रवृत्ति की होने लगती हैं। परिवार के टूटने से भी किशोरियों के मन:स्थिति पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है और यह मानसिक रूप से अत्यधिक परेशान रहने लगती हैं। इनकी ऐसी दशा माता-पिता में मतभेद व अलगाव के कारण होता है जो कि किशोरी के मानसिक तनाव को बढ़ा देता है, जिसके कारण इनके वास्तविक व्यक्तित्व का विकास भी नहीं हो पाता है।

मलिन बस्तियों के अधिकांश परिवार के माता-पिता व अन्य सदस्य अशिक्षित होते हैं जिसके कारण यहाँ की किशोर बालिकाओं को सही मार्गदर्शन नहीं मिल पाता है और यह विद्यालय से लेकर उच्च शिक्षा तक के विभिन्न महत्वपूर्ण सूचना से अनभिज्ञ रहती हैं। माता-पिता का सम्बन्ध प्रेमपूर्ण न होने से परिवार के सदस्यों में हमेशा आपसी कलह, अर्थहीन वाद-विवाह व गाली-गलौज जैसे अपशब्दों का प्रयोग होता रहता है जो कि किशोर बालिकाओं को बौद्धिक रूप से असहाय बनाता है।

माता-पिता दोनों लोगों के काम करने से किशोरियों में सुरक्षा, सन्तुष्टि और शांति के अभाव की भावना जागृत होने लगती है और ऐसे में इन्हें अकेले रहने से भी डर

लगने लगता है। किशोरावस्था में बालिकाओं को शारीरिक, मानसिक व पारिवारिक समस्याओं की दशाओं का सामना ही नहीं करना पड़ता बल्कि इन्हें सामाजिक वातावरण के बदलते व्यवस्थापन का भी सामना करना पड़ता है। यह विभिन्न सामाजिक विपरीत दशाओं का सामना करते हुए कभी–कभी समाज में अपनी एक नई पहचान बनाने में असमर्थ रहती है। यह खुले सोच एवं विचार की होती हैं इसीलिए समाज में स्वयं के नियम कानूनों द्वारा कार्य करना पसन्द करती हैं लेकिन समाज इन्हें ऐसे स्वतंत्रता पूवक कार्य करने की अनुमति नहीं देता है। फलतः किशोरियों के सामने सामाजिक समायोजन की समस्या की दशाएँ उत्पन्न हो जाती है।

मलिन बस्तियों की किशोरियाँ बदलते सामाजिक मूल्यों, व्यवहारों, रीति–रिवाजों में समायोजन की स्थिति का सामना नहीं कर पाती हैं तो समाज इन्हें हीन भावना से देखने लगता है ऐसी दशा में इनमें हीन भावना और कुंठा का विकास होने लगता है। किशोरियाँ भावनात्मक रूप से बहुत कमजोर होती हैं और इनमें संवेगात्मक स्थिरता नहीं होती है इसलिए यह क्षण भर में प्रसन्न तो क्षण भर में क्रोधित हो जाती हैं। इनमें भावनात्मक समस्या की स्थिति तब जन्म लेती है जब इनका सम्बन्ध इनके माता–पिता के साथ बुरा होता है तथा इन्हें अपने माता–पिता व परिवार के अन्य सदस्यों से इच्छित सहयोग नहीं मिल पाता है। ऐसी स्थिति में यह स्वतंत्रतापूर्वक जीवनयापन करना चाहती है। अतः इन्हें स्वयं के ऊपर परिवार का नियंत्रण अच्छा नहीं लगता है। इनकी यही सोच इन्हें अपराधी प्रवृत्ति व बुरी आदतों का शिकार बना देती है।

मलिन बस्तियों की किशोरियों में भावनात्मक असुरक्षा की स्थिति उत्पन्न होने से इनमें बौद्धिक अस्थिरता दिखाई देती है। ऐसी परिस्थिति में किशोरियों में आत्महत्या करने की दशाएँ भी उत्पन्न होने लगती हैं। किशोरियाँ मानसिक रूप से अधिक ग्रसित रहती हैं, चूँकि इनमें नये–नये विचारों का जन्म होता है और फिर इनके मूल्यों, प्रतिमानों में भी परिवर्तन दिखाई देने लगते हैं जिसके कारण यह समाज में नये विचार एवं आदर्श को स्थापित करने का प्रयास करती हैं, परन्तु जब यह अपने नये विचारों एवं आदर्शों को स्थापित करने में असफल हो जाती हैं तो ऐसी दशा में इनके मस्तिष्क में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होने लगती है।

किशोरियों की समस्या की दशाओं का एक कारण नैतिक समस्या भी है इसलिए आज के समय में देश के प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्त्तव्य है कि वह अपनी बालिकाओं की समस्याओं को जानने का प्रयास करे और इनकी समस्याओं के समाधान का निराकरण करे तभी सुसंस्कृत परिवार और समाज की कल्पना की जा सकती है।[15]

**निष्कर्ष-** मलिन बस्तियों के परिवार की आर्थिक स्थिति निम्न होने के कारण यहाँ की किशोरियों की आवश्यकताओं की पूर्ति आंशिक रूप से ही हो पाती है। यद्यपि वर्तमान समय की कुछ मलिन बस्तियों में यह अवलोकन किया गया है कि यहाँ की किशोरियाँ व इनके माता–पिता दोनों ही शिक्षा के महत्व एवं लाभ को समझने लगे हैं। यहाँ की किशोर बालिकाएँ शिक्षा के मौलिक अधिकार को समझ रही हैं। इसलिए वह विद्यालय जाने लगी हैं और आगे उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा भी रख रही हैं जिससे कि वह समाज में अपना एक विशेष स्थान स्थापित कर पायें। बालिकाओं के ऐसे विचारों और आकांक्षाओं

को देख मलिन बस्तियों के माता-पिता अपनी किशोरियों को शिक्षित बनाने का प्रयास करने लगे हैं जिससे इनकी बालिकाओं के शिक्षा में किसी प्रकार की रूकावट न आ पाये। किन्तु व्यवहारिक स्तर पर सूक्ष्म विश्लेषण से यह दृष्टिगोचर होता है कि वास्तव में मलिन बस्ती युवा बालिकाओं को विभिन्न प्रकार की विपरीत दशाओं का सामना करना पड़ता है, जैसे-शिक्षा की समुचित व्यवस्था और अवसर की प्राप्ति न होना, स्वच्छता की मानसिकता न होने की समस्या, स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएँ, संसाधनों के अभाव की समस्या, संकुचित सोच के कारण विकसित मानसिकता के अभाव की समस्या, समुचित निर्णय न ले पाने की समस्या, अपने उद्देश्यों को प्राप्त न कर पाने की समस्या अन्ततः कुंठित होने की समस्या परिणामतः सभ्य समाज (शिक्षित संस्कारित) में समायोजन की समस्या आज भी परिलक्षित हो रही है। आज आवश्यकता है मलिन बस्तियों के वास्तविक सुधार और उत्थान की जिसमें वैयक्तिक और सामाजिक स्तर पर विकास की मानसिकता बनाई जा सके तभी सही अर्थों में इनके निजत्व और विकास का अभिमुखन सम्भव हो पायेगा।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


1. Pathak, A., (2012), Samsamyik Samajik Mudde, Pioneer Publishers & Distributors, Varanasi, P. 52-53.
2. Zorbaugh, H.W., (1929), The Gold Coast and the Slum, The University of Chicago Press, Chicago.
3. Walker, M.L., (1938), Urban Blight and Slum, Combridge, Mass.
4. Mohsin, N., (1979), Problems of Slum Children in Patna, A.N.S. Institute of Social Studies, Patna.
5. Verma, H.S., (1985), Bombe New Bombe and Metropolitan Reason : Groth Process and Planning Lasers Concept Publishing Ko, New Delhi.
6. Jha, S.S., (1986), Structure of Urban Poverty, Popular Prakashan, Bombay.
7. Rastogi, S., (2022), Kishoravastha, Arjun Publishing House, New Delhi, P. 1-25.
8. https://sarkariguider.in Kishoron Ki Avashyakatayen Evam Akankshaen.
9. https://hindikeguru.com/2020/10/Kishoravastha-ki-samasya
10. Sharma, B.D., (2009), Buddhi Vikas Tatha Adhigam, Omega Publication, New Delhi, P. 260-261,
11. Mahajan, S., (2004), Bharat Mein Samajik Vighatan, Arjun Publishing House, New Delhi, P. 287.
12. Amitabh, K., (2014), Jhuggeemukt Bharat Ek Drishtikon, Yojana.September, P. 15.
13. https://www.insightsonindia-com.translate.goog/social-justice/issues-related-to-urban-development/slums/government-initiatives-to-manage-slums
14. https://pmmodiyojana.in/government-scheme-for-girls
15. Goyal, A. & Safadia R., (2015), Kishoravastha Samasyan Evam Samadhan, Pointer Publishers, Jaipur, P. 20-27.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# विवाह का संस्थात्मक स्वरूप एवं वर्तमान नगरीय समाज

•आराधना पटेल
•• आभा सक्सेना

**सारांश- नगर विभिन्न संस्कृतियों के पुंज हैं। सभ्यता और संस्कृति के बनते-टूटते स्वरूप यहाँ की विशेषता है। नगर की सभ्यता व संस्कृति समय के साथ निरन्तर परिवर्तित होती रहती है। औद्योगीकरण, यंत्रीकरण और विज्ञान के विकास और प्रगति ने नगर के आर्थिक-सामाजिक और सांस्कृतिक ढाँचे को बदलने का प्रयास किया है। नगर के व्यक्तियों की जीवन-शैली, कार्य पद्धति, सोच और मानसिकता आधुनिकता के साँचे में ढलते जा रहे हैं। आज नगर-गाँवों की सीमाओं को चीरता हुआ आगे बढ़ता जा रहा है और जहाँ तक फैलता जा रहा है, वहाँ नगर की सभ्यता और संस्कृति की छाप गहरी होती जा रही है। आधुनिक नगरीय भौतिक संस्कृति ने अभौतिक संस्कृति से जुड़ी मान्यताओं, विश्वासों, मूल्यों, आदर्शों, परम्पराओं आदि के स्वरूप को बदल दिया है। सामूहिक मूल्यों के स्थान पर वैयक्तिक मूल्यों व स्वार्थों जन्म हुआ। नगर भौतिक सुख और महत्वाकांक्षाओं का केन्द्र बन गया। यहाँ के आकर्षण ने नगर की जनसंख्या में जहाँ अत्यधिक वृद्धि की है वहीं असंख्य समस्याओं को भी जन्म दिया है। प्रस्तुत शोध पत्र में विवाह के संस्थात्मक स्वरूप एवं उसकी वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जा रहा है।**

**मुख्य शब्द - संस्थात्मक स्वरूप, सभ्यता, संस्कृति, औद्योगीकरण, यंत्रीकरण**

**नगरों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-** स्थूल रूप से नगर वह समुदाय है जहाँ द्वितीय समूहों व नियंत्रणों, व्यापार व घनी आबादी अवैयक्तिक सम्बन्धों की प्रधानता प्रकृति से दूर जीवन आदि विशेषताएँ पाई जाती हैं। सामान्य रूप से नगरें की जनसंख्या अधिक होती है। उसका घनत्व भी अधिक होता है। नगरों के विकास के सम्बन्ध में कोई निश्चित समय निर्धारित नहीं किया जा सकता है। प्राचीन काल से ही भूमण्डल पर नगरों का विकास सभ्यता के साथ-साथ होता आया है। इसलिए गिस्ट तथ अलबर्ट का कथन है कि, ''स्वयं सभ्यता के जन्म के समान ही नगर का जन्म भी अतीत के अंधेरे में विलीन हो गया है।'' विज्ञान के आविष्कारों के सहयोग से यातायात के साधनों का विकास हुआ। इन्हीं के साथ-साथ उद्योग धंधों का विकास हुआ, विशाल नगरों की स्थापना हो

• शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग, महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी
•• प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

गयी। वर्तमान समय में विश्व के सभी भागों में नगरों का जाल सा फैल गया है।

सर्वप्रथम नगर ईसा पूर्व 6000 एवं 5000 के मध्य प्रकट हुए। परन्तु यह नगर आकार में छोटे थे एवं इन्हें कस्बों से अलग करना सम्भव नहीं था। ईसा पूर्व 3000 तक सही अर्थों में नगर का विकास हुआ। तदुपरांत लगभग 2000 वर्षों तक इस दिशा में प्रगति हुई, यूनान-रोमन काल में नगरों का विकास हुआ। यह आश्चर्यजनक है कि जिन प्रदेशों में नगरीय जीवन का प्रारम्भ हुआ था वहाँ नगर समाप्त हो गये तथा अन्य प्रदेशों में नगरों का जन्म हुआ। कुछ समय उपरांत मोसोपोटामिया, भारत एवं मिस्र एशिया एवं रोम के नगरों का पतन हो गया। जिसका मुख्य कारण था कि वे सभी ऐसी अर्थव्यवस्था से बँधे थे जो मुख्यतः कृषिकारी थी। पश्चिमी यूरोप में नगरों की संख्या बढ़ती गयी और उनका विकास वृद्धि की ओर अग्रसर रहा। 19वीं शताब्दी में सही अर्थों में नगरीय क्रांति आयी, सन् 1800 से नगरीकरण द्रुत गति से विकास करने लगा था। 21वीं सदी तक आते-आते नगर और महानगरों का स्वरूप परिवर्तित हो गया। नगर के बुनियादी ढाँचे में जहाँ तीव्रता से परिवर्तन हो रहे हैं, वहीं नगरीय उद्योगों के स्वरूप में भी अत्यधिक परिवर्तन हो रहे हैं। सन् 1990 से जो वैश्विक आन्दोलन प्रारम्भ हुआ उसने वैश्वीकरण बाजारवाद की स्थापना की। व्यक्ति देखते-देखते वैश्विक गाँव का नागरिक बना। विश्व को देखने-परखने का एक नवीन नजरिया अथवा आयाम विकसित हुआ। नगरीकरण की उभरती हुई आधुनिक नूतन प्रवृत्तियाँ नगरीकरण की प्रक्रिया को प्रभावित करती है। नगरीय व्यक्ति की जीवन-शैली में इसे सरलता से देखा जा सकता है। नगरीकरण की नूतन प्रवृत्तियाँ व्यवस्था, वैश्वीकरण, उदारीकरण, बाजारवाद, उपभोक्तावाद से जन्मी प्रवृत्तियाँ नगरीकरण के नये आयाम हैं जो व्यक्ति को नगर और महानगर का नागरिक बनाती है तथा साथ ही साथ आधुनिक बनने की प्रेरणा भी देती है। समयानुसार अपने को बदलने के लिए प्रोत्साहित भी करती है। समयानुसार ये प्रवृत्तियाँ अपना पुनः नया स्वरूप धारण करती रहेंगी। इस तरह नगर में निरन्तर कुछ न कुछ नई प्रवृत्तियाँ जन्म लेती रहती हैं जो लोक और परम्परा से हटकर होती हैं।

**नगरीय सामाजिक संस्थाएँ-** समाज में मनुष्य की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु कुछ ऐसे आधारों की अनिवार्यता होती है, जो व्यक्तिगत क्षेत्र से विस्तृत होकर सामाजिक क्षेत्र में अनुकूल हो। सामाजिक संस्थाओं का उद्भव इसी आवश्यकता की पूर्ति हेतु हुआ है। सामाजिक संस्थाओं के अनुशासन का पालन करना प्रत्येक व्यक्ति का मुख्य दायित्व है। सामाजिक संस्थाओं के अनेक प्रकार होते हैं, जिनमें विवाह, परिवार, नातेदारी, शिक्षा, अर्थव्यवस्था आदि प्रमुख हैं।

कार्यकारी आवश्यकताएँ संस्थाओं को जन्म देती हैं। नगरीय सामाजिक संस्थाओं को सामाजिक मानकों, आस्थाओं, मूल्यों और समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए निर्मित सम्बन्धों की भूमिका के जटिल ताने-बाने के रूप में देखा जाता है। संस्थाएँ व्यक्तियों पर प्रतिबंध लगाती हैं साथ ही ये व्यक्तियों को अवसर भी प्रदान करती हैं। सामाजिक संस्थाएँ सामाजिक जरूरतों को पूरा करने के लिए विद्यमान होती हैं।

मैकाइवर एवं पेज "Society", (1972)[1] संस्था सामूहिक क्रिया की विशेषता बताने वाली कार्य प्रणालियों में स्थापित स्वरूप या व्यवस्था को कहते हैं। कूले "Social

Organization", (1909)[2] एक संस्था किसी निरन्तर बनी रहने वाली आवश्यकता या इच्छा की पूर्ति के लिए सामाजिक विरासत में स्थापित सामूहिक व्यवहारों का एक जटिल संगठन है। संस्थाएँ मानव आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज द्वारा भूतकालीन अनुभवों के आधार पर स्वीकृत प्राप्त नियमों व कार्य-विधियों की व्यवस्था है, जो समाज-कल्याण की भावना से प्रेरित होती है इसलिए समाज के लिए अनिवार्य मानी जाती है।

**विवाह की अवधारणात्मक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि-** भारतीय समाज में यदि परिवार एक सबसे छोटी और महत्वपूर्ण इकाई है तो इसका अस्तित्व विवाह द्वारा ही रहता है। विवाह की संस्था सभी समाजों में होती है। हिन्दू धर्मशास्त्रों में हमारे सोलह संस्कार बताये गये हैं। इन संस्कारों में प्रमुख रूप से महत्वपूर्ण विवाह संस्कार है। शादी को व्यक्ति का दूसरा जन्म भी माना जाता है। विवाह = वि + वाह, अत: इसका शाब्दिक अर्थ है- विशेष रूप से (उत्तरदायित्व का) वहन करना। पाणिग्रहण संस्कार को सामान्य रूप से हिन्दू विवाह के नाम से जाना जाता है। अन्य धर्मों में विवाह पति और पत्नी के बीच एक प्रकार का करार होता है जिसे कि विशेष परिस्थितियों में तोड़ा भी जा सकता है, परन्तु हिन्दू विवाह पति और पत्नी के बीच जन्म-जन्मांतरों का सम्बन्ध होता है जिसे कि किसी भी परिस्थिति में नहीं तोड़ा जा सकता। अग्नि के सात फेरे लेकर और ध्रुव तारे को साक्षी मानकर दो तन, मन तथा आत्मा एक पवित्र बंधन में बँध जाते हैं। हिन्दू विवाह में पति और पत्नी के बीच शारीरिक सम्बन्ध से अधिक आत्मिक सम्बन्ध होता है और इस सम्बन्ध को अत्यन्त पवित्र माना गया है।

विवाह संस्कार हिन्दू धर्म संस्कारों में त्रयोदश संस्कार हैं। विद्याध्ययन के पश्चात् विवाह करके गृहस्थाश्रम में प्रवेश करना होता है। यह संस्कार पितृ ऋण से उऋण होने के लिए किया जाता है। मनुष्य जन्म से ही तीन ऋणों से बँधकर जन्म लेता है-देव ऋण, ऋषि ऋण और पितृ ऋण। इनमें से अग्हिोत्र अर्थात् यज्ञादिक कार्यों से देव ऋण, वेदादिक शास्त्रों के माध्यम से ऋषि ऋण और विवाहित पत्नी से पुत्रोत्पत्ति आदि के द्वारा पितृ ऋण से उऋण हुआ जाता है।

हिन्दू धर्म में गृहस्थ की परिवार निर्माण की जिम्मेदारी उठाने के योग्य शारीरिक, मानसिक परिपक्वता आ जाने पर युवक-युवतियों का विवाह संस्कार कराया जाता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार विवाह कोई शारीरिक या सामाजिक अनुबन्ध मात्र नहीं है, यहाँ दाम्पत्य को एक श्रेष्ठ आध्यात्मिक साधना का भी रूप दिया गया है। इसीलिए कहा गया है, ''धन्यो गृहस्थाश्रम:।''

सृष्टि के आरम्भ में विवाह जैसी कोई प्रथा नहीं थी। कोई भी पुरुष किसी भी स्त्री से यौन-सम्बन्ध बनाकर संतान उत्पन्न कर सकता था। पिता का ज्ञान न होने मातृपक्ष को ही प्रधानता थी तथा संतान का परिचय माता से ही दिया जाता था। यह व्यवस्था वैदिक काल तक चलती रही। इस व्यवस्था को परवर्ती काल में ऋषियों ने चुनौती दी तथा इसे पाशविक सम्बन्ध मानते हुए नये वैवाहिक नियम बनाये। ऋषि श्रेतकेतु का एक सन्दर्भ वैदिक साहित्य में आया है कि उन्होंने मर्यादा की रक्षा के लिए विवाह प्रणाली की स्थापना की और तभी से कुटुम्ब-व्यवस्था का श्रीगणेश हुआ। आजकल बहुप्रचलित और वेदमंत्रों

द्वारा सम्पन्न होने वाले विवाहों को ब्रह्मविवाह कहते हैं।[3]

**हिन्दू विवाह की प्रकृति : एक धार्मिक संस्कार-** के.एम. कपाड़िया[4] ने अपनी पुस्तक "मैरिज एण्ड फेमिली इन इण्डिया", (1955) में हिन्दू विवाह को एक धार्मिक संस्कार के रूप में स्वीकार करते हुए कहा है कि हिन्दुओं में विवाह जन्म-जन्मान्तर तक चलते हैं। यह एक ऐसा अटूट सम्बन्ध है जो सामान्यतया टूटता नही है।

पी.एन. प्रभु[5] "हिन्दू सोशल आर्गेनाइजेश", (1954) में हिन्दू विवाह को एक संस्कार माना है। पी.एन. प्रभु ने हिन्दू विवाह के तीन उद्देश्य बताये हैं-

1. धर्म,
2. प्रजा,
3. रति।

डॉ. राजबली पाण्डेय[6] (हिन्दू संस्कार) (2013) में लिखा है, "हिन्दू विवाह एक धार्मिक तथा मानवीय संस्था है जिसका उद्देश्य दाम्पत्य जीवन में संयत मार्ग का अनुसरण करना है।" वेस्टर मार्क विवाह[7] पद्धति (1891) पर एक अधिकृत मानवशास्त्री समझे जाते हैं। हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन मेरिज में उन्होंने सिलसिले से दुनियाभर की विवाह पद्धतियों का विस्तृत विवेचन किया है। वे हिन्दू विवाह पर भी खुलकर लिखते हैं। स्थानीय स्तर पर कपाड़िया, इरावती कर्वे[8] (1990) आदि ने विवाह पद्धति पर आनुभाविक अध्ययन किये हैं। के.एस. सिंह[9] (1992) ने पीपल ऑफ इण्डिया में विवाह के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख तो किया है लेकिन उन्होंने विभिन्न एथनिक समूहों की विवाह पद्धतियों पर कोई खुलकर टिप्पणी नहीं की है।

लुई ड्यूमो[10] (1950) ने दक्षिण भारत में नातेदारी के क्षेत्र के विवाह की भूमिका पर जोर दिया है। उनके अध्ययन से दक्षिण भारतीय नातेदारी पद्धति में पीढ़ियों के दौरान अन्तर्विवाह की पुनरावृत्ति प्रकाश में आती है।

शोभिता जैन[11] "भारत में परिवार, विवाह और नातेदारी", (2017), इन्होंने अपने अध्ययन में परिवार, विवाह तथा नातेदारी के स्वरूप में तेजी से बदलाव के कई परिणामें का उल्लेख करते हैं।

एफ.जी. बेली (1957), ऑस्कर लेविस (1958), ए.सी. मायर (1960) के अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि वर पक्ष, वधू-पक्ष से ऊँचा होता है और सभी परिस्थितियों में उपहार देने का कर्त्तव्य वधू-पक्ष का होता है। इससे ज्ञात होता है कि भारत में अनुलोम विवाह, विवाह का मुख्य स्वरूप है और इस कारण वधू-पक्ष की तुलना में वर पक्ष हमेशा ऊँचा स्थान रखता है।

कैथलीन गफ[12] (1956) ने दक्षिण भारत की विवाह सम्बन्धी परम्पराओं एवं नियमों का अध्ययन किया एवं बताया कि पितृवंश परम्परा और विवाहजन्य सम्बन्धियों के बीच अन्तःक्रिया सौहार्द्रपूर्ण होती है।

Caste and Marriage in Urban Middle-Class India (2016) अमित आहूजा (Casi.Sas.upenn.edu) इन्होंने बताया कि आँकड़ों के अनुसार केवल 5 प्रतिशत भारतीय ही अन्तर्जातीय विवाह करते हैं। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि

वैवाहिक सम्बन्धों का आधार जातिगत है परम्परागत रूप में जाति से बाहर की जाने वाली शादी को अब तक सामाजिक स्वीकृति नहीं मिली है। (https^/casi.sas.upenn.edu-18 जुलाई 2016)

पी.वी. काणे "History of Dharmashastra"[13] (1962) इन्होंने अपनी पुस्तक में हिन्दू विवाह सम्पन्न होने के लिए 39 प्रमुख अनुष्ठानों एवं संस्कारों का उल्लेख किया है। इन धार्मिक कृत्यों को पूर्ण किये बिना हिन्दू विवाह सम्पन्न नहीं माना जाता। इससे यह स्पष्ट पता चलता है कि वैवाहिक जीवन में धर्म को प्रधानता दी गयी है।

**नगरीय विवाह-** नगरीय विवाह में संविदा के तत्वों की प्रधानता होती है। वैवाहिक सम्बन्धों में आबद्ध होने वाले लड़के-लड़कियाँ अधिकांश दशाओं में एक-दूसरे से परिचित होते हैं और सम्भव है कि उनका वैवाहिक सम्बन्ध उनके माता-पिता द्वारा गठिन न हो और उसे वे स्वयं गठित किये हों। व्यावसायिक विजातीयता, शैक्षिक समानताएँ और असमानताएँ आर्थिक स्थितियाँ जातीय बंधन, दूरियाँ, प्रजातियाँ, क्षेत्रीयता, धर्म, भाषायी, सद्भाव, पारिवारिक बाध्यताएँ आदि अनेक प्रतिबद्धताएँ नगरीय परिवेश में वैवाहिक सम्बन्धों में गठन का आधार व्यक्तिगत, स्वार्थ, स्वेच्छा, सम्पर्क, साहचर्य, साहस, आर्थिक, स्थायित्व, आर्थिक झुकाव, विशिष्ट ज्ञान अन्य अनेक कारक भी हो सकते हैं। कई विवाहों का गठन समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं, राजनैतिक विचारधाराओं, व्यावसायिक समानताओं, कार्य-दशाओं इत्यादि की समानता और साहचर्य से होता है।

**विवाह के स्वरूप में रूपान्तरण-** विश्व के नगरों में ही नहीं भारतीय नगरों में भी विवाह सम्बन्धी प्रथाएँ खत्म होने के कगार पर ही हैं। नगरों में विवाह मात्र एक शारीरिक सुख व इच्छापूर्ति मात्र बनकर रह गया है। अब तो सबसे बड़ी विडम्बना लिव-इन-रिलेशनशिप (बिना विवाह के साथ-साथ रहना) तथा समलैंगिक विवाह जैसी विडम्बनाएँ भारतीय नगरों में विवाह के स्वरूप को ही बदल कर रख दिया है। अब तो न्यायालय ने भी इसे अपनी स्वीकृति दे दिया है तथा संवैधानिक सुरक्षा प्राप्त होने से नगरों में विवाह के स्वरूप में विघटन होना प्रारम्भ हो गया है और यह अब अनग रूप धारण करता जा रहा है।

परम्परागत समाज में हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है, परन्तु आधुनिकीकरण एवं वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में हिन्दू विवाह की धार्मिक प्रवृत्ति में परिवर्तन हुआ है। आज विवाह धार्मिक कृत्यों की पूर्ति हेतु नहीं किया जाता है। तलाक को संवैधानिक एवं सामाजिक मान्यता मिल जाने के कारण हिन्दू विवाह बंधन अब अटूट नहीं रह गया है।

**नगरीय विवाह : विश्लेषणात्मक विवेचन-** विभिन्न समाजों में विद्यमान विवाह संस्था के अध्ययन से स्पष्ट है कि हिन्दू विवाह एक धार्मिक संस्कार है परन्तु आधुनिकीकरण, वैश्वीकरण एवं नगरीकरण के वर्तमान दौर में हिन्दू विवाह की धार्मिक प्रवृत्ति में परिवर्तन हुआ है। नगरीकरण एवं तार्किक व वैज्ञानिक दृष्टिकोण के प्रसार के कारण आज धर्म के प्रभाव में ह्रास हुआ है। फलत: विवाह अब धार्मिक कर्त्तव्य के पालन हेतु नहीं वरन् आनन्द एवं सहयोग के लिए किया जाने लगा है। आज पुत्र और पुत्री दोनों को समान महत्व देने के कारण पुत्र प्राप्ति विवाह का मुख्य उद्देश्य नहीं रह गया है। आज एक ऐसा वर्ग भी है उत्पन्न हो रहा है जो सन्तानोत्पत्ति को भी आवश्यक नहीं मानता। बहुलता में देखा जाए तो यौन

तृप्ति विवाह का मुख्य उद्देश्य अभी भी है, परन्तु कॉल गर्ल, विवाह पूर्व यौन सम्बन्ध, को-लिविंग इत्यादि के प्रचलन ने विवाह के इस उद्देश्य की प्रमुखता को भी कमजोर किया है। नर्सरी, किंडर-गार्डेन, किड्स केयर सेंटर, आया इत्यादि की विद्यमानता ने आज बच्चों के पालन-पोषण सम्बन्धी पक्ष को कमजोर किया है।

आज अन्तर्जातीय विवाह और प्रेम विवाह की घटनाएँ नगरीय समाज में देखी जाने लगी हैं। नगरों में आया आधुनिक खुलापन और पश्चिमी प्रभावों ने विवाह पूर्व यौन सम्बन्धों तथा सहजीवन के प्रचलन को सम्भव बनाया है। स्वीडन, नार्वे आदि पश्चिमी देशों की तर्ज पर यहाँ भी समलैंगिक विवाह को मान्यता प्रदान करने की माँग उठने लगी है। आज नगरों में विवाह का एक नया स्वरूप उभर रहा है। इस सम्बन्ध में दो प्रमुख प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं-प्रथम आज बहुत सारे पाश्चात्य समाजों में वैवाहिक सम्बन्ध बाद में कायम होता है और यौन एवं प्रजनन की प्रक्रिया पहले प्रारम्भ हो जाती है। नगरों में एक नई जीवन-शैली का शुरुआत हुआ है यहाँ प्रजनन के लिए विवाह को एक आवश्यक बंधन नहीं माना जा रहा है। नगरों में अक्सर देखने को मिलता है कि स्त्री और पुरुष लम्बे समय तक साथ रहते और सन्तानोत्पत्ति भी करते हैं, तत्पश्चात् वे यह विचार करते हैं कि दोनों को विवाह के बंधन में बँधना चाहिए या नहीं और कभी-कभी ऐसा भी होता है कि विवाह सम्पन्न होने के पहले ही वे एक-दूसरे से अलग हो जाते हैं। संक्षेप में यह कहा जा सकता है नगरों में आज विवाह से पूर्व ही परिवार का निर्माण हो रहा है या यह कहा जाय कि परिवार के निर्माण के लिए विवाह कोई जरूरी शर्त नहीं रह गई है।

दूसरी प्रमुख बात यह है कि नगरों में दो लड़कियाँ या लड़के आपस में विवाह करने लगे हैं। जिससे वहाँ एक नये किस्म के परिवार की उत्पत्ति हो रही है। इसे समलैंगिक विवाह के नाम से जाना जाता है। कुछ समाजशास्त्रियों ने इसे विलासी माता-पिता परिवार (Gay Parents Family) कहकर पुकारा है। आधुनिक शिक्षा और जागरुकता के कारण विलम्ब विवाह होने लगे हैं। आज विवाह को आजीवन बंधन मानने की प्रवृत्ति कमजोर हुई है, विवाह-विच्छेद को कानून व समाज द्वारा मान्यता मिल जाने से विवाह का स्थायित्व दुष्प्रभावित हुआ है और तलाक दर में वृद्धि हुई है। आज अन्तर्विवाह और बहिर्विवाह के नियम कमजोर हुए हैं तथा जीवनसाथी के चुनाव में माता-पिता की भूमिका घटी है। आज विवाह सम्बन्धी रीति-रिवाजों और रस्मों का आधुनिकीकरण हो रहा है इसमें इंटरनेट, अखबारों व संचार के अन्य साधनों का प्रयोग किया जा रहा है तथा शादी के पहले भी लड़कियाँ, लड़कों से मिल रही हैं। पश्चिमी समाज के डेटिंग के तर्ज पर विवाह के पूर्व मिलकर अपने जीवन साथी की उपयुक्तता जाँचने की प्रवृत्ति बढ़ रही है।

उपरोक्त परिवर्तनों के बावजूद परस्पर विश्वास तथा जीवनसाथी के बीच प्रतिबद्धता पहले भी विवाह का मूल तत्व था और आज भी है। वर्तमान में विभिन्न कारणों से धार्मिक प्रभाव में कमी अवश्य हुई है, परन्तु अभी भी विवाह का एक धार्मिक संस्कार के रूप में महत्व बना हुआ है। आज भी विवाह संस्कार, हिन्दू सामाजिक संगठन का एक महत्वपूर्ण पक्ष है और अधिकांश विवाह धार्मिक रीति-रिवाजों के अनुसार ही सम्पन्न किये जाते हैं। प्रेम विवाह, को-लिविंग या समलैंगिक विवाह, विवाहों के धार्मिक पक्ष पर प्रश्न चिन्ह लगाती तो हैं, परन्तु यह सीमित परिघटना है। सामान्य रूप से विवाह का धार्मिक पक्ष

आज भी महत्वपूर्ण है और जब तक विवाह केवल यौन सन्तुष्टि के उद्देश्य हेतु नहीं किया जायेगा बल्कि साथ रहने तथा संतान प्राप्ति के लिए भी किया जायेगा तब तक यह विवाह धार्मिक संस्कार के रूप में बना रहेगा, भले ही विवाह के धार्मिक पक्षों का आधुनिकीकरण हो जाये।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Maciver, R.M. and Page, (1972), Society, Macmillan Company of India Limited, New Delhi.
2. Cooley, C.H., (1909), Social Organization, New Brunswick (USA) and London (UK) Transaction Publishers.
3. https://m.punjabkesari.in/dharm/news/article-356939?amp=
4. Kapadia, K.M., (1955), Marriage and Family in India, Oxford University Press, Bombay.
5. Prabhu, P.H., (1940), Hindu Social Organization, Popular Prakashan Pvt. Ltd.
6. Pandey, Rajbali, (2013), Hindu Samskaras: Socio-Religious Study of the Hindu Sacraments, Motilal Banarasidas Publishers.
7. Westernmarck, Edward, (1891), The History of Human Marriage, Macmillan, London.
8. Karve, Irawati, (1990), Kinship Organisation in India, Mushi Ram Manohar Lal Publishers Pvt. Ltd., New Delhi.
9. Singh, K.S., (1992), People of India, Calcutta: Anthropological Survey of India.
10. Dumont, Louis, (1950), "Kinship and Alliance among the Primitive Culture", The Eastern Anthropologists.
11. Jain, Shobhita, (2017), Bharat Mein Parivar, Vivah Aur Natedari, Rawat Publications, New Delhi.
12. Kathleen, Gough, (1956), "Brahmin Kinship in a Tamil Village", Eastern Anthropologists.
13. Kane, P.V., (1962), History of Dharma Shastra, Bhandarkar Oriented Research Institute Publishers.
14. Ghurye, G.S., (1946), "Some Kinship Usages in Indo-Aryan Literature", Journal of Anthropological Society of Bombay, New Serics (1).

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# पर्यावरण संरक्षण की वर्तमान प्रवृत्तियाँ

• कुमुद श्रीवास्तव

**सारांश- पर्यावरण एवं आर्थिक विकास के विचार से भारत में स्वच्छ भारत मिशन के माध्यम से राज्यों एवं संघ राज्य क्षेत्रों में अवशिष्ट प्रबंधन के अवसंरचना को भी मजबूत किया जा रहा है। प्लास्टिक कचरे एवं अन्य कचरे के प्रभावी क्रियान्वयन के लिये समन्वित प्रयास करने के लिये एक राष्ट्रीय स्तर पर कार्यबल गठित कर कार्य को संपादित किया जा रहा है। बैटरी अपशिष्ट एवं ई-कचरा प्रबंधन द्वारा पर्यावरण को सुरक्षित करने के प्रयास किये जा रहे हैं।**

**मुख्य शब्द - पर्यावरण, प्लास्टिक अवशिष्ट प्रबंधन, ई-कचरा प्रबंधन**

अर्थशास्त्र में पर्यावरण से आशय मनुष्य के चारों ओर के प्राकृतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक व सांस्कृतिक वातावरण से है। मनुष्य अपने जीवन निर्वाह, अस्तित्व एवं विकास के लिये प्राकृतिक पर्यावरण से कच्चा माल एवं अन्य वस्तुएं प्राप्त करता है। इस प्रकार आर्थिक पर्यावरण का विकास होता है जिसमें वे सभी तथ्य सम्मिलित होते हैं जो प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से मानव के आर्थिक जीवन को प्रभावित करते हैं। वेबस्टर शब्द कोष के अनुसार ''पर्यावरण से अभिप्राय उन घेरे रहने वाली परिस्थितियों, प्रभावों एवं शक्तियों से है जो प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक दशाओं के समूह द्वारा व्यक्ति अथवा समुदाय के जीवन को प्रभावित करते हैं। पर्यावरण से तात्पर्य मनुष्य के चारों ओर के प्राकृतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण से है जो उसके आर्थिक जीवन एवं प्रक्रियाओं को प्रभावित करता है।

आर्थिक सम्पन्नता एवं विकास मुख्यतः पर्यावरण पर निर्भर करता है। उपयुक्त प्राकृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण देश के आर्थिक विकास को गति देता है और समृद्धि का मार्ग प्रशस्त करता है, किन्तु यदि पर्यावरण अनुकूल नहीं है तो देश को गरीबी, बेकारी, भुखमरी तथा अशान्ति की स्थितियों का सामना करना पड़ता है। आर्थिक पर्यावरण को प्रभावित करने वाले अनेक तत्व होते हैं, जैसे प्राकृतिक संसाधन, मानवीय संसाधन, सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्थाएं, तकनीकी विकास, आर्थिक प्रणाली, बाजार की स्थितियां, सरकार की नीतियां, आर्थिक नियम, अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियां, अधोसंरचना आदि। किसी भी देश के आर्थिक पर्यावरण पर अनेक भौतिक एवं मानवीय तत्वों का प्रभाव पड़ता है। जहां कुछ तत्व आर्थिक पर्यावरण को तेजी से विकास करने की दिशा में प्रोत्साहित करते हैं वहीं कुछ तत्व विकास के मार्ग में बाधक सिद्ध होते हैं। यहां

• **प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म. प्र.)**

यह भी उल्लेखनीय है कि आर्थिक पर्यावरण को प्रभावित करनेवाले तत्वों की प्रकृति परिवर्तनशील होती है तथा समय के साथ-साथ ये तत्व बदलते रहते हैं।

**प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन-** भारत एक बार इस्तेमाल होने वाले प्लास्टिक के ढेर से होने वाले प्रदूषण को कम करने के लिये प्रतिबद्ध है। आवास और शहरी मामलों के मंत्रालय द्वारा जारी प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन की रिपोर्ट के अनुसार, प्रति व्यक्ति प्लास्टिक की खपत का वैश्विक औसत 28 किलोग्राम है, और भारत में प्रति व्यक्ति प्लास्टिक की खपत 11 किलोग्राम है। हालांकि, देश में प्लास्टिक कचरे के कारण होने वाले प्रदूषण को कम करने के प्रयास के रूप में, पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार ने दिनांक 12 अगस्त 2021 को प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन संशोधन नियम, 2021 को अधिसूचित किया। दिनांक 1 जुलाई को 2022, पूरे देश में चिन्हित एकल- उपयोग वाली उन प्लास्टिक वस्तुओं के निर्माण, आयात, स्टॉकिंग, वितरण, बिक्री और उपयोग पर प्रतिबंध लगाया गया था, उनकी उपयोगिता कम और अधिक कूड़ेदान बनाने की संभावना है। ये उपाय सर्कुलर अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देंगे, प्लास्टिक पैकेजिंग के प्लास्टिक पदचिन्ह को कम करेंगे, प्लास्टिक पैकेजिंग के नए विकल्पों के विकास को बढ़ावा देंगे और व्यवसायों द्वारा स्थायी प्लास्टिक पैकेजिंग की ओर बढ़ने के लिये और कदम उठाएंगे।

**वर्ष 2022 में कुछ प्रमुख घरेलू विनियामक कार्रवाइयां की गई-** पर्यावरण, वन और जलवायु मंत्रालय ने दिनांक 16 फरवरी 2022 को प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन संशोधन नियम, 2022 के माध्यम से प्लास्टिक पैकेजिंग के लिये विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व संबंधी दिशा निर्देशों को अधिसूचित किया गया। दिनांक 16 फरवरी 2022 को अधिसूचित प्लास्टिक पैकेजिंग पर विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ई.पी.आर.) पर दिशा निर्देशों की मुख्य विशेषताएं रही -

- एक केन्द्रीकृत ऑनलाइन पोर्टल के माध्यम से उत्पादकों, आयातकों और ब्रांड मालिकों (पी.आई.बी.ओ.) और प्लास्टिक अपशिष्ट प्रोसेसर (पी.डब्ल्यू.पी) का अनिवार्य पंजीकरण।
- प्लास्टिक पैकेजिंग की चार श्रेणियों का कवरेज अर्थात् कठोर, लचीला, बहुस्तरीय प्लास्टिक पैकेजिंग और खाद्य योग्य प्लास्टिक पैकेजिंग।
- ई.पी.आर. के लिये स्पष्ट परिभाषित लक्ष्य
- कठोर प्लास्टिक पैकेजिंग के पुनः उपयोग के लिये अनिवार्य लक्ष्य, प्लास्टिक कचरे के पुनर्चक्रण का न्यूनतम स्तर और प्लास्टिक पैकेजिंग में पुनर्नवीनीकरण प्लास्टिक सामग्री का उपयोग।
- ई.पी.आर. के कार्यान्वयन का समर्थन करने के लिये केन्द्रीकृत ऑनलाइन पोर्टल।
- अधिशेष ई.पी.आर. प्रमाण पत्रों की बिक्री और खरीद के लिये प्रवधान।
- ई.पी.आर. दायित्वों को पूरा न करने पर पर्यावरणीय मुआवजे की वसूली और बाध्य संस्थाओं के सत्यापन, लेखा परीक्षा और निगरानी के लिये प्रावधान।

6 जुलाई 2022 को प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन (दूसरा संशोधन) नियम,

2022 अधिसूचित किया गया था। संशोधन नियमों को प्लास्टिक पैकेजिंग के लिये विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व पर दिशा निर्देशों के अनुरूप बनता है। संशोधन बी.आई.एस. मानकों और केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सी.पी.सी.बी) प्रमाणन के अनुरूप बायोडिग्रेडेबल प्लास्टिक के लिये एक वैधानिक ढांचा है। नियमों यह अधिदेशित किया गया है कि केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा अधिसूचित दिशा-निर्देशों के अनुसार, इन नियमों के प्रावधानों का पालन नहीं करने वाले व्यक्तियों पर प्रदूषण भुगतान सिद्धांत के आधार पर पर्यावरणीय क्षतिपूर्ति लगाई जायेगी। स्वच्छ भारत मिशन के माध्यम से राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में अपशिष्ट प्रबंधन के अवसंरचना को भी मजबूत किया जा रहा है। सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों ने एकल उपयोग प्लास्टिक को खत्म करने और प्लास्टिक अपशिष्ट प्रबंधन को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिये एक विशेष कार्य दल का गठन किया है नियम 2016 पर्यावरण वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा चिन्हित एकल उपयोग वाली प्लास्टिक वस्तुओं को खत्म करने और प्लास्टिक कचरे के प्रभावी कार्यान्वयन के लिये समन्वित प्रयास करने के लिये एक राष्ट्रीय स्तर के कार्यबल का गठन किया गया है। दिनांक 2 मार्च 2022 को नैरोबी में आयोजित पांचवी संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सभा में पुनः सत्र में "प्लास्टिक प्रदूषण को समाप्त करे, एक अन्तर्राष्ट्रीय कानूनी रूप से बाध्यकारी साधन की ओर" एक संकल्प अपनाया गया। भारत प्लास्टिक प्रदूषण पर वैश्विक कार्रवाई चलाने के संकल्प पर आम सहमति बनाने के लिये सभी सदस्य देशों के साथ रचनात्मक रूप से जुड़ा हुआ है। भारत के आग्रह पर, विकासशील देशों को अपने विकास पथ का पालन करने की अनुमति देने के लिये संकल्प पाठ में प्लास्टिक प्रदूषण से निपटते समय राष्ट्रीय परिस्थितियों और क्षमता के सिद्धांत को शामिल किया गया था।

**बैटरी अपशिष्ट प्रबंधन-** सरकार ने दिनांक 24 अगस्त 2022 को बैटरी अपशिष्ट प्रबंधन नियम, 2022 प्रकाशित किया, ताकि बेकार बैटरियों का पर्यावरणीय रूप से उचित प्रबंधन सुनिश्चित किया जा सके। इन नियमों को अधिसूचित करना चक्रीय अर्थव्यवस्था को बढ़ावा देने की दिशा में एक परिवर्तनकारी कदम है। नए नियम बैटरी (प्रबंधन और हैंडलिंग) नियम, 2001 की जगह लेंगे। इस नियम में सभी प्रकार की बैटरी शामिल है, जैसे इलेक्ट्रिक वाहन बैटरी, पोर्टेबल बैटरी, ऑटोमोटिव बैटरी और औद्योगिक बैटरी। विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ई.पी.आर.) की अवधारणा पर आधारित नियम कार्य करते हैं, जहां बैटरी के निर्माता (आयातकों सहित) अपशिष्ट बैटरी के संग्रह और पुनर्चक्रण/नवीनीकरण और कचरे से नई बैटरी में बरामद सामग्री के उपयोग के लिये जिम्मेदार होते हैं। ई.पी.आर. यह अधिदेशित करता है कि सभी अपशिष्ट बैटरियों को एकत्र किया जाए और उन्हें पुनर्चक्रण/नवीनीकरण के लिये भेजा जाए, लैंडफिल और भस्मीकरण में निपटान पर रोक लगाई जाए। ई.पी.आर. दायित्वों को पूरा करने के लिये, निर्माता बेकार बैटरियों को इकट्ठा करने, रिसाइकल करने या नवीनीकरण करने के लिये खुद को जोड़ सकते हैं या किसी अन्य संस्था को अधिकृत कर सकते हैं।

**ई-कचरा प्रबंधन-** सरकार ने दिनांक 2 नवम्बर 2022 को ई-कचरा (प्रबंधन) नियम,

2022 को अधिसूचित किया। ये नियम ई–कचरा (प्रबंधन) नियम, 2016 की जगह लेंगे और दिनांक 1 अप्रैल 2023 से प्रभावी होंगे। ये नियम ई–कचरापुनर्चक्रण के लिये एक नया विस्तारित उत्पादक उत्तरदायित्व (ई.पी.आर.) व्यवस्था शुरू करेंगे। नये नियमों की मुख्य विशेषताएं –

- सी.पी.सी.बी. से पंजीकृत प्रत्येक विनिर्माता, निर्माता, नवीनीकरणकर्ता, भंजक और पुनर्चक्रणकर्ता लागू, कोई भी संस्था पंजीकरण के बिना व्यवसाय नहीं करेगी और न ही किसी अपंजीकृत इकाई के साथ किसी प्रकार की डील करेगी।
- अब एक ऑनलाइन पोर्टल के माध्यम से पंजीकरण द्वारा प्राधिकार प्रतिस्थापित किया गया है, और केवल विनिर्माताओं, उत्पादकों, नवीनीकरणकर्ताओं और पुनर्चक्रणकर्ताओं को पंजीकरण की आवश्यकता है।
- अनुसूची–1 का विस्तार किया गया है, और अब 106 इलेक्ट्रिकल और इलेक्ट्रॉनिक उपकरण (ई.ई.ई.) को ई.पी.आर. व्यवस्था के तहत शामिल किया गया।
- सौर पी.वी. मॉडयूल/पैनल/सेल का प्रबंधन नए नियमों में जोड़े गये हैं।
- झूठे दावों से बचने के लिये फनर्चक्रित मात्रा की गणना अंतिम उत्पादों के आधार पर की जाएगी।
- ई.पी.आर.प्रमाण पत्र तैयार करना और लेन–देन का प्रावधान शुरू किया गया है।
- पर्यावरण क्षतिपूर्ति और सत्यापन और लेखा परीक्षा के प्रावधान शुरू किये गये हैं।

इन नियमों के तहत ई.ई.ई. के विनिर्माण में खतरनाक पदार्थों को कम करने का प्रावधान किया गया है। इसमें यह अधिदेश दिया गया है कि ई.ई.ई. और उनके संघटकों के प्रत्येक निर्माता को यह सुनिश्चित करना होगा कि उनके उत्पादों में सीसा, पारा और अन्य खतरनाक पदार्थ अधिकतम निर्धारित मात्रा से अधिक न हो। यह ई–अपशिष्ट के विखंडन और पुनर्चक्रण में शामिल श्रमिकों की पहचान और पंजीकरण, कौशल विकास, निगरानी और सुरक्षा और स्वास्थ्य सुनिश्चित करने के लिये भी प्रदान करता है।

**निष्कर्ष एवं सुझाव-** भारत दुनिया के सबसे महत्वाकांक्षी स्वच्छ ऊर्जा परिवर्तनों में से एक का नेतृत्व कर रहा है और जलवायु परिवर्तन का सामना करने की अपनी प्रतिबद्धता में दृढ़ बना हुआ है। अर्थव्यवस्था पर कोविड–19 के प्रतिकूल प्रभावों के बावजूद, भारत ने अपनी जलवायु आकांक्षा को कई गुना बढ़ा दिया है और बहु–आयामी दृष्टिकोण अपनाकर कम जी.एच.जी. उत्सर्जन विकास रणनीति की दिशा में एक दीर्घकालिक रणनीति शुरू की है।

हरित हाइड्रोजन जैसे होनहार तकनीकी नवाचारों को लागू करने के लिये पारिस्थितिकी तंत्र में सुधार करने के उद्देश्य से ऊर्जा संक्रमण योजना को कई नीतियों द्वारा पूरा किया गया है। देश ने नई तकनीक के विकास और इसे अपनाने में सहायता के लिये विनियामक मानकों को लगातार आशोधित/संशोधित किया है और नीति–स्तरीय

हस्तक्षेपों को अपनाया है। ऊर्जा परिवर्तन पर भारत की प्रगति को इस तथ्य से समझा जा सकता है कि इसने अपने अद्यतन एन.डी.सी. में अपने गैर-जीवाश्म ईंधर आधारित स्थापित क्षमता लक्ष्य को 50 प्रतिशत तक बढ़ा दिया है क्योंकि पहले एन.डी.सी. के 40 प्रतिशत का लक्ष्य काफी पहले ही प्राप्त कर लिया गया था। संधारणीयता मानकों के अनुरूप शीर्ष सूचीबद्ध 100 कंपनियों को करके प्रारंभिक कदमों से स्थायी वित्त ढांचा भी विकसित हुआ है। अब अनिवार्य आधार पर आवश्यकता को न केवल 1000 शीर्ष सूचीबद्ध कंपनियों तक बढ़ाया गया है, बल्कि भारत के विशिष्ट संदर्भ को ध्यान में रखते हुये स्थिरता मानकों को भी अधिक मजबूत और आंकलन करने योग्य बना दिया गया है जो सर्वोत्तम प्रथाओं के अनुरूप है।

संसाधनों का प्रतिस्पर्धात्मक उपयोग हुआ है, और विकास रणनीतियां प्रतिस्थापन योग्य नहीं होती है। विकास मार्ग में संशोधन की एक संक्रमण लागत है, जिसमें सामाजिक और आर्थिक लागते शामिल है। भारत की जलवायु आकांक्षाओं के लिये संसाधनों की आवश्यकता है जो देश के विकास लक्ष्यों के लिये आवश्यक संसाधनों के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन के कारणों के लिये समर्पित हों। सामाजिक-आर्थिक विकास के उद्देश्यों और आकांक्षाओं को खतरे में न डालते हुये, जलवायु संबंधी दायित्वों का जलवायु वित्त, प्रौद्योगिकी और महत्वपूर्ण खनिजों जैसे निवेशों की समय पर उपलब्धता के साथ मिलान किया जाना चाहिए। यहां तक कि अगर भारत ने अब तक अपने दम पर जलवायु कार्रवाही की है, तो बड़े पैमाने पर जलवायु उपायों की बढ़ती हुई उम्मीदों को वित्त, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण और क्षमता निर्माण सहायता सहित कार्यान्वयन के साधन प्रदान करने के मामले में विकसित देशों द्वारा की गई पहल के बराबर होना चाहिए। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि वैश्विक जलवायु एजेंडा तभी आगे बढ़ेगा जब उन्नत देश उन नीतिगत और व्यवहारिक परिवर्तनों के उदाहरण प्रस्तुत करेंगे जो देश उनके परोक्ष रूप में काम करते हैं और जिनके ट्रेड-ऑफ अच्छी तरह से पहचाने जाते हैं और उनके लोगों द्वारा स्वीकार किये जाते हैं। इसके बाद उपयुक्त अनुकूलन के साथ विकासशील देशों में परिवारों की ऐसी नीतियों और व्यवहारिक अपेक्षाओं के सफल होने की उम्मीद करना यथार्थवादी हो सकता है। पर्यावरण का संरक्षण करने हेतु सरकार के द्वारा बनाई गई नीतियों को यदि पूरी तरह से क्रियान्वित करने के पश्चात ही पर्यावरण को सुरक्षित रखकर आर्थिक गतिविधियों को संपादित कर आर्थिक विकास के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


- Economic survey 2022-23 Finance Ministery Government of India North Block.
- ISFR - 2021, https://fsi.nic.in/forest-report 2021-detail.
- World Economic outlook, October 2021, Ch.1 World Economic outlook, October 2021: Recovery During A Pandemic (imf.org.)

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# जनजातीय समाज में महिला सशक्तिकरण : एक ऑकलन

•मीनू कुमारी
••आभा सक्सेना

**सारांश- सशक्तिकरण के सन्दर्भ में जब हम आधुनिक सभ्य समाज के साथ जनजातीय समाज की महिलाओं के अधिकारों का सूक्ष्म विश्लेषण करते हैं तो यह द्रष्टव्य होता है कि कई जगह पर जनजातीय महिलाएँ शहरी महिलाओं से अधिक सशक्त हैं। कार्य सम्पादन की शैली अपेक्षाकृत अधिक शारीरिक श्रम करने कृषि सामर्थ्य कार्यों में संलग्नता, आय के स्रोत पर अधिकार, जनजातीय सामूहिक चेतना, जनजातीय पंचायतों का हस्तक्षेप आदि ऐसे अनेक कारक हैं, जिन्होंने जनजातीय महिलाओं के अधिकार क्षेत्र को मजबूत बनाया है, वहीं आधुनिकीकरण के प्रभाव ने पुरुष प्रधानता को जनजाति समाजों में भी लागू किया है। पुरुषों के मद्यपान अकर्मण्यता की प्रवृत्ति, आलस्य की मानसिकता पुरुष वर्चस्व इत्यादि का नकारात्मक प्रभाव जनजाति महिलाओं को भी आच्छादित कर रहा है। सभ्य समाज में जुड़ने की बलवती इच्छा ने जनजातीय महिलाओं को भी नगरीय संस्कृति का अंग बनाने की दिशा में पहल की है। यह दोनों परिस्थिति जनजाति महिलाओं के समक्ष एक संक्रमणकालीन स्थिति उत्पन्न करती है, जो विभिन्न प्रकार की चुनौती व नवीन सम्भावनाओं को उत्पन्न कर रही है, भविष्य में जिनका सामना जनजातीय महिलाओं को करना पड़ेगा।**

**मुख्य शब्द - जनजातीय समाज, महिला सशक्तिकरण, आधुनिक, सभ्य, अधिकार**

महात्मा गांधी ने "मेरे सपनों का भारत" में लिखा है कि, "स्त्री पुरुष की सहचरी है, उनकी मानसिक शक्तियाँ पुरुषों से कम नहीं हैं, उसे पुरुष के हर कार्य में हाथ बँटाने का हक है, और आजादी का उसे उतना ही अधिकार है, जितना पुरुष को अपने क्षेत्र में है उनकी सर्वोच्चता उसी प्रकार स्वीकार करनी चाहिए, जिस प्रकार पुरुषों की उनके क्षेत्र में स्वीकार की जाती है। जीवन की योजना में जितना और जैसा अधिकार पुरुष को अपने भविष्य की रचना का है, उतना और वैसा ही अधिकार स्त्री को भी अपना भविष्य तय करने का है।"[1]

महिला सृष्टि का आधार मानी जाती है, किसी भी देश की आधी आबादी महिला होती है, वह अपने सम्पूर्ण जीवन में अनेक रिश्ते निभाती है, तथा उनका सम्मान करती है।

• शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी
•• प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, श्री अग्रसेन कन्या पी.जी. कॉलेज, वाराणसी

महिला-पुरुष दोनों ही एक दूसरे के पूरक होते हैं, जिन्हें हमेशा साथ-साथ चलना होता है। यह दोनों मिलकर अपनी जिन्दगी को आगे बढ़ाते हैं।

जनजाति महिलाएँ वह हैं जो भौगोलिक रूप से पिछड़े हुए क्षेत्र में निवास करती है, जिसकी संस्कृति, रीति-रिवाज तथा व्यवहार के तरीके आदिम विशेषताओं से युक्त होते हैं। यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पिछड़ी हुई होती हैं।

जनजाति का अर्थ एक ऐसे मानव समूह से समझा जाता है, जिसकी संस्कृति रीति-रिवाज तथा व्यवहार के तरीके आदिम विशेषताओं से युक्त होते हैं, तथा यह जनजाति सभ्य समाज की चमक-दमक से दूर किसी दुर्गम या भौगोलिक रूप से पिछड़े हुए क्षेत्र में जीवन व्यतीत करने वाला समूह है, तथा इनकी सांस्कृतिक विशेषताएँ भी दूसरे समुदाय से भिन्न होती हैं।

आर्य भारत में जिस जनजाति के रूप में आये थे, उसका स्वरूप ग्रामीण था, केवल पुरुषों के इस समूह में एक भी स्त्री नहीं थी। नदी किनारे, जंगलों, पर्वतों, घाटियों में अपने पशुओं सहित ये निवास करने लगे और इन्होंने वहाँ की जनजाति लड़कियों से विवाह करके परिवार बसाये। उन्होंने जनजाति पुरुषों को अपना गुलाम बनाया और पितृसत्तात्मक परम्परा का निर्वाह करने लगे। भारत की पूरी आबादी का 8वाँ हिस्सा जनजाति है। हर 8 भारतीयों में एक व्यक्ति जनजाति है। जनजाति महिलाओं का सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और सामयिक परिवेश में महत्व कहीं अधिक है। फिर भी शिक्षा के क्षेत्र में इनका प्रतिशत शून्य है।

कई जनजातियों में आज भी मातृसत्तात्मक है। सामाजिक सत्ता स्त्री के हाथों में है। इनका गोत्र भी माँ के नाम से ही चलता है। यह स्थिति पूर्वोत्तर के अन्य राज्यों में भी है। स्त्रियों का यहाँ वर्चस्व है तथा सारी सम्पत्ति पर बेटियों का अधिकार है, फिर भी फैसलों के मामले में परिवार के माता और पिता पर निर्भर रहते हैं। बाजार पर स्त्रियों का ही आधिपत्य रहता है। चूँकि महिलाएँ श्रम से जुड़ी हुई हैं, इसलिए वह आर्थिक रूप से स्वतंत्र हैं, यही कारण है कि वह अपना निर्णय लेने के लिए भी आजाद हैं। अर्थ का तंत्र उनके हाथों में इसलिए आर्थिक रूप से वे ही परिवार की धुरी हैं।

जनजातीय समाज में कुछ पम्पराएँ महिलाओं के हित में भी है। उन्हें दहेज के लिए प्रताड़ित नहीं किया जाता। विवाह और तलाक को लेकर भी उनके अपने अधिकार हैं। वे पुरुषों के साथ खेती, जंगल, पशुपालन आदि कार्यों में बराबरी का हिस्सा होती हैं। हाँबहाऊस ने सामाजिक मानवशास्त्र में बताया है कि "जनजाति समाजों में स्त्रियों की स्थिति अच्छी है। जो पशुपालक या कृषक नहीं हैं। 87.5 प्रतिशत पशुपालक जातियाँ तथा 73.03 प्रतिशत कृषक जनजातियों में स्थिति निम्न है।"[2] यदि कोई स्त्री अपनी पसन्द से किसी से भी विवाह कर लेती है, तो माता-पिता या परिवार उसका बहिष्कार नहीं करता, इसके साथ ही यहाँ दहेज जैसी कोई प्रथा नहीं है, जिसमें अनाज तथा धन होते हैं या फिर जमीन के रूप में हो सकता है। कोई भी स्त्री अगर अपने विवाह से सुखी नहीं है, तो वह उस रिश्ते को निभाने के लिए बाध्य नहीं की जा सकती। इनके समाज में पुनर्विवाह की आजादी है, जिसमें जो भी उसका दूसरा पति होगा, वह उस महिला का वधूमूल्य उसके पूर्व पति को लौटा देता है, और यही वजह है कि जनजातीय समाज में लड़की को बोझ नहीं समझा जाता है।

जनजातियों में आज भी पति-पत्नी के बीच सम्बन्ध-विच्छेद होते हैं। मामूली बातों को लेकर पत्नी अपने पति को अलविदा कह देती है। बस उसे दावा बूँदी प्रथा के अनुसार अपना फैसला पंचों को बताना होता है। पंच पूर्व पति को विवाह में आये खर्च का भुगतान करवाकर एक बैठक में किसी फलदार वृक्ष की लकड़ी को दोनों पक्षों से तुड़वा देते हैं। तब मान लिया जाता है कि इनके बीच कोई बराबर का रिश्ता नहीं रहा।

जनजाति स्त्री दोबारा विवाह तो कर सकती है, परन्तु सादे तरीके से जबकि पुरुष चाहे जितनी शादी करे धूमधाम से ही करता है। स्त्री का दूसरा विवाह करने पर कुछ रीति-रिवाज बदल जाते हैं। स्त्री का अपने पिता की सम्पत्ति पर कोई अधिकार नहीं होता, बल्कि उसके जन्म से ही एक जमीन का टुकड़ा उसके नाम कर दिया जाता है, उसी से उसका भरण-पोषण तथा विवाह का खर्च उठाया जाता है। विवाह के उपरान्त वह जमीन भाइयों को सौंप दी जाती है। जनजातियों में पति की मृत्यु के पश्चात् स्त्री अपने देवर से विवाह कर सकती है, यदि देवर अविवाहित है तो उसे पहले किसी अन्य स्त्री से विवाह करना होता है।

जनजातियों के समाज में स्त्री की जो पहले स्थिति थी, अब वह नहीं रही, उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। सम्पत्ति पर अब उन्हें कोई अधिकार नहीं है। धार्मिक मामलों में भी उन्हें बाहर रखा जाता है। निर्णय लेने में भी उनकी अब कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं रही। वैसे जनजाति स्त्रियाँ सदियों से अपने प्रति हो रहे शोषण के खिलाफ लड़ रही हैं। जनजाति स्त्रियाँ प्रगतिशील हैं, निरन्तर संघर्षरत हैं। इसका प्रमाण जनजाति स्त्रियों के पर्यावरण संरक्षण से जुड़े बड़े आन्दोलनों में सहज ही देख सकते हैं।

कमला भसीन ने एक बार प्रेस को सम्बोधित करते हुए कहा कि, ''विश्व के परिदृश्य में सबसे ज्यादा पुरुष तथा महिलाओं में समानता जनजाति समाज में है। वर्ष 1901 से लगातार महिलाओं की प्रतिशत में कमी आई है, परन्तु जनजाति समाज की स्थिति अच्छी रही है। आज भी महिलाओं को वह अधिकार नहीं मिला, जो उन्हें मिलना चाहिए। आज भी भ्रूण हत्या, महिलाओं का शोषण एवं प्रताड़ना जारी है। जबतक इन सबकी समाप्ति नहीं होती, तब तक पूर्ण आजादी नहीं हो सकती।''[3]

आज जनजातियों में बड़ी संख्या में एनीमिक महिलाएँ हैं। 31 मार्च, 2015 तक अखिल भारतीय स्तर पर जनजातीय क्षेत्रों में 6796 उपकेन्द्रों, 1267 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और 309 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की कमी है।[4]

**आधुनिकीकरण का जनजातीय महिलाओं पर प्रभाव-** एक लम्बे समय तक परम्परागत जीवन व्यतीत करने के बाद 20वीं शताब्दी के आरम्भ से ही जनजातीय समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया आरम्भ होने लगी। यह परिवर्तन आधुनिकीकरण के द्वारा उनके सामाजिक संरचना, सामाजिक संगठन, सामाजिक सम्बन्धों तथा मूल्यों और मनोवृत्तियों में देखे गये।

भारत की अधिकांश जनजातियाँ परम्परागत रूप से उन क्षेत्रों में निवास करती रही हैं जो बाहरी समूहों से अलग थे, लेकिन स्वतंत्रता के बाद देश के सभी हिस्सों को सड़कों के द्वारा जोड़ा जाने लगा तथा देश के सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए सभी भागों में विकास कार्यक्रम लागू किये जाने लगे, तब अधिकांश जनजातियाँ बाहरी समूहों के सम्पर्क में आने लगीं।

जनजातीय क्षेत्रों में विभिन्न सरकारी विभागों की स्थापना होने से तथा विभिन्न उद्योगों और वनों से प्राप्त होने वाली वस्तुओं के व्यापार के फलस्वरूप जनजातीय क्षेत्रों में सांस्कृतिक मिश्रण की एक नई दिशा उत्पन्न हो गयी। इनका जीवन काफी कुछ परम्परागत था, बाह्य समूहों की सांस्कृतिक विशेषताओं, वेशभूषा और व्यवहार प्रतिमानों में आधुनिकता के लक्षण दिखने लगे। "बिहार में केवल धनबाद जिले में ही सन् 1951 तथा 1961 के बीच नगरीय जनसंख्या में लगभग 300 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जिसका कारण धनबाद के चारों ओर लगे हुए क्षेत्रों से जनजातीय लोगों का बसना था।"[5] आधुनिकीकरण का जनजातीय समाज पर सामाजिक संरचना में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। जनजातीय जीवन के बदलते परिवेश मुख्य रूप से प्रभावित हुए हैं।

**वैवाहिक परम्पराओं में परिवर्तन-** जनजातियों में विवाह संस्था में परिवर्तन हुए हैं। पहले पुरुषों की तुलना में स्त्रियों के पास वैवाहिक अधिकार ज्यादा थे, जिसमें महिला अपने पसन्द के आधार पर विवाह कर सकती थी, जनजाति समाज में विवाह के अवसर पर दहेज का कोई प्रचलन नहीं था, परन्तु अब जनजातियों में भी दहेज का प्रचलन प्रारम्भ हो गया है। जनजाति संस्कृति के अनुसार जहाँ विवाहित स्त्रियों पर अतिरिक्त यौन सम्बन्ध स्थापित करने पर विशेष नियंत्रण नहीं था, वहीं आज इसे सामाजिक अपराध के रूप में देखा जाने लगा।

**स्त्रियों के अधिकारों में कमी-** परम्परागत रूप से अधिकांश जनजातियाँ या तो मातृसत्तात्मक थीं,, या किसी न किसी रूप में सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने में स्त्रियों के अधिकार पुरुषों से अधिक थे। इनमें वंश परम्परा किसी स्त्री सदस्य के नाम पर ही चलती थी। जनजाति समाज पर बाहरी समूहों से सम्पर्क बढ़ा, जनजातियों में पुरुषों ने स्त्रियों को अपने अधीन करना आरम्भ कर दिया। अधिकांश जनजातियों में मातृसत्तात्मक व्यवस्था पूरी तरह समाप्त हो चुकी है। आर्थिक क्षेत्र तथा सांस्कृतिक आयोजनों में भी स्त्रियों की तुलना में पुरुषों के अधिकार बढ़ते जा रहे हैं।

**सामाजिक एकीकरण का बदलता परिवेश**- वर्तमान समय में जनजातियों के परम्परागत सामाजिक एकीकरण की प्रकृति में बड़ा परिवर्तन हुआ। अपनी भौगोलिक और सांस्कृतिक पृथकता के कारण कुछ समय पहले तक एकीकरण की प्रक्रिया एक विशेष क्षेत्र तक सीमित थी। आज उसकी प्रकृति और क्षेत्र में व्यापकता देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए राँची और सीमावर्तो स्थानों के कारखानों में संथाल, उराँव, हो तथा मुण्डा जनजातियों के लोग साथ-साथ काम करते हैं तथा एक साथ रहते हैं। उनमें सामाजिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान होते रहने से एकीकरण की प्रक्रिया एक जगह नहीं रही।

एल. पी. विद्यार्थी ने कहा कि "हटिया क्षेत्र की जनजातियों के बीच सांस्कृतिक सम्पर्क के बढ़ने के कारण उनके बीच भाईचारा बढ़ने के साथ विभिन्न जनजातियों में वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित होने लगे।"[6]

**सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन-** जनजातियों पर आधुनिकीकरण का प्रभाव बढ़ने के फलस्वरूप उनके परम्परागत मूल्यों में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। कुछ समय पहले जिन जनजाति क्षेत्रों में व्यक्ति का अपने क्षेत्र से बाहर जाना मर्यादा के विरूद्ध माना जाता था,

अब उन क्षेत्रों में स्थानीय गतिशीलता की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। पारिवारिक संगठन, व्यवसाय तथा धार्मिक विश्वासों में होने वाले परिवर्तन एक बड़ी सीमा तक सामाजिक मूल्यों में परिवर्तन का ही परिणाम है।

**जीवन-यापन के नये साधन-** परम्परागत रूप से जनजातीय समाज का अधिकांश भाग अपने जीवन-यापन के लिए शिकार, खाद्य संकलन, पशुपालन, स्थानान्तरित खेती, दस्कारी तथा परम्परागत कृषि पर निर्भर था। आधुनिकीकरण के प्रभाव से अधिकांश जनजातियाँ खाद्य संकलन, शिकार तथा स्थानान्तरित खेती को छोड़ चुकी हैं। वन से जुड़े कानून बनने के उपरान्त जनजातियाँ जंगली भूमि पर स्थानान्तरित खेती के लिए स्वतंत्र नहीं हैं। व्यावसायिक आधार पर चार जनजातियों को विभाजित किया जा सकता है-पशुपालक जनजातियाँ, कृषक जनजातियाँ, श्रमिक जनजातियाँ, शिल्प जनजातियाँ। पहले वर्ग की जनजातियाँ दूध देने वाले पशुओं को पालकर दूध और दूध से बनने वाले दूसरे पदार्थों का व्यवसाय करती हैं। दूसरी बड़ी जनजाति जनसंख्या कृषि के द्वारा जीविका उपार्जन करने लगी। साधारणतया यह मोटे अनाजों का उत्पादन करते हैं। इस समय 35 प्रतिशत हिस्सा खेती के द्वारा जीवन-यापन किया जाता है। श्रमिक जनजातियाँ जो समीपवर्ती उद्योगों में विभिन्न प्रतिष्ठानों में श्रमिक के रूप में काम करके अपनी आजीविका उपार्जित करती हैं। यह निकटवर्ती नगरों में घरेलू सेवाएँ करने वाले जनजातीय लोगों की संख्या अधिक है। शिल्प जनजातियाँ जो मिट्टी के बर्तन बनाने, चटाई और रस्सियाँ बनाने, खिलौने तैयार करने, पत्थर की मूर्तियाँ बनाने, लोहे के औजार तैयार करने व कलात्मक टोकरियाँ बनाने का कार्य करती हैं। एन0के0 बोस ने कहा कि बिरहोर तथा खरिया जनजाति के लोग पेड़ों की पतली जड़ों से सुन्दर और मजबूत रस्सियाँ बनाकर समीपवर्ती बस्तियों में बेचते हैं।[7]

**उत्पादन की प्रविधियों में परिवर्तन-** जनजाति समाज में विकास कार्यक्रमों के फलस्वरूप जैसे-जैसे कृषि की नयी प्रविधियों तथा उन्नत किस्म के बीज व फसलों का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। अब जनजातियों में कृषि को एक व्यवसाय के रूप में देखा जाने लगा। नैनीताल के तराई क्षेत्रों में, छत्तीसगढ़ तथा मध्य प्रदेश की अधिकांश जनजातियों में कृषि नवाचारों का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यहाँ जनजातियों के पास ट्रैक्टर तथा थ्रेसर जैसे साधन हैं। सहकारी समितियों का निर्माण करके जनजाति लोगों ने कृषि उत्पादन को बढ़ाने में योगदान आरम्भ कर दिया। जनजाति समाज बाजार व्यवस्था से परिचित होने लगी तथा अपनी उपज को मण्डियों में बेचने लगे हैं। यातायात साधनों में विकास के कारण जनजातियों को नयी प्रविधियों की जानकारी पाने की सुविधाएँ मिलने लगी हैं।

**कुटीर उद्योगों का पतन-** जनजातीय समाजों का जब बाहरी समूहों से सम्पर्क हुआ, इसके परिणामस्वरूप जनजातीय समाज भी कारखानों में बनी हुई वस्तुओं की ओर आकर्षित होने लगे। जनजातीय क्षेत्रों में कारखानों में बनी वस्तुओं का प्रसार होने से उनके कुटीर उद्योग-धंधे न केवल नष्ट होने लगे, जबकि जनजातियों ने स्वयं निरर्थक समझना प्रारम्भ कर दिया। इससे जनजाति समाज की आत्म-निर्भरता समाप्त हो गयी तथा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए बाहरी समूह पर निर्भर रहने लगे।

**उपभोक्तावाद-** जनजातीय क्षेत्रों में जब नगर के व्यापारियों ने आना-जाना आरम्भ किया तो इसके फलस्वरूप जनजातीय क्षेत्रों में भी उन वस्तुओं का प्रचलन बढ़ने लगा, जो कुछ समय पहले तक केवल नगरीय जीवन से ही सम्बन्धित थी। आज जनजातियों में भी सौन्दर्य प्रसाधनों, चाँदी के आभूषणों और परम्परागत शैली से भिन्न वेशभूषा का प्रचलन बढ़ने लगा है।

**मद्यपान का उपभोग-** प्राचीन काल से ही जनजातियों में स्त्रियों तथा पुरुषों द्वारा स्वदेशी ढंग से बनाई गयी शराब के उपयोग का प्रचलन रहा है। कुछ समय पहले तक मद्यपान की आदत कोई समस्या नहीं थी, लेकिन बाहरी समूहों के सम्पर्क द्वारा जनजातियों में नगरों में बनने वाली कच्ची शराब तथा अक्सर विदेशी ढंग की शराब का उपयोग किया जाने लगा है। मद्यपान की यह आदत परिवार के सीमित साधनों की कीमत पर विकसित हो रही है। इसका परिणाम वैयक्तिक विघटन तथा पारिवारिक विघटन के रूप में हमारे सामने आया।

सशक्तिकरण के सन्दर्भ में जब हम आधुनिक सभ्य समाज के साथ जनजातीय समाज की महिलाओं के अधिकारों का सूक्ष्म विश्लेषण करते है तो यह द्रष्टव्य होता है कि कई जगह पर जनजातीय महिलाएँ शहरी महिलाओं से अधिक सशक्त हैं। कार्य सम्पादन की शैली अपेक्षाकृत अधिक शारीरिक श्रम करने कृषि सामर्थ्य कार्यों में संलग्नता, आय के स्रोत पर अधिकार, जनजातीय सामूहिक चेतना, जनजातीय पंचायतों का हस्तक्षेप आदि ऐसे अनेक कारक हैं, जिन्होंने जनजातीय महिलाओं के अधिकार क्षेत्र को मजबूत बनाया है, वहीं आधुनिकीकरण के प्रभाव ने पुरुष प्रधानता को जनजाति समाजों में भी लागू किया है। पुरुषों के मद्यपान अकर्मण्यता की प्रवृत्ति, आलस्य की मानसिकता पुरुष वर्चस्व इत्यादि का नकारात्मक प्रभाव जनजाति महिलाओं को भी आच्छादित कर रहा है। सभ्य समाज में जुड़ने की बलवती इच्छा ने जनजातीय महिलाओं को भी नगरीय संस्कृति का अंग बनाने की दिशा में पहल की है। यह दोनों परिस्थिति जनजाति महिलाओं के समक्ष एक संक्रमणकालीन स्थिति उत्पन्न करती है, जो विभिन्न प्रकार की चुनौती व नवीन सम्भावनाओं को उत्पन्न कर रही है, भविष्य में जिनका सामना जनजातीय महिलाओं को करना पड़ेगा।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


1. वैष्णव, टी.के., 2009, छत्तीसगढ़ की अनुसूचित जनजाति महिलाएँ, आदिम जाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, रायपुर, P-17.
2. अग्रवाल, जी.के., 2011, सामाजिक मानवशास्त्र,एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस आगरा पृष्ठ 76
3. samwadsutra.com
4. govtvacancy.net
5. अग्रवाल, जी.के., 2011, सामाजिक मानवशास्त्र, एस.बी.पी.डी. पब्लिशिंग हाउस आगरा पृष्ठ 76
6. वही
7. वही

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# ग्रामीण समाज में वृद्धों की सामाजिक स्थिति का एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (औरैया, उत्तर प्रदेश, जनपद के लुहियापुर गाँव के सन्दर्भ में)

•हेमलता सांगुड़ी

**सारांश- वृद्धावस्था को जीवन का उच्चतम व आखिरी पड़ाव माना गया है। भारतीय ग्रामीण समाज जहाँ वृद्धों की अहम् भूमिका रही है, वे परिवार में बड़े बुजुर्ग के रूप में तथा समाज में मुखिया या सरपंच के रूप में अपनी अहम् भूमिका निभाते आये हैं। हमारी भारतीय संस्कृति में बड़े-बुजुर्गो का सम्मान व आदर करने की परम्परा रही है, किन्तु आज के इस आधुनिक युग में बुजुर्गो के प्रति उपेक्षा, अपमान व उत्पीड़न की घटनायें तेजी से बढ़ रही हैं। आधुनिकीकरण के कारण भारतीय ग्रामीण समाज भी एकल परिवार के स्वरूप में बदलता जा रहा है। परिणामतः बुजुर्गो को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के औरैया जनपद के लुहियापुर गाँव के 50 वृद्धजनों पर किये गये अध्ययन पर आधारित है।**

**मुख्य शब्द - वृद्धावस्था, उपेक्षा, उत्पीड़न, भारतीय संस्कृति**

**प्रस्तावना-** वृद्धावस्था मानव जीवन की एक स्वाभाविक अवस्थान है, जिसमें समयानुसार परिवर्तन होते हैं। इसलिए यह कहा जा सकता है कि यह क्रमशः धीरे-धीरे आने वाली एक अवस्था है, जो कि स्वाभाविक एवं प्राकृतिक रूप से घटित होती है। अतः यह कहा जा सकता है कि वृद्धावस्था परिवर्तन की वह अवस्था है, जिसमें व्यक्ति के जीवन के अनुभव के सभी पक्ष सन्निहित होते हैं। परन्तु आज इस परिवर्तन के दौर में वृद्धों की महत्ता को नहीं समझा जा रहा है, जिसके कारण उम्र के अन्तिम दौर में अपना जीवन यापन करने के लिए वे सहारा ढूँढ़ने के लिए विवश होते हैं। समाज में ऐसे वृद्धजनों की संख्या अधिकतम है, जो स्वस्थ, जागरुक तथा सक्रिय रूप से कई क्षेत्रों में योग्य व सक्षम है, परन्तु उनके अनुभवों का लाभ लेने के बजाय उन्हें उपेक्षित कर दिया जाता है, जिसके कारण वे अपने जीवन को अनुपयोगी समझने लगते हैं। वृद्धजनों के प्रति परिवार एवं समाज द्वारा किये जाने वाले व्यवहार का तरीका उनमें अकेलेपन, असहाय एवं उपेक्षित जीवन की स्थितियों को निर्मित करता है, जिसे हम सामाजिक मूल्यों के क्षरण की स्थिति कह सकते हैं।

भारत में 60 वर्ष की आयु को पूरी कर लेने वाले व्यक्तियों को वरिष्ठ नागरिक

• **असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, डी.बी.एस. कालेज, कानपुर**

अथवा सीनियर सिटीजन की संज्ञा दी गई है। हमारे देश में वरिष्ठ नागरिकों की दो श्रेणियाँ विद्यमान है एक (60+) वृद्ध और दूसरी तरफ (80+) वयोवृद्ध। भारत में वृद्धजनों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। वर्ष 1901 में भारत में वृद्धों की संख्या 12.1 मिलियन थी जो वर्ष 2011 में 103.2 मिलियन हो गयी। इन आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि भारत में कुल आबादी में 60 वर्ष से अधिक आयु के लोगों के प्रतिशत में निरन्तर वृद्धि हुई है। अतः वृद्धजनों की निरन्तर बढ़ती संख्या आज एक सामाजिक जवाबदेही के रूप में चुनौती बनकर दस्तक दे रही है, जिस पर व्यापक रूप से गहन चिन्तन करने की आवश्यकता हैं वर्तमान समय में भारतीय समाज में वृद्धजनों की जो विपरीत स्थिति दिखाई दे रही है, उसके प्रमुख कारण निम्नवत हैं-

- संयुक्त परिवारों का बिखराव।
- पारिवारिक संबंधों में समय तथा परस्पर प्रेम का अभाव।
- पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण एवं भौतिकवादी मानसिकता।
- वर्तमान में नवयुवकों में कर्तव्य एवं दायित्व बोध की कमी।
- मूल्यविहीन जीवन शैली।
- व्यक्तिगत स्वार्थ एवं अवसरवादिता।
- सेवाभावना एवं सामंजस्य का अभाव।

उपर्युक्त कारक वृद्धजनों की स्थिति को प्रभावित करने के साथ ही उभरती हुई एक सामाजिक समस्या के रूप में गहन मंथन करने के लिए विवश करते हैं। यही कारण है कि वृद्धावस्था एक विचारणीय विषय के रूप में समाज में उभर कर आया है, जो सामाजिक परिपेक्ष्य में एक व्यापक चिन्तन और वैचारिक विमर्श का मुद्दा बन चुका है। यह वृद्धजनों की बेहतर स्थिति के उन्नयन हेतु सार्थक प्रयास करने के लिए परिवार, समाज एवं शासन का ध्यान आकृष्ट करता है, क्योंकि तीनों के समन्वित प्रयास से ही वृद्धजनों की बेहतर स्थिति की संभावनाओं के सार्थक प्रयास संभव हो सकते हैं।

**उद्देश्य-** आज के इस आधुनिक युग में वृद्धजनों का शोषण बहुत ही तीव्रता के साथ हो रहा है। फिर चाहे वह शहरी क्षेत्र हो या ग्रामीण क्षेत्र। वर्तमान समय में नगरीकरण, औद्योगीकरण तथा आर्थिक विकास की प्रक्रिया से ग्रामीण परिवार की संरचना एवं प्रकार्य भी निश्चित रूप से प्रभावित हुए हैं। प्रस्तुत अध्ययन ग्रामीण परिवारों में वृद्धजनों की स्थिति, भूमिका एवं समस्याओं से सम्बन्धित है, जिसके उद्देश्य निम्नवत् हैं-

1. ग्रामीण परिवारों में वृद्धजनों की स्थिति का अध्ययन करना।
2. आर्थिक सहभागिता, अधिकार एवं निर्णय प्रक्रिया के सन्दर्भ में वृद्धजनों की स्थिति का अध्ययन करना।
3. सामाजिक- सांस्कृतिक जीवन में वृद्धजनों की सहभागिता तथा सामाजिक-सांस्कृतिक दशाओं का वृद्धों के जीवन पर प्रभाव का अध्ययन।
4. ग्रामीण वृद्धजनों की स्वास्थ्य स्थिति एवं समस्याओं का अध्ययन।
5. परिवारों में वृद्धजनों के साथ नवीन पीढ़ी के सामंजस्य का आंकलन करना।

**पूर्ववर्ती अध्ययन-** वृद्धों के सन्दर्भ में अनेक विदेशी समाजशास्त्रियों व मानवशास्त्रियों

द्वारा शोध कार्य किये गये हैं। इनमें इप्सटीन (1930), क्रेप्स (1953), कारसन (1955), स्टीनर तथा डारमैन (1957), मेन्पाटे और थापस (1969) आदि अध्ययन प्रमुख हैं। इस सन्दर्भ में भारतीय समाजशास्त्रियों द्वारा किये गये अध्ययनों में जगजीत सिंह (1962), गुरुशरण कौर (1964), रामूर्ति पी.वी. (1970, 1996), पुरोहित, सी.के. एवं शर्मा आर. (1972), कुरियन जार्ज (1972), पी.के. नायर (1980), अनिल महाजन (1987), देसाई (1986), भट्टाचार्य (1989), सरस्वती मिश्रा (1989) आदि के अध्ययन प्रमुख हैं।

अग्रवाल गिरिराज शरण (2004) ने इस बात पर ध्यान आकृष्ट कराया है कि वृद्धावस्था में शरीर अशक्त हो जाने के कारण बीमारियाँ जल्दी पकड़ लेती हैं, परन्तु कार्य मुक्त होने के कारण अधिकतर बुजुर्गों के पास धन का अभाव होता है और बीमारियाँ बुढ़ापे की मुश्किलों का पर्याप्त कारण बन जाती हैं।

अली एम.ए. जेड. (2014) ने वृद्धजनों के समायोजन की समस्या पर ध्यान आकृष्ट कराने का प्रयास किया। उन्होंने ये पाया कि परिवारों में रह रहे वृद्धजनों की तुलना में वृद्धाश्रमों में रहने वाले बुजुर्गों को भावनात्मक समस्याओं का सामना अधिक करना पड़ता है। सिंह आर.(2015) ने वृद्धजनों की सामाजिक-आर्थिक व स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का अध्ययन किया। प्रसाद चन्द भोलेश्वर (2016) का अध्ययन है कि वृद्धों को जब आर्थिक रूप से अपने परिवारों पर निर्भर रहना पड़ता है, जिस कारण अनेक बार असहज स्थितियों का सामना करना पड़ता है, उन्हें अनेक प्रकार की मानसिक वेदनाओं का शिकार होना पड़ता है। डॉ. जाकिया रफत (2018) ने अपने अध्ययन में बताया है कि आज की भागदौड़ भरी जिन्दगी में किसी के पास भी समय नहीं है कि वे वृद्धों की भावुकता, पसंद-नापसंद तथा स्वास्थ्य समस्याओं को सुनें। आज वे स्वयं को बहुत अकेला अनुभव करते हैं।

**अध्ययन क्षेत्र व अध्ययन विधि-** प्रस्तुत अध्ययन उत्तर प्रदेश के औरैया जनपद के लुहियापुर गाँव पर आधारित है। यह एक छोटा सा गाँव है, जहाँ की जनसंख्या लगभग 750 है और वोटरों की संख्या 600 है। यह गाँव मुख्यतः कृषि प्रधान है। अध्ययनकर्ता ने औरैया जनपद के लुहियापुर गाँव से 50 वृद्धजनों, जिनकी उम्र 60 वर्ष व उससे अधिक है, उनको अध्ययन की इकाई के रूप में चयनित किया। यह चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि द्वारा किया गया। प्रस्तुत अध्ययन में वृद्धों की सामाजिक स्थिति का ग्रामीण क्षेत्र के सन्दर्भ में समाजशास्त्रीय अध्ययन किया गया है। इस शोध कार्य हेतु साक्षात्कार-अनुसूची विधि द्वारा सूचनाओं का संकलन किया गया है। वृद्धजनों के पारिवारिक संबंधों व सामंजस्य के बारे में सूचना प्राप्त करने में साक्षात्कारकर्ता को सर्वाधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा।

**उत्तरदाताओं की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि-**

**सारणी संख्या 01**

**परिवार के प्रकार**

| परिवार के प्रकार | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| एकाकी परिवार | 30 | 60 |
| संयुक्त परिवार | 20 | 40 |
| कुल योग | 50 | 100 |

वृद्धजनों से उनके परिवार के बारे में जानकारी करने पर ज्ञात हुआ कि 50 में से 30 अर्थात् 60 प्रतिशत वृद्धजनों के परिवार एकाकी हैं तथा 20 अर्थात 40 प्रतिशत वृद्धजनों के परिवार संयुक्त हैं।

**सारणी संख्या 02**
**लिंग**

| लिंग | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| स्त्री | 12 | 24 |
| पुरुष | 38 | 76 |
| कुल योग | 50 | 100 |

उपरोक्त सारणी को देखने से पता चलता है कि प्रस्तुत अध्ययन हेतु 24 प्रतिशत वृद्ध स्त्री व 76 प्रतिशत वृद्ध पुरुषों को उत्तरदाताओं के रूप में चयनित कर उनका अध्ययन किया गया।

**सारणी संख्या 03**
**आयु वर्ग**

| आयु वर्ग | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| 60–70 | 30 | 60 |
| 70–80 | 15 | 30 |
| 80 से ऊपर | 05 | 10 |
| कुल योग | 50 | 100 |

उपर्युक्त सारणी संख्या–3 से यह ज्ञात होता है कि 50 उत्तरदाताओं में से 30 अर्थात् 60 प्रतिशत वृद्धजन 60 से 70 आयु वर्ग के, 15 अर्थात् 30 प्रतिशत वृद्धजन 70 से 80 आयु वर्ग के तथा 5 वृद्धजन अर्थात् 10 प्रतिशत उत्तरदाता 80 वर्ष से ऊपर के आयुवर्ग से सम्बद्ध थे।

**सारणी संख्या 04**
**सूचनादाताओं के वर्ग**

| वर्ग | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग | 23 | 46 |
| पिछड़ा वर्ग | 15 | 30 |
| सामान्य वर्ग | 12 | 24 |
| कुल योग | 50 | 100 |

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि 23 अर्थात् 46 प्रतिशत उत्तरदाता अनूसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति वर्ग से सम्बद्ध हैं। 15 अर्थात् 30 प्रतिशत उत्तरदाता पिछड़े वर्ग से हैं, जबकि 12 अर्थात् 24 प्रतिशत वृद्धजन सामान्य वर्ग से हैं।

**सारणी संख्या 05**
**शैक्षणिक स्तर**

| शैक्षणिक स्तर | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| अशिक्षित | 30 | 60 |
| हाईस्कूल से कम | 17 | 34 |
| हाईस्कूल | 03 | 06 |
| कुल योग | 50 | 100 |

उपर्युक्त सारणी के आधार पर वृद्धजनों से उनके शैक्षणिक स्तर को ज्ञात करने पर यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि 30 अर्थात् 60 प्रतिशत वृद्धजन अशिक्षित है। 17 अर्थात् 34 प्रतिशत वृद्धजन हाईस्ककूल से कम स्तर तक शिक्षित थे, वहीं 3 अर्थात् 6 प्रतिशत बुजुर्ग हाईस्कूल तक शिक्षित थे।

**सारणी संख्या 06**

**वृद्धजनों की मासिक आय**

| मासिक आय | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| 2000 से कम | 30 | 60 |
| 2000 - 5000 | 05 | 10 |
| 5000 - 10000 | 02 | 04 |
| परिवार पर आश्रित | 13 | 26 |
| कुल योग | 50 | 100 |

उपरोक्त सारणी उत्तरदाताओं की मासिक आय को दर्शाती है। इसके अनुसार 30 अर्थात् 60 प्रतिशत वृद्धजन 2000 से कम मासिक आय प्राप्त करते हैं। 05 अर्थात् 10 प्रतिशत उत्तरदाता 2000 से 5000 के आय वर्ग में है तथा 02 अर्थात् 04 प्रतिशत वृद्धजन 5000 से 10000 रुपये मासिक आय के रूप में प्राप्त करते हैं, जबकि 13 अर्थात् 26 प्रतिशत वृद्धजन अपने परिवारों पर आश्रित हैं।

**सारणी संख्या 07**

**वृद्धजनों का अपने परिवारों के साथ सामंजस्य**

| आधार | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| परिवारों के बीच सामंजस्य नहीं है। | 30 | 60 |
| सामंजस्य है | 20 | 40 |
| कुल योग | 50 | 100 |

सामंजस्य के आधार पर वृद्धजनों के अध्ययन में हमने पाया कि 50 उत्तरदाताओं में से 30 अर्थात् 60 प्रतिशत वृद्धजनों के उनके परिवार में आपसी सम्बन्ध अच्छे नहीं हैं, जिस कारण उन्हें उत्पीड़न का सामना भी करना पड़ता है। जबकि 20 अर्थात् 40 प्रतिशत वृद्धजन ऐसे भी है, जिनके अपने परिवारों के साथ सामंजस्य ठीक है।

**सारणी संख्या 08**

**शारीरिक रूप से सक्षमता व अक्षमता के आधार पर उत्पीड़न**

| आधार | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| स्वस्थ वृद्ध | 30 | 60 |
| बीमार वृद्ध | 20 | 40 |
| कुल योग | 50 | 100 |

शारीरिक रूप से स्वस्थता के आधार पर वृद्धजनों के उत्पीड़न का अध्ययन करने पर हमने पाया कि 30 उत्तरदाता अर्थात् 60 प्रतिशत वृद्धजन स्वस्थ थे, वहीं 20 अर्थात् 40 प्रतिशत वृद्धजन बीमार थे और उनमें स्वस्थ वृद्धजनों की अपेक्षा परिवार में शोषण की दर भी अधिक पाई गई।

**सारणी संख्या 09**

**पारिवारिक निर्णयों में भूमिका**

| पारिवारिक निर्णयों में भूमिका | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| राय ली जाती है | 15 | 30 |
| नहीं ली जाती है | 35 | 70 |
| कुल योग | 50 | 100 |

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता है कि 15 अर्थात् 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार पारिवारिक निर्णयों में वृद्धजनों की राय लेते हैं जबकि 35 अर्थात् 70 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिजन उनकी राय नहीं लेते हैं।

**सारणी संख्या 10**

**सरकारी सहायता प्राप्ति के सम्बन्ध में।**

| किसी प्रकार की सरकारी सहायता प्राप्त है? | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|
| हाँ | 10 | 20 |
| नहीं | 40 | 80 |
| कुल योग | 50 | 100 |

उपरोक्त सारणी से पता चलता है कि 10 अर्थात् 20 प्रतिशत वृद्धजनों ने सरकारी सहायता के लाभ मिलने की बात स्वीकार की है, जबकि 40 अर्थात् 80 प्रतिशत वृद्धजनों ने किसी भी प्रकार की सरकारी सेवाओं का लाभ न मिलने की बात कही है।

अध्ययनकर्ता ने अध्ययन करने पर पाया कि तेजी से परिवर्तित हो रही सामाजिक व्यवस्था में वृद्धों के सामने अनेक समस्याएँ भी उत्पन्न हो गयी हैं। कुछ प्रमुख बिन्दु निम्नवत् हैं –

1. संयुक्त/विस्तारित परिवार के विघटन के परिणामस्वरूप पारिवारिक सत्ता का वृद्धों से युवा पीढ़ी की ओर हस्तान्तरित होना।
2. व्यक्तिवादी प्रवृत्ति के विकास तथा एकांकी परिवार व्यवस्था के उदगम से युवा पीढ़ी के दृष्टिकोण में होने वाले परिवर्तन के परिणामस्वरूप वृद्धों की सामाजिक सुरक्षा में आने वाली कमी तीव्र गति से बढ़ी है।
3. वैचारिक असमानता व टकराव के परिणाम स्वरूप युवा पीढ़ी व वृद्धों के मध्य उत्पन्न होने वाली संघ'ार्तात्मक स्थिति।
4. अपर्याप्त व आर्यविहीन एकांकी जीवन जीने की बाध्यता।
5. वृद्ध जीवन से जुड़ी बीमारियों से गुजरना तथा परिवारजनों की ओर से उपचार व देखभाल की अपर्याप्त व्यवस्था।
6. अधिकतर वृद्ध महिलायें आर्थिक रूप से दूसरों पर आश्रित होती हैं क्योंकि उनके पास प्राय: लाभदायक रोजगार नहीं होता है।

एक नये सर्वेक्षण के अनुसार एक गैर सरकारी संगठन हेल्पेज इण्डिया द्वारा विश्व बुजुर्ग दुर्व्यवहार जागरुकता दिवस (15 जून) के अवसर पर 60-90 वर्ष की आयु वर्ग की 7911 महिलाओं पर अध्ययन किया गया। यह सर्वेक्षण 20 राज्यों, दो केन्द्रशासित प्रदेशों और पाँच महानगरों में ग्रामीण एवं शहरी दोनों क्षेत्रों की महिला प्रतिभागियों पर

कराया गया। जिसकी रिपोर्ट में यह खुलासा हुआ कि 16 प्रतिशत वृद्ध महिलाओं को दुर्व्यवहार का सामना करना पड़ा, उनमें से करीब 50 प्रतिशत महिलाओं को शारीरिक हिंसा का सामना करना पड़ा, जबकि 46 प्रतिशत बुजुर्ग महिलाओं को अपमान झेलना पड़ा, वहीं 40 प्रतिशत को भावनात्मक शोषण का सामना करना पड़ा। सर्वेक्षण में शामिल कुल 40 प्रतिशत महिलाओं ने अपने बेटों को दोषी ठहराया, जबकि 31 प्रतिशत ने अपने रिश्तेदारों और 27 प्रतिशत ने अपनी बहुओं को दुर्व्यवहार के लिए जिम्मेदार बताया। रिपोर्ट में कहा गया कि ये आँकड़े चिन्ताजनक हैं। इसमें यह भी कहा गया कि दुर्व्यवहार के बावजूद बुजुर्ग महिलाओं ने डर के कारण पुलिस को इसकी सूचना नहीं दी।

**निष्कर्ष-** जहाँ अतीत में सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक कारक वृद्धों के अधिक संतोषजनक सामाजिक समायोजन के लिए अनुकूल थे। जनसंख्या में उनका अनुपात कम था और उनका परिवार उनकी आवश्यकता, भरण-पोषण और देखभाल की पर्याप्त व्यवस्था करता था। सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक व्यवस्था में आधुनिक परिवर्तन होने के कारण आजकल वृद्धों का सामाजिक समायोजन जटिल हो गया है। जहाँ एक ओर जनसंख्या में उनका प्रतिशत बढ़ता जा रहा है। वहीं उनके प्रति उत्पीड़न, उपेक्षा व अपमान की घटनायें भी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं, जो वास्तव में चिन्ता व चिन्तन का विषय है, जिस पर हम सबको एक पहल करना नितान्त आवश्यक है। हमें स्वयं अपने बुजुर्गों का ध्यान व सम्मान रखना होगा, अपनी सन्तानों को भी यह आदर्श प्रेंित करना होगा कि बुजुर्ग माता-पिता बोझ नहीं, वे हमारी जरूरत है, हमारी जिम्मेदारी है। कल उन्होंने हमें सहारा दिया, हमें अपने पैरों पर खड़ा होना सिखाया, आज हमें उनको प्रेम सहित स्वीकारना होगा। यही सच्ची मानव सेवा है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. कुमार रंजीत (2017), अनुसंधान प्रविधि, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
2. राम आहूजा (2018), अनुसंधान प्रविधि, रावत पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. मिश्रा एस (1987), सोशल ऐडजेस्टमेन्ट इन ओल्ड एज, न्यू देहली, बी.आर. पब्लिशिंग हाउस।
4. श्रीवास्तव, आर.सी. (1994), द प्राब्लम्स ऑव द ऐज्ड, न्यू देहली, क्लासिकल पब्लिकेशन्स।
5. अग्रवाल, गिरिराज शरण (2004), वृद्धावस्था की कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. शिन्धाल, विनीता (2014), वृद्धावस्था : नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली।
7. शर्मा, स्वर्णाकान्ता (2014), वृद्धावस्था : बागवाँ से आगे, बुकाहोलिक पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
8. प्रसाद, चन्द मौलेश्वर (2018), वृद्धावस्था विमर्श, परिलेख पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
9. राय, सत्येन्द्र नाथ (2018), वृद्धावस्था में सुखी जीवन, प्रभात पब्लिके"ान, नई दिल्ली।
10. डॉ. जाकिया रफत, शोध मंथन (2018), ISSN : (P) 0976-5255(e) : 2454339X
11. डॉ. जयसिंह यादव, इंटरनेशनल जरनल ऑफ साइंटिफिक एण्ड इनोवेटिव रिसर्च स्टडीज, ISSN : 2347-7660 (Print) ISSN : 2454-1818 (Online)
12. हिन्दुस्तान www.livehindustan.com, कानपुर, गुरुवार 15 जून, 2023
13. dw.com/hi/ बुजुर्गों के साथ बढ़ता भेदभाव।
14. अग्रवाल उमेश चन्द्र (2009), बढ़ते बुजुर्ग, घटती सुरक्षा, कुरुक्षेत्र, वर्ष 55 (12) अक्टूबर 2009, 54

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# जननी सुरक्षा योजना का स्वास्थ्य संबंधी प्रभाव (जिला सतना के विशेष संदर्भ में)

• विमलेश द्विवेदी
•• अखिलेश शुक्ल

**सारांश- महिला एवं बाल विकास योजनाओं का सतना जिले की ग्रामीण महिलाओं पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा है। महिलाओं की पारिवारिक स्थिति पर काफी हद तक विकास हुआ है। ग्रामीण महिलायें अपने तथा पारिवारिक दायित्वों का पालन बहुत ही अच्छे तरीके से कर सकती हैं। परिवार में रहकर वह अपने बच्चों व पति के साथ-साथ अन्य महिलाओं को सशक्त बनाने तथा उन्हें परिवार व समाज में अधिकार प्राप्त करवाने में सफलता प्राप्त कर रही हैं। अस्पताल में सुरक्षित प्रसव को बढ़ावा देने के लिए यह योजना चलाई जा रही है। इस योजना का महिलाओं के स्वास्थ्य पर काफी अच्छा प्रभाव पड़ा है, महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी स्थिति पर काफी हद तक विकास हुआ है।**

**मुख्य शब्द - स्वास्थ्य, महिला, बाल विकास, सशक्त**

एक परिवार का निर्माण तभी होता है जब उसमें पति-पत्नी एवं उसके अविवाहित बच्चे अन्य सदस्यों के साथ रहते हैं, जिनकी देखभाल इन दम्पति द्वारा सुविधा पूर्वक की जा सकती है। वास्तविक अर्थ में परिवार रक्त सम्बन्धों को छोटे से छोटा समूह माना जाता है। हमारे द्वारा परिवार की परिभाषा दो प्रकार से प्रकट करना अत्यंत आवश्यक माना जाता है। पहला यह विभिन्न सभाओं और सांस्कृतियों में परिवार के विभिन्न स्वरूप पाये जाते हैं। दूसरा यह भी बृहद रक्त सबंधी समूहों जैसे संयुक्त परिवार का गोत्र है विभिन्न रक्त का लख पाया जाता है। लेकिन यहाँ परिवार से हमारा अभिप्राय केवल मूल परिवार अर्थात् पति-पत्नी और उनके अविवाहित बच्चों से लगाया जाता है। तथा इन योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं में पारिवारिक संबंधों में अच्छी घनिष्टता पाई जाती है और पारिवारिक झगड़ों में काफी कमी देखने को मिलती है और इन योजनाओं के द्वारा ग्रामीण महिलाओं के परिवार में परम्परागत संस्कृति की मात्रा का विस्तार हुआ है और ग्रामीण महिलाओं में परिवार द्वारा किये जाने वाले हिंसा और मारपीट में काफी हद तक सुधार देखने को मिला है। अब उन्हें परिवार में सम्मान दिया जाता है। यह केवल महिला एवं बाल विकास योजनाओं के माध्यम से ही संभव हुआ है। अस्पताल

• शोध छात्रा, समाजशास्त्र, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश
•• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

में सुरक्षित प्रसव को बढ़ावा देने के लिए यह योजना चलाई जा रही है। इस योजना का महिलाओं के स्वास्थ्य पर काफी अच्छा प्रभाव पड़ा है, महिलाओं की स्वास्थ्य संबंधी स्थिति पर काफी हद तक विकास हुआ है। ग्रामीण महिलाएँ अपने तथा अपने बच्चों के दायित्वों का पालन बहुत ही अच्छे तरीके से कर सकती है। परिवार में रहकर वह अपने बच्चो तथा पति के साथ-साथ अन्य महिलाओं को सशक्त बनाने तथा उन्हे परिवार व समाज में अधिकार प्राप्त करवाने में सफलता प्राप्त कर रही है। यह महिला तथा बाल विकास योजना की सुरक्षा योजना के द्वारा ही संभव हो पाया है। आज ग्रामीण क्षेत्र की समस्त गर्भवती महिला अपना प्रसव अस्पताल में करवाना पसंद करती है। तथा जननी सुरक्षा योजना लागू होने से महिलाओं के जीवन स्तर में काफी हद तक सुधार तथा बदलाया संभव हो पाया है। आज ग्रामीण क्षेत्र की महिलाए जागरूक तथा आत्मनिर्भर है। पहली बार गर्भधारण करने वाली महिला को 5000 रूपये तथा दूसरी बार गर्भधारण करने पर 400 रूपये की सहायता राशि सरकार द्वारा प्रदान की जाती है। हितग्राही महिला को इस योजना के अन्तर्गत संस्थागत प्रसव के दौरान समस्त सेवाए (औषधि, सामग्री आदि) संबंधित शासकीय संस्थान द्वारा निःशुल्क प्रसव की जाती है। उसके साथ ही गर्भवती महिला को अस्पताल तक पहुचाने वाली प्रेरक महिला को भी 600 रूपये प्रोत्साहन राशि दी जाती है। जननी सुरक्षा योजना मध्यप्रदेश के सभी मेडिकल कालेजों, जिला चिकित्सालयों तथा अन्य सभी चिन्हांकित शासकीय अस्पतालों में जहॉ 24 घण्टे प्रसव की सुविधा उपलब्ध है। जननी सुरक्षा योजना के अन्तर्गत मान्यता प्राप्त सभी निजी चिकित्सालयों में भी योजना का लाभ प्रापत किया जा सकता है। जननी सुरक्षा योजना राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन के अन्तर्गत एक सुरक्षित मातृत्व कार्यक्रम है, जिसका उद्देश्य गरीब गर्भवती महिलाओं के संस्थागत प्रसव को बढ़ावा देते हुए मातृ एवं नवजात मृत्यु दर को कम करना है।

**अध्ययन क्षेत्र एवं अध्ययन पद्धति-** शोध पत्र का अध्ययन क्षेत्र सतना जिला है और सतना जिले की 300 ग्रामीण महिला उत्तरदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से तथ्यों को एकत्रित किया गया है। तथ्यों को एकत्रित करने के लिए अवलोकन प्रणाली का क्षेत्र में प्रयोग किया गया  दैव निदर्शन प्रणाली के माध्यम से उत्तरदाताओं का चयन करके साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से तथ्यों का एकत्रीकरण किया गया है।

| क्रमांक | ग्रामीण महिला उत्तरदाताओं का विवरण | उत्तरदाताओं की संख्या |
|---|---|---|
| | | |
| 1 | सामान्य वर्ग | 75 |
| 2 | अनुसूचित जाति | 75 |
| 3 | अनुसूचित जनजाति | 75 |
| 4 | पिछड़ा वर्ग | 75 |
| | योग | 300 |

**उपकल्पना-** प्रस्तुत शोध पत्र की उपकल्पनाएं इस प्रकार हैं-

1. ग्रामीण महिलाओं को जननी सुरक्षा योजना की  जानकारी है।
2. ग्रामीण महिलाओं में जननी सुरक्षा योजना लागू होने से जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति आई है।

3. ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं को जननी सुरक्षा योजना का लाभ प्राप्त होता है।
4. ग्रामीण क्षेत्र में सभी वर्ग की महिलाओं को जननी सुरक्षा योजना का लाभ प्राप्त हुआ है।
5. जननी सुरक्षा योजना लागू होने से ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर में बदलाव आया है।

## तथ्यों का सारणीयन और विश्लेषण

**तालिका क्रमांक 01**
**अध्ययनरत महिलाओं में जननी सुरक्षा योजना की सांख्यकीय का विवरण**

| क्र. | ग्रामीण महिला उत्तरदाता का विवरण | उत्तरदाताओं की संख्या | जानकारी का विवरण | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | हाँ | नही | दोनो ही स्थिति (पता नही) |
| 01 | सामान्य वर्ग | 75 | 64 | 06 | 05 |
| 02 | अनुसूचित जाति | 75 | 63 | 08 | 04 |
| 03 | अनुसूचित जनजाति | 75 | 62 | 07 | 06 |
| 04 | पिछड़ा वर्ग | 75 | 61 | 09 | 05 |
| | योग | 300 | 250 | 30 | 20 |
| | प्रतिशत | 100 | 83 | 10 | 07 |

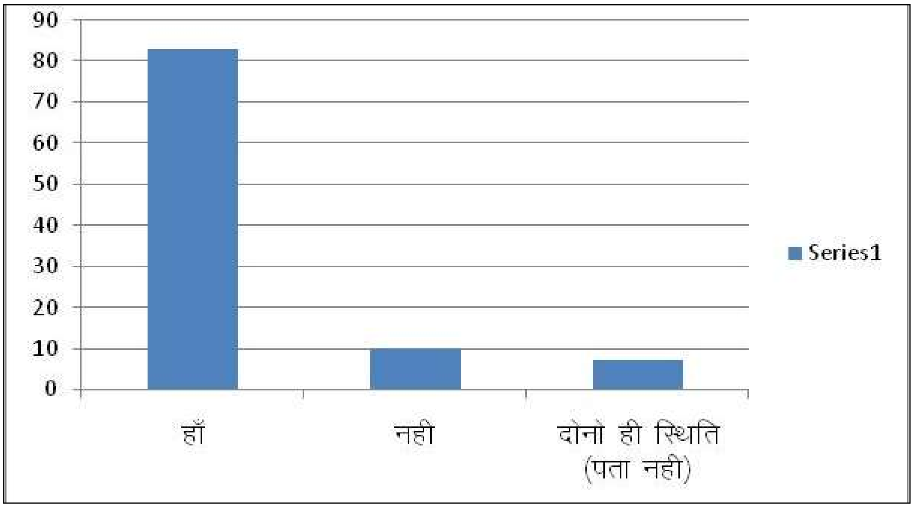


उपरोक्त तालिका से निम्नलिखित तथ्य दृष्टिगोचर होते है–

- 83 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को जननी सुरक्षा योजना की जानकारी पाई गई है। यह महिला एवं बाल दिवस द्वारा ही सम्पन्न हो पाया है।
- 10 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को जननी सुरक्षा योजना की जानकारी नही पाई गई। इनमें अधिकतर वृद्ध तथा अशिक्षित महिला सम्मिलित।
- 07 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता में दोनो ही तरह की स्थिति पाई गई है। उनका कहना है कि जानकारी है और नही थी।
- सामान्य वर्ग की 85 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना की जानकारी है,

08 प्रतिशत महिला को जानकारी नहीहै, और 07 प्रतिशत महिलाओ में दोनो ही तरह की स्थिति पाई गई है, उनका कहना है कि जानकारी है और नही भी।

- अनुसूचित जाति की 84 प्रतिशत महिला में जननी सुरक्षा योजना की जानकारी नही है और 05 प्रतिशत महिलाओं में दोनो ही तरह की स्थिति पाई गई है उनका कहना है कि जानकारी है भी और नही भी।
- अनुसूचित जनजाति की 83 प्रतिशत महिला में जननी सुरक्षा योजना की जानकारी पाई गई है। 09 प्रतिशत महिला को जानकारी नही है, और 08 प्रतिशत महिला उत्तरदाता में दोनो ही तरह की स्थिति पाई गई है उनका कहना है कि जानकारी है भी और नही भी।
- पिछड़ा वर्ग की 81 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना की जानकारी है, 12 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना की जानकारी नही है तथा 07 प्रशित महिला में दोनो ही तरह की स्थिति पाई गई है। उनका कहना है कि जानकारी है भी और नही भी।

**तालिका क्रमांक02**

**जननी सुरक्षा योजना लागू होने से आपके जीवन स्तर में बदलाव आया है?**

| क्र. | ग्रामीण महिला उत्तरदाता का विवरण | उत्तरदाताओं की संख्या | जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | हाँ | नही | कुछ हद तक |
| 01 | सामान्य वर्ग | 75 | 64 | 06 | 05 |
| 02 | अनुसूचित जाति | 75 | 63 | 08 | 04 |
| 03 | अनुसूचित जनजाति | 75 | 62 | 07 | 06 |
| 04 | पिछड़ा वर्ग | 75 | 61 | 09 | 05 |
| | योग | 300 | 250 | 30 | 20 |

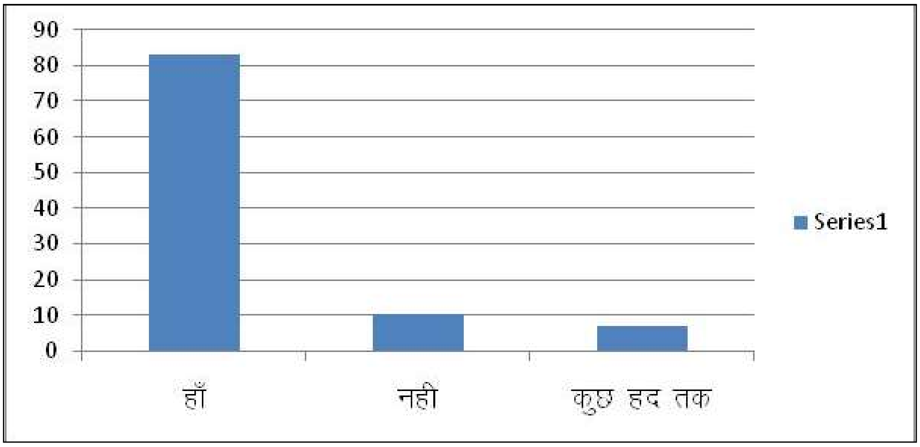


उपरोक्त तालिका से निम्नलिखित तथ्य दृष्टिगोचर होते है–

- 85 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता कोजननी सुरक्षा योजना लागू होने से जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति पाई गई है। यह महिला तथा बाल विकास की योजनाओं द्वारा ही संभव हो पाया है।

- 10 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को जननी सुरक्षा योजना लागू होने से जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति नही पाई गई है।
- 05 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को जननी सुरक्षा योजना लागू होने से कुछ हद तक ही बदलाव की स्थिति पाई गई है, उनमें अशिक्षित तथा वृद्ध महिलाएँ सम्मिलित है।
- सामान्य वर्ग की 87 प्रतिशत महिला में जननी सुरक्षा योजना लागू होने से बदलाव की स्थिति पाई गई है, 08 प्रतिशत महिला में बदलाव नही पाया गया, तथा 05 प्रतिशत महिला में बदलाव नही पाया गया, तथा 05 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता में कुछ हद तक ही बदलाव की स्थिति पाई गई है।
- अनुसूचित जाति की 85 प्रतिशत महिला में जननी सुरक्षा योजना की स्थिति पाई गई है। 11 प्रतिशत महिला में बदलाव की स्थिति नही पाई गई है, तथा 04 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता में कुछ हद तक ही बदलाव की स्थिति पाई गई है।
- अनुसूचित जनजाति की 85 प्रतिशत महिला में जननी सुरक्षा योजना लागू होने से उनके जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति पाई गई है। 09 प्रतिशत ग्रामीण उत्तरदाता में बदलाव की स्थिति नही पाई गई है। तथा 07 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता में कुछ हद तक ही बदलाव की स्थिति पाई गई है।
- पिछड़ा वर्ग की 83 प्रतिशत महिला में जननी सुरक्षा योजना लागू होने से उनके जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति पाई गई है।12 प्रतिशत महिलाओं में बदलाव की स्थिति नही पाई गई है तथा 05 प्रतिशत महिला में कुछ हद तक ही बदलाव की स्थिति पाई गई है, ज्यादा न ज्यादा नही।

**तालिका क्रमांक 03**
**जननी सुरक्षा योजना लागू होने से**
**सरकार द्वारा कुछ सहायता राशि प्राप्त हुई है आपको**

| क्र. | ग्रामीण महिला उत्तरदाता का विवरण | उत्तरदाताओं की संख्या | सरकार द्वारा सहायता राशि का विवरण | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | हाँ | नही | कुछ कह नही सकती। |
| 01 | सामान्य वर्ग | 75 | 63 | 07 | 05 |
| 02 | अनुसूचित जाति | 75 | 62 | 09 | 04 |
| 03 | अनुसूचित जनजाति | 75 | 61 | 08 | 06 |
| 04 | पिछड़ा वर्ग | 75 | 59 | 10 | 06 |
| | योग | 300 | 245 | 34 | 21 |
| | प्रतिशत | 100 | 100 | 11 | 07 |

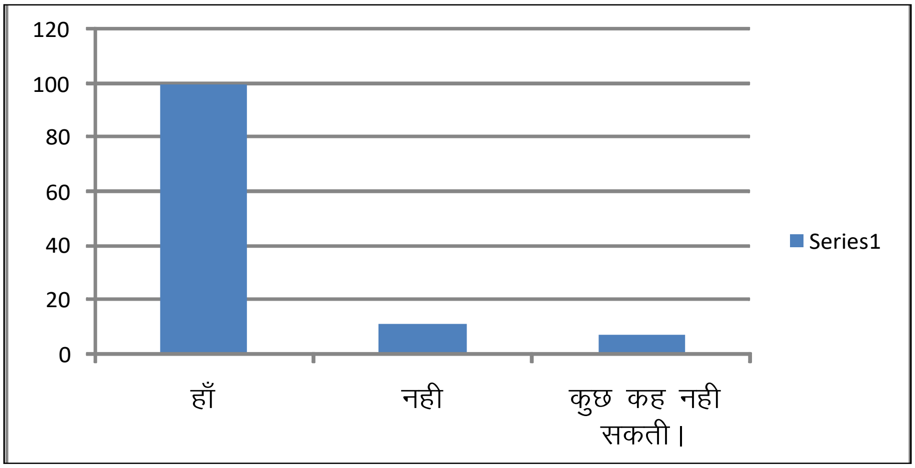


उपरोक्त तालिका से निम्नलिखित तथ्य दृष्टिगोचर होते है–

- 82 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता कोजननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई  पाई गई है। यह महिला एवं बाल विकास योजना के द्वारा ही संयम हो पाया है।
- 11 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता कोजननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा कोई सहायता राशि प्राप्त नही हुई है।
- 07 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- सामान्य वर्ग की 84 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है, 09 प्रतिशत महिला को सहायता राशि  प्राप्त नही हुई पाई गई है, तथा 07 प्रतिशत महिला ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- अनुसूचित जाति की 83 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है, 12 प्रतिशत को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है तथा 05 प्रतिशत महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- अनुसूचित जनजाति की 81 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना लागू होने सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है, 11 प्रतिशत महिला को सरकार द्वारा सहायता राशि प्रापत नही हुई है तथा 08 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- पिछड़ा वर्ग की 79 प्रतिशत महिला का जननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है। 13 प्रतिशत महिला उत्तरदाता को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है। तथा 08 ग्रामीण महिला उत्तरदाता ने इस संबंध मे किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।

**तालिका क्रमांक-4**
**अस्पताल में सुरक्षित प्रसव कराने पर**
**जननी सुरक्षा योजना में नगद भुगतान किया जाता है?**

| क्र. | ग्रामीण महिला उत्तरदाता का विवरण | उत्तरदाताओं की संख्या | नगद भुगतान की जानकारी का विवरण | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | हाँ | नही | दोनो ही स्थिति |
| 01 | सामान्य वर्ग | 75 | 65 | 07 | 03 |
| 02 | अनुसूचित जाति | 75 | 64 | 08 | 03 |
| 03 | अनुसूचित जनजाति | 75 | 63 | 07 | 05 |
| 04 | पिछड़ा वर्ग | 75 | 62 | 09 | 04 |
| | योग | 300 | 254 | 31 | 15 |
| | प्रतिशत | 100 | 85 | 10 | 05 |

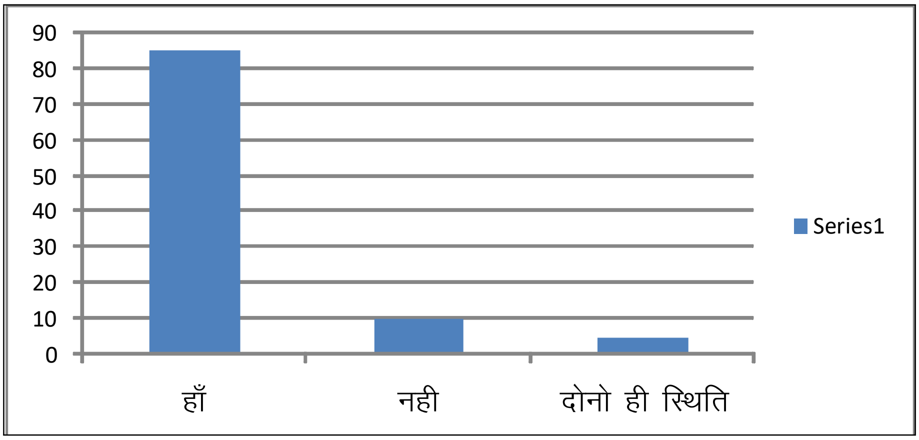


उपरोक्त तालिका से निम्नलिखित तथ्य दृष्टिगोचर होते है-

- 85 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को अस्पताल में सुरक्षित प्रसव कराने पर जननी सुरक्षा योजना में नगद भुगतान की जानकारी पाई गई है। यह विकासीय योजनाओं द्वारा ही संभव हो पाया है।
- 10 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को अस्पताल में सुरक्षित प्रसव कराने पर जननी सुरक्षा योजना में नगद भुगतान की कोई जानकारी नही पाई गई है।
- 05 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को इस संबंध में दोनो ही स्थिति पाई गई है उनका कहना है कि जानकारी है भी और नही भी।
- सामान्य वर्ग की 87 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को अस्पताल में सुरक्षित प्रसव कराने पर जननी सुरक्षा योजना मं नगद भुगतान की जानकारी पाई गई है, 09 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को इस संबंध में कोई जानकारी नई पाई गई है तथा 04 प्रतिशत महिला में दोनो ही स्थिति पाई गई है। उनका कहना है कि जानकारी है भी और नही भी।
- अनुसूचित जाति की 85 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को अस्पताल मे सुरक्षित प्रसव कराने पर जननी सुरक्षा योजना मे नगद भुगतान की जानकारी पाई गई है। 12 प्रतिशत को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है, तथा 05 प्रतिशत महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।

- अनुसूचित जनजाति की 81 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना लागू होने सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है। 11 प्रतिशत महिला को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है तथा 08 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- पिछड़ा वर्ग की 79 प्रतिशत महिला का जननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है। 13 प्रतिशत महिला उत्तरदाता को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है तथा 08 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।

**उपकल्पनाओं का सत्यापन-**

1. उपरोक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 01 ग्रामीण महिलाओं को जननी सुरक्षा योजना की जानकारी है। पूर्ण रूप से सिद्ध होती है।
2. तथ्यों के विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 02 ग्रामीण महिलाओं में जननी सुरक्षा योजना लागू होने से जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति आई है, सही पाई गई।
3. तत्वों के विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 03 ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं को जननी सुरक्षा योजना का लाभ प्राप्त होता है, सत्य पाई गई।
4. तथ्यों के विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 04 ग्रामीण क्षेत्र में सभी वर्ग की महिलाओं को जननी सुरक्षा योजना का लाभ प्राप्त हुआ है, सत्य पाई गई।
5. तथ्यों के विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 05 ग्रामीण महिला उत्तरदाता को जननी सुरक्षा योजना लागू होने से जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति पाई गई है। सही पाई गई है।

**निष्कर्ष-**

- 85 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता कोजननी सुरक्षा योजना लागू होने से जीवन स्तर में बदलाव की स्थिति पाई गई है। यह महिला तथा बाल विकास की योजनाओं द्वारा ही संभव हो पाया है।
- 82 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता कोजननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है। यह महिला एवं बाल विकास योजना के द्वारा ही संयम हो पाया है।
- अनुसूचित जाति की 83 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है, 12 प्रतिशत को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है तथा 05 प्रतिशत महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- 85 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को अस्पताल में सुरक्षित प्रसव कराने पर जननी सुरक्षा योजना में नगद भुगतान की जानकारी पाई गई है। यह विकासीय योजनाओं द्वारा ही संभव हो पाया है।
- सामान्य वर्ग की 87 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को अस्पताल में सुरक्षित प्रसव कराने पर जननी सुरक्षा योजना मं नगद भुगतान की जानकारी पाई गई है,

09 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को इस संबंध में कोई जानकारी नई पाई गई है तथा 04 प्रतिशत महिला में दोनो ही स्थिति पाई गई है। उनका कहना है कि जानकारी है भी और नही भी।

- अनुसूचित जाति की 85 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता को अस्पताल मे सुरक्षित प्रसव कराने पर जननी सुरक्षा योजना मे नगद भुगतान की जानकारी पाई गई है। 12 प्रतिशत को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है, तथा 05 प्रतिशत महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- अनुसूचित जनजाति की 81 प्रतिशत महिला को जननी सुरक्षा योजना लागू होने सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है। 11 प्रतिशत महिला को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है तथा 08 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।
- पिछड़ा वर्ग की 79 प्रतिशत महिला का जननी सुरक्षा योजना लागू होने से सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त हुई पाई गई है। 13 प्रतिशत महिला उत्तरदाता को सरकार द्वारा सहायता राशि प्राप्त नही हुई है तथा 08 प्रतिशत ग्रामीण महिला उत्तरदाता ने इस संबंध में किसी स्पष्ट मत का उल्लेख नही किया है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


1. महिला सशक्तिकरण, अभी बाकी है जंग जीतना, दैनिक जागरण, जनवरी 2018
2. सामाजिक परिवर्तन में महिलाओं की भूमिका, क्रानिकल दिल्ली, जून 2021
3. स्त्री मुक्ति से हुंकार, राजस्थान पत्रिका, 29 मार्च 2022
4. योजना, नई दिल्ली, मार्च 2022
5. महिला सशक्तिकरण की क्रान्तिकारी पहल, प्रतियोगिता दर्पण, मार्च 2021
6. मध्य प्रदेश जनसंपर्क विभाग, मध्य प्रदेश शासन से प्राप्त जानकारी
7. Ahlawat, Neerja (2005), 'Domestic Violence against women: Emerging concerns in Rural Haryana'. ***Social Action***. Vol. 55.
8. Ahlawat, Neerja (2008), 'Violence against women: Voices from the Field'. (ed.)in Manjit Singh and D. P. Singh, ***Violence Impact and Intervention***, Atlantic, New Delhi.
9. Bhattacharya, Rinki (2004), ***'Behind Closed Doors : Domestic Violence in India'***, Sage Publication, New Delhi.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# व्यक्तित्व संवेगों को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन

• विनेता

**सारांश- व्यक्तित्व और भावनाएँ मानव व्यवहार के दो सबसे महत्वपूर्ण पहलू हैं। वे प्रभावित करते हैं कि हम अपने जीवन के सभी क्षेत्रों में कैसे सोचते हैं, महसूस करते हैं और व्यवहार करते हैं। हालांकि ऐसा कोई एक कारक नहीं है जो निश्चित रूप से यह बता सके कि हम जैसे हैं वैसे क्यों हैं, ऐसे कई कारक हैं जो हमारे व्यक्तित्व और भावनाओं को प्रभावित कर सकते हैं। व्यक्तित्व भावनाओं को भी प्रभावित कर सकता है। उदाहरण के लिए, जो लोग विक्षिप्तता में उच्च हैं वे चिंता, क्रोध और उदासी जैसी नकारात्मक भावनाओं का अनुभव करने की अधिक संभावना रखते हैं। जो लोग बहिर्मुखता में उच्च होते हैं, वे सकारात्मक भावनाओं का अनुभव करने की अधिक संभावना रखते हैं, जैसे खुशी, उत्साह और उत्साह। ऐसे कई तरीके हैं जिनसे व्यक्तित्व भावनाओं को प्रभावित कर सकता है। उदाहरण के लिए, अलग-अलग व्यक्तित्व वाले लोगों के पास घटनाओं की व्याख्या करने और प्रतिक्रिया देने के अलग-अलग तरीके हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति जो विक्षिप्तता में उच्च है, एक छोटी सी असफलता को एक बड़ी आपदा के रूप में व्याख्या कर सकता है, जबकि एक व्यक्ति जो विक्षिप्तता में कम है, उसके द्वारा इसे दूर करने की संभावना अधिक हो सकती है।**

**मुख्य शब्द - व्यक्तित्व संवेग, भावनाएँ, मानव व्यवहार**

**भूमिका-** भावनाएँ व्यक्तित्व को भी प्रभावित कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, जो लोग चिंता और अवसाद जैसी पुरानी नकारात्मक भावनाओं का अनुभव करते हैं, उनमें निराशावाद और कम आत्म-सम्मान जैसे व्यक्तित्व लक्षण विकसित हो सकते हैं। ऐसे कई तरीके हैं जिनसे भावनाएं व्यक्तित्व को प्रभावित कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, भावनाएँ हमारे विचारों, व्यवहारों और संबंधों को प्रभावित कर सकती हैं। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति जो क्रोधित महसूस कर रहा है, उसके दूसरों पर प्रहार करने की संभावना अधिक हो सकती है, जबकि एक व्यक्ति जो खुश महसूस कर रहा है, उसके सहायक और सहायक होने की अधिक संभावना हो सकती है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि ये कुछ ऐसे कारक हैं जो व्यक्तित्व और भावनाओं को प्रभावित कर सकते हैं। प्रत्येक कारक का सापेक्ष महत्व एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न होने की संभावना है।

• प्रभारी, मनोविज्ञान विभाग, इस्माईल नेशनल महिला पी.जी. कॉलेज

व्यक्तित्व एक सर्व-समावेशी अवधारणा है। यह एक विशिष्ट और अद्वितीय इंसान के रूप में एक व्यक्ति के गुणों का कुल योग है। बाहरी गुण प्रत्यक्ष रूप से देखे जाते हैं जबकि आंतरिक केवल प्रत्यक्ष प्रतिक्रियाओं के पैटर्न से अनुमानित होते हैं। इस प्रकार, किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की छवि केवल उसके प्रतिक्रिया पैटर्न के बारे में टिप्पणियों औरध्या अनुमानों से बनाई जाती है। व्यक्तित्व की ज्3म अवधारणा एक व्युत्पन्न अवधारणा है दूसरे शब्दों में, व्यक्तित्व की अवधारणा व्यक्ति की प्रतिक्रिया विशेषता के पैटर्न से ली गई है।

व्यक्तित्व में वे व्यवहार पैटर्न शामिल होते हैं जो एक व्यक्ति स्थिति में दिखाता है या व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक विशेषताएं जो उन व्यवहार पैटर्न को जन्म देती हैं। व्यक्तित्व एक व्यक्ति के व्यवहार का कुल गुण है जैसा कि उसकी आदत, सोच, दृष्टिकोण, रुचि, उसके अभिनय के तरीके और उसके जीवन के व्यक्तिगत दर्शन में दिखाया गया है। यह उसके होने की समग्रता है। इसमें उसका शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और स्वभाव शामिल है और यह व्यवहार में खुद को कैसे दिखाता है। किसी व्यक्ति के बारे में बातचीत के दौरान कुछ अवसरों पर सभी वर्गों के लोगों द्वारा व्यक्तित्व शब्द का उपयोग किया जाता है। संबंधित व्यक्ति युवा या वृद्ध, पुरुष या महिला, साधारण प्रकार का व्यक्ति या महान प्रतिष्ठा वाला व्यक्ति हो सकता है। भले ही वे उस व्यक्ति को बहुत अच्छी तरह से जानते हों या बस दूसरों के कहने से जानते हों। वे व्यक्ति को कुछ विशेषताओं का श्रेय देते हैं और कुछ सुखद शब्दों के साथ प्रशंसा करते हैं कि वह एक आकर्षक, सुखद, सहमत, गतिशील, मित्रवत, निर्विवाद, उत्कृष्ट क्षमता वाला व्यक्ति है और इसी तरह यह भी कहा जा सकता है कि उसका व्यक्तित्व बहुत अच्छा है। वे आकर्षक होते हैं या व्यक्ति इतना अच्छा दिखने वाला नहीं होता है, बहुत जबरदस्त, मित्रवत नहीं होता है और झगड़ालू होता है। इस प्रकार व्यक्ति को कुछ लक्षणों या विशेषताओं के रूप में वर्णित किया जाता है। यह वही है जो हम सामान्य ज्ञान की दुनिया में व्यक्तित्व की अवधारणा का उपयोग करते हुए देखते हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि हम जो नहीं कह सकते हैं कि सामान्य ज्ञान के अवलोकन पूरी तरह से गलत या गलत हैं। सामाजिक आकर्षण के रूप में मनोवैज्ञानिक की यही स्थिति है।

एक व्यक्ति के व्यवहार के लिए स्थिरता और व्यक्तित्व। यह विभिन्न शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और पर्यावरणीय कारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है। व्यक्तित्व को मानसिक, शारीरिक और नैतिक गुणों के संयोजन के रूप में कहा जा सकता है जो एक हिस्से को दूसरों से अलग करता है। मजबूत व्यक्तित्व सफलता की कुंजी है। यह अच्छे नेतृत्व का एक प्रमुख निर्धारक भी है। एक अच्छा व्यक्तित्व व्यक्ति को स्वतंत्रता की वास्तविकता की खोज के लिए आत्म-नियंत्रण और आत्म-दिशा स्थापित करने में सक्षम बनाता हैय की पसंद। सकारात्मक दृष्टिकोण वाला व्यक्ति अपने विचारों को निर्देशित कर सकता है, अपनी भावनाओं को नियंत्रित कर सकता है और अपने दृष्टिकोण को नियंत्रित कर सकता है। एक अच्छे व्यक्तित्व के लिए आत्म विकास की आवश्यकता होती है। एक कार्यकारी का स्व उन सभी का कुल योग है जिसे वह अपना कह सकता है।

व्यक्तित्व एक अवधारणा है जिसका उपयोग विभिन्न स्थितियों में व्यवहार की

स्थिरता और निरंतरता, व्यक्ति की विशिष्टता और व्यक्तिगत अंतरों को पहचानने के लिए किया जाता है। व्यक्तित्व को परिभाषित करने के लिए मनोवैज्ञानिकों के बीच विवाद हैं। व्यक्तित्व शब्द लैटिन शब्द पर्सोना से लिया गया है, पहले इस शब्द का प्रयोग प्राचीन काल में अभिनेताओं द्वारा मुखौटा पहनने के लिए किया जाता था, दर्शकों को यह इंगित करने के लिए कि क्या उन्होंने नाटक में खलनायक या नायक की भूमिका निभाई है, इस प्रकार मुखौटा ने दिया अभिनेता उसकी विशेषताओं सुविधाएँ।

**व्यक्तित्व संवेगों को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन-** व्यक्तित्व और भावनाओं पर शोध एक बढ़ता हुआ क्षेत्र है, और अभी भी बहुत कुछ ऐसा है जो हम नहीं जानते हैं। हालाँकि, अब तक किए गए शोध से उन कारकों में मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिलती है जो हमारे व्यक्तित्व और भावनात्मक विकास को प्रभावित कर सकते हैं। इस जानकारी का उपयोग हमें खुद को बेहतर ढंग से समझने और चुनौतियों का सामना करने और सकारात्मक भावनाओं को बढ़ावा देने के लिए रणनीति विकसित करने में मदद करने के लिए किया जा सकता है। यहाँ कुछ सबसे महत्वपूर्ण कारक हैं जो व्यक्तित्व और भावनाओं को प्रभावित कर सकते हैं-

- हमारे जीन हमारे व्यक्तित्व और भावनाओं को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अध्ययनों से पता चला है कि विक्षिप्तता, बहिर्मुखता और सहमतता जैसे व्यक्तित्व लक्षणों के लिए एक मजबूत आनुवंशिक घटक है।
- स्वभाव कुछ स्थितियों में कुछ खास तरीकों से प्रतिक्रिया करने की एक जैविक प्रवृत्ति है। उदाहरण के लिए, कुछ लोग स्वाभाविक रूप से अधिक मिलनसार और सक्रिय होते हैं, जबकि अन्य अधिक आरक्षित और शर्मीले होते हैं। स्वभाव को आनुवंशिकी और शुरुआती अनुभव दोनों से प्रभावित माना जाता है।
- हमारे शुरुआती अनुभव, जैसे हमारे माता-पिता और देखभाल करने वालों के साथ हमारे संबंध, हमारे व्यक्तित्व और भावनाओं पर गहरा प्रभाव डाल सकते हैं। उदाहरण के लिए, जो बच्चे सहायक और प्रेमपूर्ण वातावरण में बड़े होते हैं, उनमें स्वयं की सकारात्मक भावना विकसित होने और तनाव का प्रभावी ढंग से सामना करने में सक्षम होने की संभावना अधिक होती है। इसके विपरीत, जो बच्चे अपमानजनक या उपेक्षित वातावरण में बड़े होते हैं उनमें क्रोध, चिंता और अवसाद जैसी नकारात्मक भावनाएँ विकसित होने की संभावना अधिक होती है।
- संस्कृति भी हमारे व्यक्तित्व और भावनाओं को आकार देने में भूमिका निभा सकती है। उदाहरण के लिए, कुछ संस्कृतियों में मुखर और आउटगोइंग होना अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, जबकि अन्य संस्कृतियों में विनम्र और आरक्षित होना अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है।
- हमारे जीवन के अनुभव, सकारात्मक और नकारात्मक दोनों, हमारे व्यक्तित्व और भावनाओं को भी आकार दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, जिन लोगों ने आघात या हानि का अनुभव किया है उनमें चिंता, अवसाद और अन्य नकारात्मक भावनाओं का अनुभव होने की संभावना अधिक होती है। इसके विपरीत, जिन लोगों ने सफलता या प्यार जैसे सकारात्मक अनुभवों का अनुभव

किया है, वे खुशी और संतोष जैसी सकारात्मक भावनाओं का अनुभव करने की अधिक संभावना रखते हैं।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि व्यक्तित्व और भावनाएं स्थिर नहीं हैं। वे नए अनुभवों, रिश्तों और चुनौतियों जैसे विभिन्न कारकों के जवाब में समय के साथ बदल सकते हैं। व्यक्तित्व और भावनाओं को प्रभावित करने वाले कारकों को समझने से हमें खुद को और दूसरों को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिल सकती है। यह हमें नकारात्मक भावनाओं से मुकाबला करने और सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए रणनीति विकसित करने में भी मदद कर सकता है। अपनी भावनाओं को प्रबंधित करने के लिए यहां कुछ अतिरिक्त सुझाव दिए गए हैं–

- अपने ट्रिगर्स को पहचानें वे कौन सी चीजें हैं जो आपको क्रोधित, दुखी, चिंतित, या तनावग्रस्त महसूस कराती हैं? एक बार जब आप अपने ट्रिगर्स को जान लेते हैं, तो आप उनसे बचने या स्वस्थ तरीके से मुकाबला करने के लिए रणनीति विकसित करना शुरू कर सकते हैं।
- अपना ख्याल रखें सुनिश्चित करें कि आप पर्याप्त नींद ले रहे हैं, स्वस्थ आहार खा रहे हैं, और नियमित रूप से व्यायाम कर रहे हैं। ये गतिविधियाँ आपके मूड को बेहतर बनाने और तनाव को कम करने में मदद कर सकती हैं।
- रिलैक्सेशन तकनीकों का अभ्यास करें। रिलैक्सेशन की कई तकनीकें हैं जो तनाव को कम करने और नकारात्मक भावनाओं को प्रबंधित करने में मदद कर सकती हैं। कुछ लोकप्रिय तकनीकों में गहरी साँस लेना, ध्यान और योग शामिल हैं।
- किसी ऐसे व्यक्ति से बात करें जिस पर आप भरोसा करते हैं, यदि आप अपनी भावनाओं को प्रबंधित करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, तो किसी ऐसे व्यक्ति से बात करना मददगार हो सकता है जिस पर आप भरोसा करते हैं, जैसे कि एक दोस्त, परिवार के सदस्य, चिकित्सक या परामर्शदाता। अपनी भावनाओं के बारे में बात करने से आपको उन्हें बेहतर ढंग से समझने और स्वस्थ मुकाबला तंत्र विकसित करने में मदद मिल सकती है।

सहमतता सहयोग और सामाजिक सद्भाव के संबंध में व्यक्तिगत मतभेदों को दर्शाती है। दूसरों के साथ मिलकर व्यक्तिगत मूल्यों की सहमति। इसलिए वे विचारशील, मित्रवत, उदार, मददगार और दूसरों के साथ अपने हितों से समझौता करने के इच्छुक होते हैं। सहमत लोगों का मानव स्वभाव के प्रति आशावादी दृष्टिकोण भी होता है। उनका मानना है कि लोग मूल रूप से ईमानदार, सभ्य और भरोसेमंद होते हैं। असहमत व्यक्ति दूसरों के साथ घुलने–मिलने से ऊपर स्वार्थ को रखते हैं। वे आम तौर पर दूसरों की भलाई के प्रति उदासीन होते हैं और इसलिए अन्य लोगों के लिए खुद को विस्तारित करने की संभावना नहीं होती है। कभी–कभी दूसरों के इरादों के बारे में उनका संदेह उन्हें संदिग्ध, अमित्र और असहयोगी बनाता है।

कर्तव्यनिष्ठा का संबंध उस तरीके से है जिससे हम अपने आवेगों को नियंत्रित, नियंत्रित और निर्देशित करते हैं। आवेग स्वाभाविक रूप से खराब नहीं होते हैंय

कभी-कभी समय की कमी के कारण त्वरित निर्णय की आवश्यकता होती है और हमारे पहले आवेग पर कार्य करना एक प्रभावी प्रतिक्रिया हो सकती है। काम के बजाय खेल के समय भी, अनायास और आवेगपूर्ण अभिनय करना मजेदार हो सकता है। आवेगी व्यक्ति को दूसरे लोग रंगीन, साथ रहने में मजेदार और बौड़म के रूप में देख सकते हैं। बहरहाल, आवेग पर काम करने से कई तरह से परेशानी हो सकती है। कुछ आवेग असामाजिक होते हैं। अनियंत्रित असामाजिक कार्य न केवल समाज के अन्य सदस्यों को नुकसान पहुँचाते हैं, बल्कि इस तरह के आवेगपूर्ण कृत्यों के अपराधी के प्रति प्रतिशोध भी हो सकते हैं। आवेगी कृत्यों के साथ एक और समस्या यह है कि वे अक्सर तत्काल पुरस्कार लेकिन अवांछनीय, दीर्घकालिक परिणाम उत्पन्न करते हैं। उदाहरणों में अत्यधिक सामाजिक मेलजोल शामिल है जिसके कारण किसी को नौकरी से निकाल दिया जाता है, ऐसा अपमान करना जो एक महत्वपूर्ण रिश्ते को तोड़ देता है, या आनंददायक दवाओं का उपयोग करना जो अंतत: किसी के स्वास्थ्य को नष्ट कर देता है।

खुलापन संज्ञानात्मक शैली के एक आयाम का वर्णन करता है जो कल्पनाशील, रचनात्मक लोगों को जमीन से जुड़े पारंपरिक लोगों से अलग करता है। खुले लोग बौद्धिक रूप से कला की सराहना करने वाले और सौंदर्य के प्रति संवेदनशील होते हैं। उनकी तुलना बंद लोगों से की जाती है, जो उनकी भावनाओं के बारे में अधिक जागरूक होते हैं। वे व्यक्तिवादी और गैर-अनुरूप तरीकों से सोचते और कार्य करते हैं। बुद्धिजीवी आमतौर पर खुलेपन पर उच्च स्कोर करते हैं, फलस्वरूपय इस कारक को बुद्धि भी कहा गया है।

फ्रायड ने मूल रूप से न्यूरोसिस शब्द का इस्तेमाल मानसिक संकट, भावनात्मक पीड़ा और जीवन की सामान्य मांगों के साथ प्रभावी ढंग से सामना करने में असमर्थता से चिह्नित स्थिति का वर्णन करने के लिए किया था। उन्होंने सुझाव दिया कि हर कोई नेवरोसिस के कुछ लक्षण दिखाता है, लेकिन हम अपनी पीड़ा की डिग्री और संकट के हमारे विशिष्ट लक्षणों में भिन्न होते हैं। आज विक्षिप्तता नकारात्मक भावना का अनुभव करने की प्रवृत्ति को संदर्भित करती है।

मनोविज्ञान का लक्ष्य इन मनोवैज्ञानिक संचालनों को मनोवैज्ञानिक आदिमों के रूप में पहचानना है, या सबसे बुनियादी मनोवैज्ञानिक विवरण जिन्हें आगे किसी अन्य मानसिक रूप में कम नहीं किया जा सकता है (क्योंकि उस बिंदु पर वे जैविक तंत्र का वर्णन करेंगे)। ये बुनियादी मनोवैज्ञानिक संचालन किसी भी असतत भावना श्रेणी के लिए कार्यात्मक रूप से विशिष्ट नहीं हैं, या यहां तक कि श्रेणी भावना के लिए भी। इसके बजाय, वे कुछ अवसरों पर भावनाओं के लिए कार्यात्मक रूप से चयनात्मक होते हैं। क्योंकि हमारा अपना मॉडल अपेक्षाकृत नया है, हमारे वर्तमान म,डल ने मनोवैज्ञानिक विवरण के सबसे आदिम स्तर की पहचान नहीं की है, और यह अभी तक निश्चित रूप से दावा करना संभव नहीं है कि मन के सबसे बुनियादी मनोवैज्ञानिक संचालन क्या हैं।

दूसरी ओर, कोर इफेक्ट एक ऐसा शब्द है जिसका उपयोग शारीरिक परिवर्तनों के मानसिक प्रतिनिधित्व का वर्णन करने के लिए किया जाता है, जो कभी-कभी कुछ हद तक उत्तेजना के साथ सुखद आनंद और नाराजगी की भावनाओं के रूप में अनुभव

किया जाता है। मुख्य प्रभाव आंशिक रूप से आंतों के नियंत्रण प्रणालियों द्वारा महसूस किया जाता है जो जीवों को पर्यावरण में प्रेरक रूप से प्रमुख उत्तेजनाओं से निपटने में मदद करते हैं। एक कार्यशील परिधीय तंत्रिका तंत्र किसी व्यक्ति के लिए एक मूल भावात्मक स्थिति का अनुभव करने के लिए आवश्यक नहीं है, जब तक कि उनके पास शारीरिक अवस्थाओं के केंद्रीय तंत्रिका तंत्र का प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए कुछ पूर्व अनुभव हों। हालांकि, स्वस्थ व्यक्तियों में, कोर प्रभाव आमतौर पर सोमाटोविसरल, काइनेस्टेटिक, प्रोप्रियोसेप्टिव और न्यूरोकेमिकल उतार-चढ़ाव के साथ होता है जो शरीर के कोर के भीतर होता है और मस्तिष्क में प्रदर्शित होता है। मुख्य प्रभाव में परिवर्तन एक होमियोस्टैटिक बैरोमीटर हैं, यह दर्शाने का शरीर का तरीका है कि पर्यावरण में वस्तुएं मूल्यवान हैं या किसी दिए गए संदर्भ में नहीं हैं।

सभी मनोवैज्ञानिक निर्माणवादी मॉडलों में एक दूसरा बुनियादी मनोवैज्ञानिक ऑपरेशन शामिल होता है जिसके द्वारा आंतरिक संवेदी संकेत या उनसे जुड़ी भावात्मक भावनाएं स्वचालित रूप से और सहजता से सार्थक हो जाती हैं।

अवधारणा की प्रक्रिया (और अन्य संचालन जो इसका समर्थन करते हैं, जैसे कि कार्यकारी ध्यान) दुनिया से संवेदी इनपुट की धारणा को शरीर से इनपुट के साथ एक सार्थक मनोवैज्ञानिक क्षण बनाने के लिए जोड़ता है। हमारी परिकल्पना में, लोग स्वचालित रूप से एक वस्तु या घटना से जुड़ी एक स्थित अवधारणा में संलग्न होकर अपने मूल भावनात्मक स्थिति का अर्थ बनाते हैं। संकल्पना वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा पूर्व के अनुभवों (यानी, यादें, ज्ञान) के संग्रहीत अभ्यावेदन का उपयोग पल में संवेदनाओं से अर्थ निकालने के लिए किया जाता है।

एक व्यक्ति स्थित अवधारणा बना सकता है कि मूल प्रभाव एक शारीरिक लक्षण है (जैसे, एक रेसिंग दिल), एक साधारण भावना (जैसे, थकान महसूस करना या घायल होना), या असतत भावना श्रेणी का उदाहरण (जैसे, क्रोध बनाम भय) और दूसरी बार, मूल प्रभाव को किसी वस्तु की प्रतिक्रिया के बजाय स्वयं के हिस्से के रूप में माना जाता है। उदाहरण के लिए, एक भोजन स्वादिष्ट या अरुचिकर है, एक पेंटिंग सुंदर या भड़कीली है, या एक व्यक्ति अच्छा या बुरा है। क्योंकि हम परिकल्पना करते हैं कि लोग संदर्भ में अपने मूल भावनात्मक राज्यों का अर्थ बनाते हैं, उन्हें भावना, धारणा, विश्वास या निर्णय के हिस्से के रूप में अनुभव करते हैं, एक मनोवैज्ञानिक निर्माणवादी खाता केवल भावनाओं की श्रेणी को सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव से कम नहीं करता है।

कई मूल्यांकन मॉडल में, धारणा यह है कि मस्तिष्क में विशिष्ट संज्ञानात्मक मूल्यांकन तंत्र की एक श्रृंखला होती है (उदाहरण के लिए, किसी वस्तु की नवीनता का मूल्यांकन करने के लिए एक विशिष्ट तंत्र है, या किसी के लक्ष्य अवरुद्ध हैं) जो एक विशेष पैटर्न में कॉन्फिगर किए जाने पर, असतत भावनाओं को ट्रिगर करें। हमारे मॉडल में, हम भावनाओं को पैदा करने वाली किसी नई या अनूठी मानसिक प्रक्रिया का प्रस्ताव नहीं करते हैंय इसके बजाय, हम एक तंत्र (वर्गीकरण) का प्रस्ताव करते हैं जिसे मनोवैज्ञानिक और संज्ञानात्मक तंत्रिका विज्ञान साहित्य में अच्छी तरह से प्रलेखित किया गया है।

वर्गीकरण (या अवधारणा) मानव मस्तिष्क में एक मौलिक प्रक्रिया है जो एक

छेनी की तरह कार्य करती है, जो लोगों को एक संवेदी सरणी में कुछ विशेषताओं में भाग लेने और दूसरों की उपेक्षा करने के लिए प्रेरित करती है। हमारे रेटिना से टकराने वाले प्रकाश के केवल कुछ तरंगदैर्घ्य ही दृश्य वस्तुओं में परिवर्तित होते हैं, हमारे कानों में पंजीकृत वायु दाब में केवल कुछ परिवर्तन ही शब्दों या संगीत के रूप में सुने जाते हैं, और केवल कुछ शारीरिक परिवर्तनों को भावना के रूप में अनुभव किया जाता है। किसी चीज को वर्गीकृत करना उसे सार्थक बनाना है। तब यह संभव हो जाता है कि हम उस चीज के बारे में उचित अनुमान लगा सकें, भविष्यवाणी कर सकें कि इसके साथ क्या किया जाए, और इसके बारे में अपने अनुभव को दूसरों तक पहुँचाना।

कार्यकारी ध्यान एक भावनात्मक गेस्टाल्ट उत्पन्न करने के लिए अन्य मनोवैज्ञानिक संचालन के संयोजन को निर्देशित करने में मदद करता है। किसी भी समय, मस्तिष्क शरीर से जानकारी (मुख्य प्रभाव), शरीर के बाहर से जानकारी (बाहरी संवेदी जानकारी), और पूर्व अनुभवों (अवधारणाओं) का प्रतिनिधित्व करता है। उदाहरण के लिए, अतीत के कई अलग-अलग अभ्यावेदन एक मूल भावात्मक स्थिति का अर्थ बनाने के लिए सक्रिय हो सकते हैं।

कार्यकारी ध्यान यह भी नियंत्रित कर सकता है कि अतिरिक्त प्रसंस्करण के लिए कौन से बहिर्मुखी संवेदी अभ्यावेदन का समर्थन किया जाता है, या यदि जागरूकता में मुख्य प्रभाव को सचेत रूप से दर्शाया जाता है। महत्वपूर्ण रूप से, कार्यकारी ध्यान को स्वैच्छिक या प्रयासपूर्ण नहीं होना चाहिए और व्यक्तिपरक अनुभव उत्पन्न होने से पहले अच्छी तरह से काम कर सकता है।

संगति इस तथ्य को संदर्भित करती है कि एक मस्तिष्क क्षेत्र भावना श्रेणी के प्रत्येक उदाहरण के लिए बढ़ी हुई गतिविधि दिखाता है (उदाहरण के लिए, एमिग्डाला हर बार बढ़ी हुई गतिविधि दिखाता है जब कोई व्यक्ति श्रेणी भय का एक उदाहरण अनुभव करता है)। विशिष्टता इस तथ्य को संदर्भित करती है कि एक दिया गया मस्तिष्क क्षेत्र एक (और केवल एक) भावना श्रेणी के उदाहरणों के लिए सक्रिय है (उदाहरण के लिए, अमिगडाला बढ़ी हुई गतिविधि नहीं दिखाता है जब कोई व्यक्ति क्रोध, घृणा, खुशी या उदासी का उदाहरण अनुभव कर रहा हो) . इसके विपरीत, एक मनोवैज्ञानिक निर्माणवादी दृष्टिकोण के लिए समर्थन पाया जाएगा यदि एक ही मस्तिष्क क्षेत्र (ओं) कई भावना श्रेणियों के उदाहरणों को साकार करने में शामिल थे- और, इसके अलावा, यदि मस्तिष्क क्षेत्र (क्षेत्रों) एक बुनियादी को साकार करने के लिए आम तौर पर अधिक महत्वपूर्ण हैं मनोवैज्ञानिक संचालन (जैसे, मूल प्रभाव, अवधारणा, भाषा, या कार्यकारी ध्यान)।

एक मनोवैज्ञानिक निर्माणवादी दृष्टिकोण से, भय उत्प्रेरण उत्तेजना अनिश्चित और इसलिए प्रमुख उत्तेजनाओं की श्रेणी में आ सकती है, लेकिन प्रमस्तिष्क खंड भय श्रेणी के लिए विशिष्ट नहीं है। इस दृष्टिकोण के अनुरूप, प्रमस्तिष्क खंड नियमित रूप से प्रेरक रूप से प्रासंगिक उत्तेजनाओं के प्रति उन्मुख प्रतिक्रियाओं में फंसा हुआ है।

इसके अलावा, मस्तिष्क के अन्य क्षेत्रों में संयोग से जो अपेक्षा की जाएगी, उसकी तुलना में भय के अनुभव के उदाहरणों ने या तो अमिगडाला में सक्रियता में

लगातार वृद्धि नहीं दिखाई। फिर भी, अन्य मस्तिष्क क्षेत्रों की तुलना में, द्विपक्षीय अमिगडाला के भीतर स्वरों में अन्य भावना श्रेणियों के अनुभव की तुलना में घृणित अनुभव के उदाहरणों के दौरान सक्रियता में लगातार वृद्धि हुई थी।

हमारे मेटा-विश्लेषणात्मक निष्कर्ष स्थानवादी खाते के साथ असंगत थे कि पूर्वकाल इंसुला घृणा की मस्तिष्क की सीट है, लेकिन मनोवैज्ञानिक निर्माणवादी खाते के साथ अधिक सुसंगत थे कि इंसुला गतिविधि अंतरविरोध और भावात्मक भावनाओं की जागरूकता के साथ सहसंबद्ध है।

**निष्कर्ष-** व्यक्तित्व और भावनाएँ मानव व्यवहार के दो सबसे महत्वपूर्ण पहलू हैं। वे दोनों आनुवंशिक और पर्यावरणीय कारकों के संयोजन से आकार लेते हैं। व्यक्तित्व भावनाओं को प्रभावित कर सकता है, और भावनाएं व्यक्तित्व को प्रभावित कर सकती हैं।

व्यक्तित्व और भावनाओं का अध्ययन एक जटिल और आकर्षक क्षेत्र है। अभी भी बहुत कुछ ऐसा है जिसके बारे में हम नहीं जानते हैं कि ये दोनों कारक कैसे परस्पर क्रिया करते हैं। हालाँकि, अब तक किए गए शोध ने हमें उन कारकों की एक मूल्यवान समझ प्रदान की है जो हमारे व्यक्तित्व और भावनाओं को आकार देते हैं।

इस समझ का उपयोग हमें अपने मानसिक स्वास्थ्य और कल्याण को बेहतर बनाने में मदद करने के लिए किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, यदि हम जानते हैं कि हम नकारात्मक भावनाओं का अनुभव करने के लिए प्रवृत्त हैं, तो हम इन भावनाओं को प्रबंधित करने में हमारी मदद करने के लिए मैथुन तंत्र विकसित कर सकते हैं। हम अपने व्यवहार को उन तरीकों से बदलना भी सीख सकते हैं जो सकारात्मक भावनाओं को बढ़ावा दें।

व्यक्तित्व और भावनाओं का अध्ययन तेजी से बढ़ता हुआ क्षेत्र है। हर समय नए शोध किए जा रहे हैं, और इन दो कारकों के बारे में हमारी समझ लगातार विकसित हो रही है। इस शोध में हमें खुद को बेहतर ढंग से समझने और अपने जीवन को बेहतर बनाने में मदद करने की क्षमता है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


- रेवेल डब्ल्यू। पारस्परिक व्यक्तित्व उपाय नए साइकोमेट्रिक मानदंडों के आधार पर सरकमप्लेक्स संरचना दिखाते हैं। व्यक्तित्व मूल्यांकन का जर्नल। 2018 79(3) 446-471
- बार्टलेट पी. साइकोमेट्रिक पर होते तो क्या होता? निर्माण, जटिलता और माप। व्यक्तित्व मूल्यांकन का जर्नल। 2015य 85(2) 134-140
- बंडुरा ,A अमानवीयता के अपराध में नैतिक विघटन। व्यक्तित्व और सामाजिक मनोविज्ञान समीक्षा। 2016; 3 193-209
- क्लार्क एलए, लाइवस्ली डब्ल्यूजे, मोरे एल। व्यक्तित्व विकार मूल्यांकन निर्माण वैधता की चुनौती। व्यक्तित्व विकारों का जर्नल। 2017, 11 205-231
- इलियट एजे, शेल्डन केएम। परिहार उपलब्धि प्रेरणा एक व्यक्तिगत लक्ष्य विश्लेषण। व्यक्तित्व और सामाजिक मनोविज्ञान का अखबार। 2016, 73 171-185
- हाजन सी, शेवर पीआर। रुमानी प्यार आकृषण की तरह माना जाता है। व्यक्तित्व और सामाजिक मनोविज्ञान का अखबार। 2017 52 511-524.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# रोजगार के अवसरों का सृजन करने वाली नीति: राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

• मंजरी अवस्थी

**सारांश- शिक्षा और रोजगार के बीच संबंध जटिल है। एक ओर शिक्षा किसी व्यक्ति की रोजगार संभावनाओं को निर्धारित करने में एक प्रमुख कारक है। शिक्षा के उच्च स्तर से अधिक वेतन वाली और अधिक सुरक्षित नौकरियाँ मिलती हैं। दूसरी ओर, रोजगार भी शैक्षिक प्राप्ति में एक महत्वपूर्ण कारक हो सकता है, नौकरी होने से व्यक्तियों को अपनी शिक्षा के लिए भुगतान करने में मदद मिल सकती है और नौकरी से प्राप्त कौशल और ज्ञान को अक्सर शैक्षिक गतिविधियों में लागू किया जा सकता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि शिक्षा और रोजगार के बीच का संबंध एकतरफा नहीं है। जबकि शिक्षा रोजगार पाने में एक महत्वपूर्ण कारक हो सकती है, कार्यस्थल में अर्जित कौशल और ज्ञान शैक्षिक गतिविधियों को सूचित और आकार भी दे सकते हैं।**

**मुख्य शब्द - शिक्षा, रोजगार, स्तर, कौशल, ज्ञान**

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मसौदा तैयार करने वाली समिति के प्रमुख रहे के. कस्तूरीरंगन ने कहा कि नई शिक्षा नीति (एनईपी) में 21वीं सदी और गुणवत्ता से समझौता किए बिना रोजगार का कौशल प्रदान करने वाली शिक्षा की परिकल्पना की गयी है। कस्तूरीरंगन ने कहा कि स्नातक स्तर पर उदार या बहुद्देश्यीय शिक्षा का विचार, वहीं माध्यमिक स्तर की शिक्षा में चार वर्ष की संरचना कई प्रकार के कौशल चुनने का अवसर प्रदान करते हैं जिनका इस्तेमाल रोजगार के अवसर के तौर पर भी किया जा सकता है। उन्होंने साक्षात्कार में कहा, ये सभी 21वीं सदी के कौशल का हिस्सा हैं क्योंकि शिक्षा नौजवानों में इस तरह की चीजों को समाहित करती है जिनसे कि वे 21वीं सदी के लिए जरूरी संचार, रचनात्मकता, समस्या, समाधान और इस तरह की चीजों के संदर्भ में योग्यता प्राप्त कर सकें। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के पूर्व अध्यक्ष ने कहा कि नई शिक्षा नीति का उद्देश्य इस क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ प्रौद्योगिकियों का उपयोग करके, संस्थानों को मजबूत करके शिक्षा को सही मार्ग पर लाना है और वहीं यह भी सुनिश्चित करना है कि गुणवत्ता से समझौता नहीं हो। नई नीति के तहत वर्ष के स्नातक पाठ्क्रम की शुरूआत के संबंध में कस्तूरीरंगन ने कहा कि इससे युवा व्यापक ज्ञान अर्जन के लिए तैयार होंगे जो उन्हें परिपक्वता के उचित स्तर पर उनकी पेशेवर रूचि को

• **सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी**

अपनाने के लिए प्रोत्साहित करेगा। उन्होंने कहा कि हर वर्ष में शिक्षा को अगले स्तर पर ले जाने की क्षमता है। इसमें यह प्रावधान भी है कि यदि कोई किसी समय पढ़ाई रोककर किसी पेशे में जाना चाहता है तो उसमें उस तरह की चीज के लिए योग्यता होगी।

कस्तूरीरंगन ने कहा, इसलिए अगर आप उस सिद्धांत पर काम करते हैं तो पहले साल में आपको एक प्रमाणपत्र मिल सकता है क्योंकि आपको रोजगार प्रदाता को दिखाना होगा कि आपने कुछ किया है। आपको जूनियर डिप्लोमा का सर्टिफिकेट मिलता है, अगले साल सीनियर डिप्लोमा का सर्टिफिकेट मिलता है और फिर तीसरे स्तर पर आपको स्नातक की डिग्री मिलती है। उन्होंने कहा, और यदि आप कुछ शोधकार्य करते हैं और अपने ज्ञान को बढ़ाते हैं, विषयों और समस्याओं से निपटने की नई क्षमताएं हासिल करते हैं तो आपको चौथे साल ऑनर्स स्नातक डिग्री प्राप्त होती है। प्रसिद्ध वैज्ञानिक ने कहा कि नई नीति में ज्ञान अर्जन की परिपक्वता के एक स्तर पर अनेक विकल्प मुहैया कराने का विचार है। एम फिल डिग्री समाप्त करने के संबंध में कस्तूरीरंगन ने कहा, एम फिल की डिग्री मास्टर डिग्री के साथ बराबरी नहीं कर पा रही थी। मुझे यह भी लगता है कि जब आपके पास बेहतर गुणवत्ता के ज्ञान के साथ डिग्री प्राप्त करने का और बेहतर तरीके से किसी पेशे को अपनाने की क्षमता है तो आज एम फिल का कोई महत्व नहीं है।

**शिक्षा और रोजगार में संबंध-** अंततः शिक्षा और रोजगार के बीच का संबंध दोतरफा है। रोजगार प्राप्त करने में शिक्षा एक महत्वपूर्ण कारक हो सकती है, और कार्यस्थल में सफल होने के लिए आवश्यक शिक्षा प्राप्त करने में रोजगार एक महत्वपूर्ण कारक हो सकता है।

**रोजगार के लिए शिक्षा के लाभ-** व्यावसायिक सफलता के लिए शिक्षा एक शक्तिशाली उपकरण है। नौकरी पाने और सफल करियर बनाने के लिए यह एक महत्वपूर्ण घटक है। एक कॉलेज की डिग्री उच्च वेतन वाली नौकरियों, उन्नति के अधिक अवसरों और नौकरी पर रखे जाने के बेहतर अवसर के द्वार खोल सकती है। कॉलेज की डिग्री के साथ, आपके पास अधिक विकल्प होते हैं, दोनों प्रकार की नौकरियों के लिए जिनके लिए आप योग्य हैं और जिस प्रकार के नियोक्ताओं के लिए आप काम कर सकते हैं। नियोक्ताओं अपने क्षेत्र में विशिष्ट कौशल, ज्ञान और अनुभव वाले आवेदकों की तलाश करते हैं कॉलेज की डिग्री इस बात का सबूत देती है कि आपके पास आवश्यक योग्यताएं हैं और यह आपको अन्य नौकरी आवेदकों से अलग दिखने में मदद करने में फायदेमंद हो सकती है। िक्षा आपको कार्यस्थल में सफल होने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान प्रदान करती है। यह आपको गंभीर रूप से सोचने, समस्या को हल करने और प्रभावी ढंग से संवाद करने की क्षमता प्रदान करता है, ये सभी किसी भी नौकरी के लिए आवश्यक कौशल हैं। इसके अलावा, शिक्षा आपको चुनौतीपूर्ण कार्य करने का आत्मविश्वास दे सकती है, साथ ही नए कौशल सीखने और अपने क्षेत्र में बने रहने की प्रेरणा भी दे सकती है। इसके अलावा शिक्षा आपको ऐसे लोगों का नेटवर्क बनाने में मदद कर सकती है जो रोजार के अवसर ढूंढने में आपकी मदद कर सकते हैं। जब आप नौकरी की तलाश में हों तो कॉलेज के प्रोफेसर पूर्व छात्र और आपके अध्ययन क्षेत्र के अन्य पेशेवर अमूल्य संसाधन हो सकते हैं। वे आपको सलाह परिचय और सिफारिशे

प्रदान कर सकते हैं जो आपको नौकरी बाजार में आगे बढ़ने और सफल होने में मदद कर सकती हैं। कुल मिलाकर, शिक्षा आपकी रोजगार क्षमता पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। यह आपको कार्यस्थल में सफल होने के लिए आवश्यक कौशल, ज्ञान और आत्मविश्वास दे सकता है। यह बेहतर वेतन वाली नौकरियों ओर उन्नति के अधिक अवसरों के द्वारा भी खोल सकता है। अंततः यह आपको ऐसे मूल्यवान लोगों के नेटवर्क तक पहुँच प्रदान कर सकता है जो रोजगार ढूंढने में आपकी सहायता कर सकते हैं।

**नौकरी के अवसरों पर शिक्षा का प्रभाव-** शिक्षा में निवेश करना एक महत्वपूर्ण निर्णय है, जिसका आपके कैरियर पर स्थायी प्रभाव पड़ सकता है। अपनी शिक्षा में निवेश करके आप नौकरी पाने या अपने वर्तमान क्षेत्र में आगे बढ़ने की संभावना बढ़ा सकते हैं। शिक्षा आपको कुछ पदों के लिए अर्हता प्राप्त करने और प्रतिस्पर्धी नौकरी बाजार में सफल होने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान प्रदान करती है। हालाँकि, शिक्षा में निवेश करने से पहले विचार करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण कारक हैं। सबसे पहले, आप जिस प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं वह इस अनुरूप होनी चाहिए कि आप जीविका के लिए क्या करना चाहते हैं। यह निर्धारित करने के लिए नौकरी बाजार पर शोध करना महत्वपूर्ण है कि नियोक्ता कोन से कौशल और योग्यताएँ चाह रहे हैं। आपको यह भी विचार करना चाहिए कि क्या शिक्षा की लागत आपके द्वारा प्राप्त संभावित आय और करियर अवसरों के लायक है। आप जिस स्तर की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, वह भी महत्वपूर्ण है। हालाँकि कॉलेज की डिग्री आपको नौकरी बाजार में बढ़त दिला सकती है, आपको सभी पदो के लिए एक आवश्यकता नहीं है। आप अक्सर हाई स्कूल डिप्लोमा या व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ नौकरी पा सकते हैं। यदि आप विशिष्ट कौशल या विशेषज्ञता हासिल करना चाहते हैं, तो कॉलेज की डिग्री आवश्यक हो सकती है। अंततः नौकरी के अवसरों पर शिक्षा के प्रभाव को समझना महत्वपूर्ण है। हालाँकि शिक्षा आपको कुछ पदो के लिए अर्हता प्राप्त करने में मदद कर सकती है, लेकिन यह सफलता की गारंटी नहीं है। नौकरी आवेदकों का मूल्यांकन करते समय नियोक्ता कई कारकों पर विचार करते हैं, जैसे अनुभव, कौशल और व्यक्तिगत गुण। इसलिए, अन्य आवेदकों से अलग दिखने के लिए कक्षा के बाहर भी अपने कौशल और अनुभवों को विकसित करना महत्वपूर्ण है। कुल मिलाकर, रोजगार खोजने में शिक्षा एक महत्वपूर्ण कारक है, लेकिन यह एकमात्र कारक नहीं है। निर्णय लेने से पहले शिक्षा में निवेश की लागत और संभावित लाभों का आकलन करना महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त आपको अन्य आवेदकों से अलग दिखने के लिए कक्षा के बार भी अपने कौशल और अनुभव विकसित करने चाहिए।

**शिक्षा और रोजगार के बीच संबंध की खोज-** शिक्षा और रोजगार के बीच संबंध जटिल है। एक ओर, शिक्षा किसी व्यक्ति की रोजगार संभावनाओं को निर्धारित करने में एक प्रमुख कारक है। शिक्षा के उच्च स्तर से अधिक वेतन वाली और अधिक सुरक्षित नौकरियाँ मिलती हैं। दूसरी ओर, रोजगार भी शैक्षिक प्राप्ति में एक महत्वपूर्ण कारक हो सकता है, नौकरी होने से व्यक्तियों को अपनी शिक्षा के लिए भुगतान करने में मदद मिल सकती है, और नौकरी से प्राप्त कौशल और ज्ञान को अक्सर शैक्षिक गतिविधियों में लागू किया जा सकता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि शिक्षा और रोजगार के बीच का संबंध एकतरफा

नहीं है। जबकि शिक्षा रोजगार पाने में एक महत्वपूर्ण कारक हो सकती है, कार्यस्थल में अर्जित कौशल और ज्ञान शैक्षिक गतिविधियों को सूचित और आकार भी दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, विनिर्माण कार्य में काम करने वाले किसी व्यक्ति को मूल्यवान कौशल सीखने का अवसर मिल सकता है यहां नौकरी चाहने वालों के लिए कुछ सुझााव दिए गए हैं कि शिक्षा आपको रोजगार सुरक्षित करने में कैसे मदद कर सकती है।

- विपणन योग्य कौशल विकसित करें संभावित नियोक्ताओं के लिए खुद को अधिक आकर्षक बनाने का सबसे अच्छा तरीका विपणन योग्य कौशल विकसित करना है। ये ऐसे कौशल हैं जिनकी नौकरी बाजार में मांग है और ये आपको अन्य आवेदकों से अलग दिखने में मदद कर सकते हैं। किसी विंाष क्षेत्र में डिग्री या प्रमाणन प्राप्त करने से आपको इन कौशलों को निखारने और आपे ज्ञान और विशेषज्ञता को प्रदंित करने में मदद मिल सकती है।
- नेटवर्किंग संपर्क बनाएं शिक्षा आपको मूल्यवान नेटवर्किंग संपर्क बनाने में मदद कर सकती है जिससे नौकरी के अवसर मिल सकते हैं। कॉलेज जाने या किसी विशेष क्षेत्र में कक्षाएं लेने से आप उद्योग में ऐसे लोगों से मिल सकते हैं जो पहले से ही काम कर रहे हैं और आपकों नौकरी के अवसर प्रदान करने में सक्षम हो सकते हैं।
- समर्पण प्रदर्शित करें शिक्षा संभावित नियोक्ताओं को यह प्रदर्शित करने का एक शानदार तरीका है कि आप अपने कैरियर के प्रति समर्पित हैं। शिक्षा प्राप्त करने के लिए समय और प्रयास लगाना, चाहे वह एसोसिएट डिग्री हो या मास्टर डिग्री यह दर्शाता है कि आप अपने कैरियर को लेकर गंभीर हैं और इसमें निवेश करने के इच्छुक हैं।
- वर्तमान रहे शिक्षा आपको अपने क्षेत्र में नवीनतम रूझानों और विकास के साथ अद्यतन रहने में मदद कर सकती है। कक्षाएं लेने या सेमिनार में भाग लेने से आपको परिवर्तनों और प्रगति के बारे में अपडेट रहने में मदद मिलेगी। यह आपको और भी अधिक आकर्षक नौकरी का उम्मीदवार बना सकता है।
- अपने बायोडाटा को बेहतर बनाएं आपके बायोडाटा में डिग्री या प्रमाणन होने से प्रतिस्पर्धा से आगे निकलना बहुत आसान हो सकता है। नियोक्ता अक्सर एक निश्रित स्तर की शिक्षा वाले आवेदकों की तलाश में रहते हैं, इसलिए योग्यता रखने से आप संभावित नियोक्ताओं को लिए अधिक आकर्षक बन सकते हैं। जब रोजगार हासिल करने की बात आती है तो शिक्षा एक बड़ी संपत्ति हो सकती है। विपणन योग्य कौशल विकसित करके, नेटवर्किंग संपर्क बनाकर समर्पण प्रदर्शित करके, वर्तमान में बने रहकर और अपना बायोडाटा बढ़ाकर आप खुद को नौकरी हासिल करने का बेहतर मौका दे सकते हैं।

**संदर्भ ग्रन्थ सूची-**


- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# भारत की राजनीति में महिलाओं की भागीदारी विश्लेषणात्मक अध्ययन

• रेनू

**सारांश- इस शोध के माध्यम से भारतीय राजनीति में महिलाओं की भूमिका का अध्ययन किया गया है। इस शोध पत्र में राजनीति में महिलाओं की भागीदारी, वर्तमान स्थिति, समस्याए, महिलाओं के राजनीतिक भविष्य का अध्ययन किया गया है। आज महिलाओं की राजनीति में जो भागीदारी है वैसी स्थिति 20 वर्ष पहले नही थी। राजनीति में लोगो का शोषण किया जाता है। कभी धर्म के नाम पर तथा कभी सम्पति की रक्षा के नाम पर खून बहाया जाता है। नरम स्वभाव के कारण महिलाओ की भागीदारी पूरी दुनिया में कम रही है। संविधान में महिलाओं को समानता का दर्जा दिया है बल्कि महिलाओं के पक्ष में सकारात्मक भेदभाव के उपाय करने के लिए राज्य को सशक्त बनाया है। आज महिलाओं को हर क्षेत्र में अपने प्रभुत्व को स्थापित करते हुए हर तरीके से चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। वर्तमान समय में महिलाओं को प्रोत्साहित करने के लिए पंचायती स्तर, राज्य स्तर तथा संसद में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ती जा रही है।**

**मुख्य शब्द - राजनीति, भागीदारी, राजनीति, मतदाता, पंचायती राज**

**परिचय-** भारत के इतिहास में आधुनिक काल राजनीति में महिलाओं की भागीदारी अधिक महत्वपूर्ण है। जैसे-रानीलक्ष्मीबाई, सरोजनी नायडू, इंदिरा गांधी, मैडम बीकाजी, अमृताकौर, प. रमाबाई, विजय लक्ष्मी पंड़ित आदि महिलाओं के योगदान से समाज में परिवर्तन देखा गया है। इंदिरा गाधी ने 16 वर्षो तक प्रधानमंत्री के रूप में देश का नेतृत्व किया। स्वतत्रता के तुरंत बाद गठित देश के संविधान में महिलाओं को न केवल पुरूषों के रूप में वोट देने के लिए समान अधिकार दिए गए है बल्कि पंचायत से ससंद तक जनता का प्रतिनिधित्व करने के लिए चुनाव भी लडना है। इसके लिए पंचायती राज व्यवस्था में कम से कम एक तिहाई सदस्यता के साथ राजनीति में महिला भागीदारी का संख्यात्मक प्रतिनिधित्व बढ़ा है। इससे समानता का विचार तेजी से बदल रहा है। महिलाओ में जागरूकता तथा आत्मविश्वास पैदा हुआ है। खुद के प्रति उनकी छवि में सुधार हुआ है। समाज में महिलाओं के खिलाफ अत्याचार, बल का उपयोग आदि के विरोध में जागरूकता बढ़ी है। महिला मतदाताओ का सम्मान बढ़ा है लेकिन विडंबना यह है कि ससंद और विधान सभाओं में एक तिहाई महिला भागीदारी बढाने से विधेयक 1998 से

• **शोधार्थी, राजनीति विज्ञान, बी.एम.यू. रोहतक, हरियाणा, अतिथि प्रोफसर, आर.डी.एस. कालेज, रेवाडी**

लम्बित है जो पुरूष प्रधान समाज के अन्यायपूर्ण फैसले का कडवा मामला है।

**उदेश्य-**

- भारतीय राजनीति में महिलाओं की भागीदारी पर चर्चा की गई है।
- भारतीय राजनीति में महिलाओं की स्थिति का अध्ययन किया है।
- भारतीय राजनीति में महिलाओं के प्रभावो का वर्णन किया है।

**परिकल्पना-**

- भारतीय राजनीति में महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।
- वर्तमान में सरकार ने महिलाओं को राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।
- भारतीय राजनीति में महिलाओं के प्रभाव में वृद्धि होती रही है।

**अध्ययन पद्धति एवं आंकड़ो का संग्रह-** इस शोध में ऐतिहासिक अध्ययन पद्धति का प्रयोग किया है। इस अध्ययन हेतु राजनीतिक दृष्टिकोण का प्रयोग किया है। अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीय दोनो प्रकार के आंकड़ो का समावेश किया गया है। प्राथमिक आकड़ो का संग्रह प्रत्यक्ष सर्वेक्षण, साक्षात्कार, अवलोकन, प्रश्नावली एंव अनुसूची आदि के माध्यम से किया गया है। द्वितीयक आंकड़ो के संकलन डायरी, पत्र-पत्रिकाओं, समाचार पत्र एवं विभिन्न वेबसाइट एवं पुस्तको के माध्यम से किया गया है। इस अध्ययन की प्रकृति वर्णात्मक है।

**स्वतत्रता से लेकर वर्तमान समय तक भारतीय राजनीति में महिलाओं की स्थिति-** भारत में स्वतंत्रता के बाद पहली केन्द्र सरकार पं. जवाहर लाल नेहरू की सरकार में 20 कैबिनेट मंत्रालयो में केवल एक महिला राजकुमारी अमृतकौर थी, जिन्हे स्वास्थ्य मंत्रालय का प्रभार दिया गया। इसके बाद लाल बहादुर शास्त्री की सरकार में एक भी महिला मंत्री नही थी। इसके साथ ही इंदिरा गांधी की सरकार 5 वीं, 6वीं, 9वी कैबिनेट में एक भी महिला केन्द्रीय मंत्री नही थी। राजीव गांधी के मंत्रिमंडल में केवल एक महिला मोहसिना किदवई को शामिल किया गया था। मोदी सरकार में महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है। वर्ष 2014 में मोदी सरकार में कुल 9 महिला सासंदो को कैबिनेट और राज्य मंत्री बनाया गया था। 16 वी लोकसभा में 61 महिला उम्मीदवार जीती थी। जो अब तक का उच्चतम है। 543 सदस्य लोकसभा में महिला उम्मीदवारो की संख्या 2009 में 58 से अधिक थी। यह देश के इतिहास में लोकसभा में पहुंचने वाली महिलाओं की संख्या अधिक थी।

**भारत में महिला मतदाताओं की स्थिति-** 1980 और 2023 में महिला मतदाताओं की संख्या में 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जबकि 1980 में महिला मतदाताओं की संख्या 51 प्रतिशत थी, 2019 में यह बढकर 66 प्रतिशत हो गई। 1990 में महिला मतदाताओं की संख्या बढने लगी। 2019 में लोकसभा चुनाओं में सबसे ज्यादा महिलाओं के मतदान हुए। लेकिन फिर भी स्थिति को पूरी तरह से बेहतर नही कहा जा सकता है। महिला मतदाताओं का प्रतिशत के लिहाज से कमजोर है और साथ ही वोट देने जा रही महिलाओं का एक बडा प्रतिशत वोट देने के मामले में खुद तय नही कर पा रहा है। यह फैसला घर के पुरूषों द्वारा किया जाता है।

**पंचायती राज में महिलाओ की भागीदारी-** पिछले 75 वर्षो में राजनीति में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के परिणाम स्वरूप लोकतांत्रिक प्रक्रिया को मजबूत करने और महिलाओं में बढ़ती चेतना के परिणाम स्वरूप प्रयास किए गए है। लेकिन बुनियादी बदलाव संविधान में संशोधन करने के लिए किए गए थे। 1994 और 73 और 74 पंचायती राज कानून को लागू करने के लिए जिसमें पंचायत, पंचायत समिति और जिला पार्षद में एक तिहाई सीटे महिलाओं के लिए आरक्षित की गई है। हरियाणा में महिलाओ की भागीदारी 50 प्रतिशत आरक्षित है। हरियाणा तथा राजस्थान दोनो राज्यो में पढ़ी लिखी पंचायत ही चुनी जाएगी। पढ़ी लिखी महिलाओ से पंचायत स्तर पर कार्य तेजी से किया जाए।

**भारतीय संसद में महिलाओ की भागादारी-** भारतीय ससंद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व की बात है, तो स्थिति बहुत निराशाजनक है। ससंद में महिलाओं की स्थिति को केवल इंदिरा गांधी के 16 साल तक प्रधानमंत्री रहने के साथ बेहतर नही माना जा सकता है। इंदिरा गांधी, भंडारनायके, चंद्रिका कुमारतुंगा, बेनजीर आदि जैसी महिलाएँ इन देशों की राजनीति में बढ़ती महिला भागीदारी का परिणाम नहीं थी, लेकिन वे वंशानुगत संस्कारों के राजतंत्रीय संस्कारों के कारण अपने पूर्वजों की प्रसिद्धि से लाभान्वित हो रही थी। इस समाज में शासन वास्तव में, भारत की संसदीय राजनीति में न केवल महिलाओं की भागीदारी सीमित रही है, बल्कि कम संख्या वाली महिलाओं ने भी कम सक्रिय भागीदारी दिखाई है। महिलाओं पर पुरुष –वर्चस्व का उदाहरण बिहार की पूर्व मुख्यमंत्री राबड़ी देवी के रूप में देखा जा सकता है, जो महिला हैं, लेकिन उनके पति लालू प्रसाद यादव की निर्णायकता में राजनीतिक भागीदारी सीमित रही है। इस प्रकार, वर्तमान भारतीय राजनीतिक पृष्टभूमि में संसद और विधानसभाओं में महिला भागीदारी बढ़ाने के लिए 33 प्रतिशत महिला प्रतिनिधियों के आरक्षण का विकल्प चुना गया है।

**महिला भागीदारी में पुरुषों का हस्तक्षेप-** राजनीति में महिलाओं की भागीदारी जन प्रतिनिधियों की बढ़ती संख्या से प्रभावित हुई है। फिर भी महिलाओं की अपने स्तर पर सोचने और निर्णय लेने की प्रवृत्ति कम विकसित है जो हमारी चुनौती है। यद्यपि महिला पंच सरपंचों आदि का प्रशिक्षण आयोजित किया जाता है। न तो ये महिलाएं पति, पिता, भाई या महिलाओं के अन्य पुरुषों के प्रभाव में काम कर रही हैं। लेकिन यह प्रारंभिक चरण है। यदि महिलाएं राजनीति की प्रक्रिया को धीरे धीरे समझती हैं, तो वे अपने विवेक से निर्णय लेना शुरू कर देंगी। इसके लिए महिला और महिला प्रतिनिधियों को स्वयं जागरूक होने और उन्हें दूसरों द्वारा जागरूक करने की आवश्यकता है, दूसरी ओर महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में पुरुषों की आवश्यकता है। यदि ऐसा होता है, तो धीरे धीरे संख्यात्मक और महिला भागीदारी के गुणात्मक परिवर्तन दिखाई देने लगेंगे। राजनीति में महिला भागीदारी बढ़ाने के दृष्टिकोण के साथ भारत का विश्व में महत्वपूर्ण स्थान है।

आधुनिक भारतीय राजनीति में ऐसी कई महिलाएँ रही हैं, जिनकी ऐतिहासिक भूमिका हमें अच्छी तरह मालूम है। स्वतंत्र भारत में सरकार चलाने से लेकर स्वतंत्रता आंदोलनों के दौरान महिलाओं की राजनीतिक भूमिका और पहल महत्वपूर्ण रही है। इसके बावजूद, जब राजनीति में महिला भागीदारी की बात आती है, तो बहुत

निराशाजनक तस्वीर पेश करते हैं। हम प्रत्यक्ष (सक्रिय राजनीति में महिलाओं की भागीदारी) और अप्रत्यक्ष (मतदाताओं के रूप में भागीदारी) दोनों स्तरों पर भारी गैर-समता का सामना करते हैं। हालाँकि अगर हम महिला मतदाताओं की बात करें, तो स्थिति पहले की तुलना में थोड़ी बेहतर हो गई है। 1980 और 2014 के बीच, महिला मतदाताओं की संख्या में 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अगर हम विश्व स्तर पर भारत की सक्रिय राजनीति में महिलाओं की स्थिति के बारे में बात करते हैं, तो 193 देशों में भारत 141 वें स्थान पर है। संसद में विश्व स्तर पर 22.6 प्रतिशत महिलाओं की भागीदारी है। जिसमें भारत का औसत केवल 12 है।

**महिलाओं की भागीदारी से राजनीति का भविष्य-** महत्वपूर्ण सवाल यह है कि राजनीति में महिलाओं की भागीदारी के कारण राजनीति की प्रकृति में क्या बदलाव होने की उम्मीद है। राजनीति हमारे जीवन के सभी पहलुओं पर फैसले लेती है। राजनीति, अर्थव्यवस्था, शिक्षा, स्वास्थ्य, आंतरिक और बाहरी सुरक्षा आदि, इसलिए यदि हमारे समाज की आधी आबादी महिलाएं उन फैसलों में शामिल नहीं हैं तो यह हित में नहीं है। विकास, न तो इन राजनीतिक सभा संगठनों के हित में है और न ही पूरे है तो महिलाओं में जो स्नेह निहित है, वह अहिंसा है और समाज के हित में और रचनात्मकता शारीरिक बल के अहंकार से मुक्ति है, यह अधिक स्वच्छ है, संपूर्ण राजनीति के व्यवहार से शांत दिल इसे संतुलित और रचनात्मक बना देगा। आज महिलाओं की बढ़ती भागीदारी से राजनीति, मनमानी और जातिवाद में अपराधीकरण और भ्रष्टाचार कम हो जाएगा। पंचायतों से हमारे संसदो की बैठको में हिंसा कम होगी, नागरिकता और प्रतिष्ठा बढेगी, सामाजिक बुराईयों और दुष्कर्मो में कमी आयेगी। इसके अलावा समाज में शिशुओं, लड़कियों और युवा महिलाओं के विकास पर अधिक ध्यान दिया जायेगा। उनकी शिक्षा, स्वास्थ्य पर अधिक ध्यान दिया जायेगा। इस प्रकार पुरुषों और महिलाओं के बीच संबंधों में अधिक समानता और संतुलन होगा। सुनिश्चित करें कि राजनीति में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि ने पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए विकास का एक नया चरण शुरू किया है और परिणाम बेहतर होंगे, लेकिन यह तभी संभव होगा जब पुरुष वर्ग व्यापक सामाजिक-राजनीतिक हित में महिला भागीदारी पर गंभीर हो और दूसरी ओर और देश की महिलाओं को अपने राजनीतिक अधिकारों की समानता के लिए कड़ा संघर्ष करना चाहिए।

**निष्कर्ष-** निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि सरकार और समाज ने भी काफी हद तक महिलाओं की राजनीति में समान भागीदारी की दिशा में ठोस कदम उठाए हैं और वे यह भी साबित कर रहे हैं कि महिलाओं के सम्मान और सशक्तिकरण ने राजनीति को एक नई ऊँचाई प्रदान की है। राजनीति के नए आयाम बनाए जा रहे हैं जिसमें महिलाओं को समान रूप से प्रोत्साहित किया जा रहा है, भले ही वह पंचायती स्तर पर ही क्यों न हो। गाँव के सरपंच ने कई पंचायत स्तर के चुनावों में महिला उम्मीदवारों को जिताया और उन्नति के नए द्वार खोले।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


- डॉ. जागृति चतुर्वेदी, लक्ष्मी सिंह तोमर, रूचिका राम साहू
- डॉ.भीम सिंह दहिया
- डॉ.निति पाण्डेय, डॉ. भारत भूषण
- विपिन चन्द्र
- चोपड़ा, पी. ए. एन. पुरी, बी. पी. एन., दास एम. एन. (2005), भारत का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक इतिहास, दिल्ली, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड पृष्ठ 259,265

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# मध्यप्रदेश में जैविक कृषि की वर्तमान स्थिति

• तेज प्रताप तिवारी

**सारांश- विश्व को जैविक खेती भारत देश की देन है। प्राचीन काल से ही भारत व चीन में जैविक कृषि किसी ना किसी रूप में होती रही है। इन दोनो देशों की कृषि परंपरा 4000 वर्ष पुरानी है तथा यहाँ के किसान चार सहस्त्राब्दि के कृषि ज्ञान से परिपूर्ण किसान हैं और जैविक खेती ही उन्हें इतने वर्षो तक पालती पोसती रही है। वैश्विक महामारी COVID 19 के कारण पूरे विश्व में बेहतर स्वास्थ्य व सुरक्षित भोजन की मांग में वृद्धि हुई है। जैविक विधि द्वारा खेती करने से उत्पादन की लागत तो कम होती ही है इसके साथ ही कृषक भाइयों को आय अधिक प्राप्त होती है तथा अंतराष्ट्रीय बाजार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद अधिक खरे उतरते हैं। जिसके फलस्वरूप सामान्य उत्पादन की अपेक्षा में कृषक भाई अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। भारत जैविक कृषकों की संख्या के मामले में प्रथम तथा जैविक कृषि क्षेत्रफल के मामले में 9 वें स्थान पर है। जैविक कृषि (ऑर्गेनिक फार्मिंग) कृषि की वह विधि है, जिसमें संश्लेषित उर्वरकों एवं संश्लेषित कीटनाशकों का अप्रयोग या न्यूनतम प्रयोग किया जाता है तथा जिसमें भूमि की उर्वरा शक्ति को बचाए रखने के लिये फसल चक्र, हरी खाद, कंपोस्ट आदि का प्रयोग किया जाता है। जैविक कृषि में मिट्टी, पानी, रोगाणुओं और अपशिष्ट उत्पादों, वानिकी और कृषि जैसे प्राकृतिक तत्त्वों का एकीकरण शामिल है। प्रस्तुत शोध पत्र में मध्य प्रदेश राज्य में जैविक खेती की वर्तमान स्थिति, जैविक खेती को प्रोत्साहन देने के लिए राज्य सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों, किसानों के समक्ष उत्पन्न चुनौतिओं का अध्ययन करने का प्रयास किया गया है तथा जैविक खेती को प्रोत्साहित करने के लिए आवश्यक सुझाव भी दिए गए हैं।**

**मुख्य शब्द - जैविक खेती, जैव अवशिष्ट, जैव उत्पाद, हरित क्रांति, जैविक गुणवत्ता**

**प्रस्तावना-** जिस समय देश को आजादी प्राप्त हुई उस समय देश में खाद्यान्न का उत्पादन 5.08 करोड़ टन तथा स्टाक 2.38 लाख टन था, जो कि उस समय उपलब्ध जनसंख्या के लिए पर्याप्त नहीं था। खाने के लिए अनाज विदेशो से आयात करना पड़ता था। खेतों में पैदावार बहुत कम थी क्योंकि किसानों के खेतो की उर्वरा शक्ति बहुत कमजोर थी। फिर साठ सत्तर के दशक में हरित क्रांति का दौर आया। हरित क्रांति के समय विभिन्न फसलों के नए-नए संकर बीज आए, बहुत सारे रसायनिक उर्वरक आए, विभिन्न प्रकार के कीड़ों

• सहायक प्राध्यापक, भूगोल विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, टीकमगढ़

व बीमारियों को रोकने के लिए नई-नई दवाईयाँ आईं । भरपूर अनाज पैदा होने लगा। 2020-21 में खाद्यान्न का उत्पादन बढ़कर 30.86 करोड़ टन हो गया जबकि स्टाक 1 अगस्त 2022 को बढ़कर 545.97 लाख टन हो गया। अर्थात इस अवधि में उत्पादन में लगभग 6 गुना तथा स्टाक में लगभग 230 गुना की बृद्धि हुई, जबकि इसी अवधि में जनसंख्या लगभग 4 गुना बढ़ी है, अर्थात जनसंख्या की तुलना में खाद्यान्न उत्पादन तेजी से बढ़ा है।

देश में आज गोदाम खाद्यान्न से भरे पड़े है, लेकिन यह दौर कई बुराईयाँ भी साथ लाया। इस अवधि में हमारा फसलों का उत्पादन तो बढ़ा पर साथ मे फसलों में नए-नए कीड़े व रोग भी आए। आज जमीन का स्वास्थ्य ख़राब हो रहा है। खेतों में विकारों की मात्रा बढ़ रही है। भूमि की उर्वरा शक्ति में कमी आ रही है। मनुष्यों में विभिन्न प्रकार के कीटनाशकों से कैंसर, चर्म रोग जैसी भयानक बीमारियाँ होने लगी हैं, साथ ही अनाज का स्वाद भी पहले जैसा नहीं रहा। यह सब बिना सोच-विचार किए एवं बिना अनुभव के रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशक रसायनों के अत्यधिक उपयोग करने के कारण हुआ। किसान अपने देशी तरीकों से दूर होते जा रहे हैं।

वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये गोबर की खाद, हरी खाद, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट एवं नीम को किसान भाईयों को फिर से याद करने की जरूरत है। देशी तौर तरीकों का वैज्ञानिक तरीकों से समन्वय करने की आवश्यकता है। यह जैविक खेती में ही संभव है। इससे भूमि के स्वास्थ्य, अनाज के स्वाद और मृदा उर्वरता की शक्ति कायम रखी जा सकती है, जिससे किसान भाईयों को फसल उपज एवं जैविक कृषि उत्पादों की कीमत बाजार में अच्छी एवं ज्यादा मिल सके।

जैविक खेती, देशी खेती का उन्नत तरीका है। इसमें रसायनिक उर्वरक, कीटनाशक, वृद्धि नियंत्रकों का उपयोग नहीं करके खेतों में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, जीवाणु खाद, फसल चक्र एवं प्रकृति में उपलब्ध खनिज जैसे रॉक फास्फेट, जिप्सम आदि द्वारा पौधो को पोषक तत्व दिए जाते है। फसल को प्रकृति में उपलब्ध कीड़ों, जीवाणुओं एवं जैविक कीटनाशकों द्वारा हानिकारक कीड़ों एवं बीमारियों से बचाया जा सकता है।

पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य दोनों की सुरक्षा के अलावा जैविक खेती के पारंपरिक खेती की तुलना में कई फायदे हैं। कृषि उत्पादन में टिकाऊपन लाने के लिए, मृदा में जैविक गुणवत्ता बढ़ाने के लिए, मिट्टी की उर्वरता में सुधार, पानी की बेहतर गुणवत्ता, मिट्टी के कटाव की रोकथाम, ग्रामीण रोजगार का सृजन, उत्पादन लागत को कम करने के लिए एवं प्राकृतिक संसाधनों को बचाने के लिए जैविक खेती आज की आवश्यकता है। बदलता पर्यावरण, खेतों की कम होती उपजाऊ क्षमता, छोटी जोत, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों/फफूंदनाशकों/खरपतवार नाशकों के अंधाधुंध प्रयोग ने भारतीय कृषि के सामने गहन चुनौती की स्थिति ला दी है। उपभोक्ताओं के बीच खाद्य पदार्थों के प्रति जागरूकता एवं स्वास्थ्य के उच्च मापदंडों ने जनसामान्य को जैविक खाद्य पदार्थों की तरफ आकर्षित किया है। भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार कृषि है। भारतीय कृषि उत्पादन अभी भी वर्षा पर आधारित है, क्योंकि 55.7 प्रतिशत कृषि क्षेत्र

वर्षा पर निर्भर है। देश का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 32.87 करोड़ हैक्टर है, जिसमें से 14.14 करोड़ हैक्टर में खेती की जाती है। वर्ष 2018 की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व में कुल जैविक फसलों के 5.78 करोड़ हैक्टर क्षेत्रफल में से भारत में मात्र 0.15 करोड़ हैक्टर में जैविक फसलों का उत्पादन होता है। इस प्रकार विश्व में कुल जैविक फसल उत्पादन में भारत की हिस्सेदारी मात्र 2.59 प्रतिशत है, जोकि बहुत कम है। इस दिशा में भारत सरकार का कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय एवं नीति आयोग लगातार प्रयास कर रहे हैं। भारत सरकार ने जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर अनेक योजनाएं शुरू की हैं, जिनके वांछित परिणाम आगामी वर्षों में भारतीय कृषि में नजर आयेंगे।

जैविक खेती का बढ़ता प्रचलन मुख्यतः उपभोक्ता की मांग पर आधारित होता है। उपभोक्ता की मांग प्रमुख रूप से खाद्य उत्पाद की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। पिछले कुछ वर्षों में विश्व में फैली महामारी ने जैविक खाद्य पदार्थों की मांग को बढ़ाया है। पारम्परिक खेती में बढ़ते रसायनों का उपयोग तथा उनके कुप्रभाव, दूरगामी स्तर पर उपभोक्ता में अविश्वास का कारण बन रहे हैं। इन बातों का ध्यान रखते हुए भारत सरकार एवं मध्यप्रदेश सरकार भी जैविक खेती को प्रोत्साहित कर रही है। अतः भारत में जैविक खेती का उत्पादन पूर्व वर्षों की तुलना में वर्ष 2019-20 में बढ़कर 2.75 मिलियन मैट्रिक टन हो गया है। जैविक खेती से उत्पन्न खाद्य उत्पादों की विदेशों में बढ़ती मांग भी इसके महत्व को प्रदर्शित करती है। कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) के मुताबिक देश ने 2020-21 में 8 लाख 88 हजार 179 मीट्रिक टन जैविक खाद्य सामग्री विदेशों में 7,078 करोड़ रुपए में निर्यात की। इसमें मध्यप्रदेश की हिस्सेदारी 5 लाख मीट्रिक टन रही।

**शोध का क्षेत्र-** प्रस्तुत शोध का क्षेत्र मुख्य रूप से मध्य प्रदेश राज्य है, जिसके अंतर्गत राज्य में जैविक कृषि की वर्तमान स्थिति का आंकलन किया गया है। मध्य प्रदेश की भौगोलिक स्थिति 210 040 उत्तरी अक्षांश से 26° 490 उत्तरी अक्षांश तथा 74°10 से 82°480 पूर्वी देशांतर के मध्य स्थित है। मध्य प्रदेश की सीमा 5 राज्यों को स्पर्श करती है (उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, राजस्थान एवं गुजरात )। प्रदेश के पास प्राकृतिक चारागाहों, प्राकृतिक उपवनों, सुदूर जनजातीय जिलों में अप्रदूषित कृषि भूमि का बड़ा क्षेत्र और नर्मदा घाटी के उपजाऊ क्षेत्र उपलब्ध है, साथ ही प्रदेश के प्राकृतिक एवं घने वनों में प्रचुर मात्रा में पलाश, रोहिणी, इत्यादि के पुष्प भी उपलब्ध हैं। शोध के माध्यम से राज्य में जैविक खेती की वर्तमान स्थिति का अवलोकन किया गया है।

**शोध के उद्देश्य-**

- राज्य में जैविक खेती में संलग्न किसानों को प्रदान की जाने वाली वित्तीय सहायता स्रोतों का अध्ययन करना।
- जैविक खेती का ग्रामों के आर्थिक विकास व रोजगार में योगदान का अध्ययन करना।
- राज्य में सरकार तथा कृषि संस्थाओं द्वारा क्रियान्वित की जा रही विभिन्न

आर्थिक-सामाजिक विकास योजनाओं व कार्यक्रमों का अध्ययन करना।

- जैविक खेती की समस्याओं का विश्लेषण करके निष्कर्ष प्रस्तुत करना और उसके निराकरण हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

**शोध प्रविधि-** प्रस्तुत शोध प्रामाणिक और सरकार के स्रोतों द्वारा प्रकाशित द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित आलेखों एवं अनुसंधानों का भी सहारा लिया गया है। शोध में उपयुक्त सांख्यिकीय तकनीकों का प्रयोग, विश्लेषण व समंकों की तुलना करने के लिए किया गया है। शोध में विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष प्रस्तुत किए है और राज्य में जैविक खेती के विस्तार व सुधार हेतु कुछ सुझाव दिए गए हैं।

**मध्य प्रदेश में जैविक खेती की वर्तमान स्थिति-** देश में जैविक खेती के कुल रकबे का लगभग 40 प्रतिशत मध्य प्रदेश में है। अतः उत्पादन तथा क्षेत्रफल की दृष्टि से प्रदेश, पूरे देश में पहले स्थान पर है। म.प्र. में सर्वप्रथम 2001-02 में जैविक खेती का अन्दोलन चलाकर प्रत्येक जिले के प्रत्येक विकास खण्ड के एक-एक  गांव मे जैविक खेती प्रारम्भ कि गई और इन गांवों को "जैविक गांव" का नाम दिया गया। इस प्रकार प्रथम वर्ष में कुल 313 ग्रामों में जैविक खेती की शुरूआत हुई। इसके बाद 2002-03 में द्वितीय वर्ष मे प्रत्येक जिले के प्रत्येक विकासखण्ड के दो-दो गांव, वर्ष 2003-04 में 2-2 गांव अर्थात 1565 ग्रामों मे जैविक खेती की गई। वर्ष 2006-07 में पुनः प्रत्येक विकासखण्ड में 5-5 गांव चयन किये गये।  प्रदेश में मुख्य रूप से जैविक कृषि नर्मदा नदी के किनारे की जा रही है। वर्तमान समय में प्रदेश के मंडला, डिंडोरी, बालाघाट, छिंदवाड़ा, बैतूल, कटनी, उमरिया, अनूपपुर, दमोह, सागर, आलीराजपुर, झाबुआ, खंडवा, सीहोर, श्योपुर और भोपाल जिलों में प्रमुख रूप से जैविक कृषि की जा रही है।

प्रदेश में जैविक खेती करने वाले पंजीकृत किसानों की संख्या एक लाख से अधिक है। सोयाबीन, चना, मसूर, तुअर और उड़द के उत्पादन में मध्य प्रदेश देश में नंबर एक पर है। वहीं, रामतिल और मूंग में दूसरा और गेहूं और बाजरा के उत्पादन में तीसरा स्थान है। वर्ष 2011 में प्रदेश की अपनी जैविक कृषि नीति बनाई गई है द्य जैविक खेती विकास के संबंध में निर्णय लेने के लिये जैविक खेती विकास परिषद का गठन प्रदेश के मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में किया गया है। किसानों को जैविक कृषि पद्धति अपनाने के लिए कई सुविधाएं प्रदेश में प्रदान की जा रही हैं। उत्पादों को लाभकारी विपणन के लिये जैविक उत्पाद प्रमाणीकरण की व्यवस्था है, जिसमें पंजीयन कराने के लिये भी निर्धारित शुल्क में राज्य सरकार द्वारा छूट व अनुदान दिये जाते हैं। कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) की वर्ष 2020-21 की रिपोर्ट के अनुसार, प्रदेश में लगातार जैविक खेती का क्षेत्र बढ़ रहा है। वर्ष 2017-18 में 11 लाख 56 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में जैविक खेती हो रही थी। जबकि, वर्ष 2020-21 में यह क्षेत्र बढ़कर 16 लाख 37 हजार हेक्टेयर तथा 2021-22 में 17 लाख 31 हजार 653 हेक्टेयर से अधिक हो गया है।

**प्रदेश में जैविक कृषि का बढ़ता रकबा (हैक्टेयर में)**
**एसोचौम की रिपोर्ट 2021-22**

| वर्ष | रकबा (हैक्टेयर में) |
|---|---|
| 2017-18 | 11,56,881 |
| 2018-19 | 09,18,30 |
| 2019-20 | 11,61,015 |
| 2020-21 | 16,37,730 |
| 2021-22 | 17,31,653 |

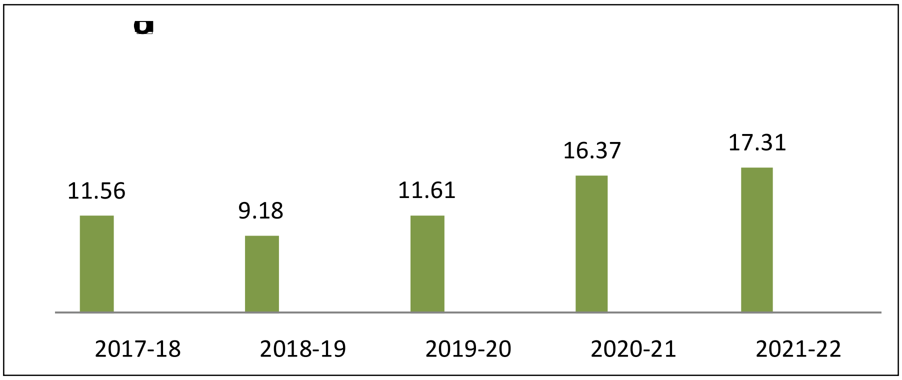


एसोचौम की रिपोर्ट के अनुसार प्रदेश में जैविक खेती की बहुत संभावनाएं हैं। जैविक खेती के माध्यम से 23 हजार करोड़ की सम्पदा निर्मित हो सकती है। इससे 60 लाख रोजगार के अवसर पैदा हो सकते हैं। प्रदेश की 45 प्रतिशत कृषि भूमि जैविक खेती के लिए उपयुक्त है। एसोचौम की ही 2015 की रिपोर्ट बताती है कि मध्य प्रदेश में जैविक खेती 1.70 लाख किसानों को आजीविका मुहैया कराती है, लेकिन राज्य में कमजोर सुविधाओं की वजह से उनकी आय में इजाफा नहीं हुआ। 2020-21 में जैविक खेती करने वाले किसान बढ़ कर 7.73 लाख हो गए। देश की बात करें, तो मौजूदा समय में 43.38 लाख किसान 39 लाख हेक्टेयर में जैविक खेती कर रहे हैं।

एपीडा के मुताबिक देश ने 2020-21 में 8 लाख 88 हजार 179 मीट्रिक टन जैविक खाद्य सामग्री विदेशों में 7,078 करोड़ रुपए में निर्यात की। इसमें मध्यप्रदेश की हिस्सेदारी 5 लाख मीट्रिक टन रही। इसके बदले प्रदेश को 2,683 करोड़ रुपए मिले। प्रदेश से मुख्य रूप से अमरीका, यूरोपीय संघ, कनाडा, स्विट्जरलैंड, अ,स्ट्रेलिया, जापान, इजराइल, संयुक्त अरब अमीरात, वियतनाम, न्यूजीलैंड जैसे देशों को जैविक उत्पाद निर्यात किया जाता है । जैविक निर्यात में एमपी का योगदान 40 प्रतिशत का है। देश में जैविक खाद्य उद्योग 20 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा है। इससे जैविक खाद्यान्न से जुड़ी कंपनियों को अवसर उपलब्ध होंगे। इन उत्पादों में जैविक तेल, अनाज, जूस और डेयरी उत्पाद शामिल हैं। देश के महानगरों में ऑर्गेनिक फार्मेसी का चलन बढ़ गया है। इससे फार्मा कंपनियों के लिए नए अवसर खुले हैं।

प्रदेश जैविक खेती की अपार संभावनाओं से पूरित है। यहां सभी धान्य फसल, सब्जियाँ, फल, मसाले, सुगंधित एवं औषधीय फसलें न्यूनतम रासायनिक इनपुट के उपयोग से ली जाती हैं द्य प्रदेश में कई जिले, ग्राम, विकासखण्ड और ग्राम पंचायत क्षेत्र ऐसे हैं, जो राज्य औसत से कम से कम 50 से 60 प्रतिशत कम बाह्र आदान जैसे रासायनिक उर्वरक, कृषि रसायन आदि का उपयोग कर रहे हैं। इस दृष्टि से अधिकांश जनजातीय जिले जैसे मंडला, डिंडौरी, बैतूल, झाबुआ, अलीराजपुर आदि जैविक कृषि विकास के अनुकूल हैं। गौ–वंश आधारित ग्रामीण अर्थ–व्यवस्था प्रदेश में प्राकृतिक/ जैविक खेती के विस्तार को मिशन मोड में गति देने में मददगार साबित हो सकती है।

**जैविक उत्पादों का प्रमाणीकरण-** जैविक खेती प्रमाण पत्र लेने की एक प्रक्रिया है। इसके लिए आवेदन करना होता है। फीस देनी होती है। प्रमाण पत्र लेने से पहले मिट्टी, खाद, बीज, बोआई, सिंचाई, कीटनाशक, कटाई, पैकिंग और भंडारण सहित हर कदम पर जैविक सामग्री जरूरी है। यह साबित करने के लिए इस्तेमाल की गई सामग्री का रिकॉर्ड रखना होता है. इस रिकॉर्ड के प्रमाणिकता की जांच होती है। उसके बाद ही खेत व उपज को जैविक होने का सर्टिफिकेट मिलता है। इसे हासिल करने के बाद ही किसी उत्पाद को 'जैविक उत्पाद' की औपचारिक घोषणा के साथ बेचा जा सकता है।

प्रदेश में MPSOCA (मप्र राज्य ऑर्गेनिक सर्टिफिकेशन एजेंसी) के माध्यम से जैविक खेती से पहले उसका प्रमाणीकरण कराना होता है। इसके बाद ही किसान अपने उत्पाद विदेशों में निर्यात कर सकते हैं। वर्तमान में यहां 234 किसान या समूह रजिस्टर्ड हैं। न्यूनतम 4 हेक्टेयर खेती करने वाले किसान पंजीयन करा सकते हैं। इससे छोटे किसान 25 या 500 लोगों का समूह बनाकर समूह पंजीयन करा सकते हैं। हर साल इसका नवीनीकरण कराना पड़ता है। MPSOCA को कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा) के मापदंडों के मुताबिक न्यूनतम 5 प्रतिशत आवेदकों की फसल, मिट्टी या पानी के सैंपल की एनबीएल द्वारा अप्रूव्ड लैब से जांच कराई जाती है। जांच का उद्देश्य फसल उत्पादन में या प्रोसेसिंग के समय मिलाए गए पेस्टिसाइड्स का पता लगाना होता है।

**जैविक खेती के लिए राज्य में अब तक हुए प्रयास-**

- एमपी में 2001 से जैविक खेती ग्राम पंचायत स्तर पर शुरू कराई गई।
- अब तक 313 विकासखंडों में 3130 ग्राम पंचायतों में जैविक खेती हो रही है।
- 2011 में प्रदेश सरकार जैविक नीति लेकर आई।
- वर्तमान में खमरिया जबलपुर में 80 हेक्टेयर और बुरहानपुर में 6 हेक्टेयर में जैविक बीज का उत्पादन होता है।
- इन केंद्रों से सोयाबीन, धान, अरहर, उड़द, मूंग, तिल, मक्का, कोदो, कुटकी, ज्वार के बीज उपलब्ध कराए जाते हैं।
- जवाहर लाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय 16 तरह के जैविक खाद तैयार कर रहा है।
- देश की पहली जैविक खेती इकाई इंदौर में शुरू हुई थी।

- मप्र राज्य जैविक प्रमाणीकरण संस्था भोपाल में खुली है।
- मंडला में 47 हेक्टेयर भूमि में जेएनकेवी जैविक कृषि अनुसंधान केंद्र संचालित कर रहा है।
- खंडवा में 2018 में जैविक कपास अनुसंधान केंद्र खुला।
- जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति के द्वारा स्नातक स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रम के रूप में इसे शामिल किया गया है।
- प्रदेश में जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय विकास योजना के माध्यम से कई परियोजनाएं स्वीकृत की गई हैं। प्रमुख रूप से वर्मीकम्पोस्ट पिट निर्माण, जैव उर्वरक एवं पोषक तत्व वितरण, जैविक खेती जागरूकता अभियान, नर्मदा नदी के किनारों के सभी जिलों के सभी विकासखण्डों में जैविक खेती कार्यक्रम, जैविक प्रक्षेत्रों की स्थापना, हरी खाद के लिए सहायता, जैव उर्वरकों की निर्माण इकाइयों की स्थापना, नर्मदा किनारे के गांवों में बायोगैस प्लांट का निर्माण और जैव उर्वरकों के परीक्षण के लिए प्रयोगशालाओं के निर्माण की इन परियोजनाओं से जैविक खेती को प्रदेश में गति मिली है।

मध्य प्रदेश में आर्गेनिक खेती का सबसे ज्यादा रकबा है। यहां के कृषि विभाग ने पारंपरिक खेती के निम्न लाभ बताए हैं–

- झझभूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है। सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है। रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होने से लागत में कमी आती है. उत्पादकता में वृद्धि होती है।
- झझमिट्टी, खाद्य पदार्थ और जमीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है द्य बीमारियों में कमी आती है।

**जैविक कृषि के संदर्भ में किसानों की समस्याएँ -**

- जैविक फसल बेचने के लिए स्थानीय बाजार उपलब्ध नहीं है।
- जैविक खेती का वैज्ञानिक तरीका किसानों को पता नहीं है।
- किसान खुद प्रोसेसिंग कर बेचने का खर्च वहन नहीं कर सकते।
- शुरुआत में उत्पादन कम होने तथा सही कीमत ना मिलने से रासायनिक खेती अपना लेते हैं।
- सरकार की ओर से सब्सीडी या मदद नहीं मिलती।

दिनकर राय जबलपुर के खबरा मझौली के रहने वाले हैं। उन्होंने कहा, मैं 6 साल से 30 एकड़ जमीन पर ऑर्गेनिक खेती कर रहा हूं। 20 एकड़ में जैविक गन्ना उगाता हूं। इससे तैयार गुड़ मुंबई में 240 रुपए किलो बिकता है, लेकिन आधी रकम बिचौलियों की जेब में चली जाती है। क्योंकि ऑर्गेनिक उत्पाद बेचने के लिए मध्यप्रदेश में बाजार ही नहीं है। सुविधाओं के नाम पर किसानों के लिए कुछ भी नहीं है। बालकृष्ण विश्वकर्मा विदिशा के रहने वाले हैं। बालकृष्ण ने कहा, 15 एकड़ में 7 साल से औषधीय, सब्जी व अनाज की खेती कर रहा हूं, लेकिन बेचने के लिए बाजार नहीं है। भोपाल मंडी में

रासायनिक खेती से पैदा हो रही सब्जी का ही भाव जैविक सब्जियों को मिलता है। औषधीय और अनाज की कीमत जरूर सामान्य से 30 प्रतिशत अधिक मिल जाती है। जैविक खेती की सबसे बड़ी समस्या बाजार न होना है। जैविक हल्दी और औषधीय खेती करने वाले जबलपुर के अम्बिका पटेल कहते हैं कि प्रदेश में 2001 से ऑर्गेनिक खेती पर जोर दिया जा रहा है, लेकिन सरकार मदद नहीं दे पा रही है। प्रदेश में दो कृषि विश्वविद्यालय हैं। इसके बावजूद जैविक खेती का प्रमाणिक तरीका नहीं बता पाए।

एसोचौम की ही 2015 की रिपोर्ट बताती है कि मध्य प्रदेश में जैविक खेती 1.70 लाख किसानों को आजीविका मुहैया कराती है, लेकिन राज्य में कमजोर सुविधाओं की वजह से उनकी आय में इजाफा नहीं हुआ।

**निष्कर्ष एवं सुझाव-** म.प्र. में जैविक कृषि विकास संबंधित गतिविधियाँ के अवलोकन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है की म.प्र. में जैविक कृषि के विकास की अपार संभावनाएँ निहित हैं। प्रदेश के किसानों का झुकाव भी जैविक कृषि की ओर है। सरकार ने भी इस ओर कुछ प्रयास किए हैं, लेकिन सरकार के द्वारा किए गए प्रयास काफी नहीं हैं। किसानों की प्रमुख समस्याएँ जैविक उत्पादों के विपणन, जानकारी का अभाव एवं सरकारी सहायता की कमी है से संबंधित हैं। अतः इसके लिए निम्न प्रयास किए जा सकते हैं-

प्रदेश में ऑर्गेनिक प्रोडक्ट बेचने का अधिकृत मार्केट नहीं है, जिसके कारण कृषकों को अपना उत्पाद अन्य स्थानों पर भेजने में असुविधा का सामना करना पड़ता है। इस दिशा में विविध योजनाओं व सरकारी प्रयासों के माध्यम से सुदृढ़ ग्रामीण बाजारों की स्थापना की जानी चाहिए।

- उत्पादों के विपणन की उचित व्यवस्था ना होने के कारण उत्पादों का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। अतः इसके लिए नजदीकी स्थानों पर उत्पाद विक्रय केन्द्र स्थापित होने चाहिए।
- प्रतिस्पर्धा एवं समय की मांग को ध्यान में रखते हुए फल एवं सब्जी संग्रह केन्द्र स्थापित होना आवश्यक है। छोटे-छोटे संग्रह केन्द्र अधिक लागत के शीतग्रहों का अच्छा विकल्प है। इसके लिए स्वयं कृषक संगठनों को निकटस्थ स्थानीय बाजारों में थोक मात्रा में संग्रह व विपणन केन्द्र स्थापित करने चाहिए।
- बाजार में बिक रहे ऑर्गेनिक उत्पाद को लेकर लोगों में भरोसा नहीं। लोग ब्रांड पर भरोसा करते हैं। एक आम किसान के लिए ये संभव नहीं। अतः सरकार खादी ग्रामोद्योग की मदद से इसकी मार्केटिंग करवा सकती है।
- सरकार हर किराना दुकान में 10 प्रतिशत ऑर्गेनिक उत्पाद रखने का नियम बना सकती है।
- जिला स्तरीय सहकारी कृषि समितियों के माध्यम से किसानों को तकनीकी जानकारी एवं ऋण सुविधा प्रदान की जा सकती है।
- जैविक उत्पादों की गुणवत्ता की जांच के लिए प्रदेश स्तर पर लैब बनाना चाहिए।
- सरकार जैविक आधारित लघु उद्योग को प्रोत्साहन दे सकती है। इसके लिए

सरकार चाहे, तो न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीदी कर सकती है।

- जैविक खेती का वैज्ञानिक तरीका किसानों को पता नहीं है, अतः इसके लिए किसानों को समय–समय पर प्रशिक्षण देना चाहिए, साथ ही उन्हें खरपतवार नियंत्रण के लिए जैविक तरीका बताना होगा।
- शुरुआत में उत्पादन कम होने तथा सही कीमत ना मिलने से किसान रासायनिक खेती अपना लेते हैं द्य अतः इसके लिए सरकार की ओर से सब्सीडी या मदद मिलनी चाहिए।

हाल ही में भारत सरकार द्वारा जैविक खेती पोर्टल लांच किया गया है। जिसकी आधिकारिक वेबसाइट https:@@www-jaivikkheti-in है, इस पोर्टल के माध्यम से जैविक किसानों को अपने उत्पाद बेचने की सुविधा मुहैया कराई जाएगी। Jaivik Kheti Portal 2022 के माध्यम से जैविक किसानों को अपने उत्पाद बेचने की सुविधा उपलब्ध करवाई जाएगी। इसके अलावा इस पोर्टल के माध्यम से जैविक खेती के लाभ से संबंधित जानकारी प्राप्त हो सकेगी। इसके अलावा Jaivik Kheti Portal के माध्यम से अनाज, दाल, फल और सब्जियां भी खरीदी जा सकती हैं। खरीदारों द्वारा बहुत कम कीमतों पर जैविक उत्पाद इस पोर्टल के माध्यम से खरीदे जा सकते हैं। इन उत्पादों को खरीदार के घर पर डिलीवर किया जाएगा। इस पोर्टल के माध्यम से किसान सीधे खरीदार को अपनी फसल बेच सकेंगे। केंद्र सरकार ने जैविक खेती प्रमोट करने के लिए परंपरागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई) बनाई है। पीकेवीवाई (paramparagat krishi vikas yojana) के तहत तीन साल के लिए प्रति हेक्टेयर 50 हजार रुपये की सहायता दी जा रही है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


- किसान कल्याण तथा कृषि विकास विभाग मध्य प्रदेश http://mpkrishi.mp.gov.in/hindisite_New/gudwatta_Jaivik_Kheti.aspx
- भास्कर– न्यूज़ 09 जुलाई 2022https://www.bhaskar.com/local/mp/news/farmers-are-not-getting-market-middlemen-are-earning-profits-know-a-to-z-130038493.html

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# बिरहोर जनजाति में भाषा एवं शिक्षा की स्थिति का अध्ययन (छत्तीसगढ़ के कोरबा जिले के विशेष संदर्भ में)

• गिरजा शंकर गौतम

**सारांश- बिरहोर जनजाति छत्तीसगढ़ की उन सर्वाधिक पिछड़ी अल्पज्ञात जनजातियों में से एक है, जिनके उन्नयन से संबद्ध विभिन्न समस्याएँ दीर्घकाल से अब तक प्रासंगिक बनी हुई है। यह जनजाति पूर्व में घुमंतु प्रवृत्ति, शिकार एवं कंदमूल एकत्र कर जीवन व्यतीत करने के कारण विशेष उल्लेखनीय रही है एवं अशिक्षा, निर्धनता एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं से अब भी जूझ रही है। छत्तीसगढ़ में 42 प्रकार की जनजातियाँ निवास करती हैं, कमार, बैगा, पहाड़ी कोरवा, अबूझमाड़िया एवं बिरहोर यहाँ निवास करने वाली पाँच सर्वाधिक पिछड़ी जनजातियाँ है। इस शोध पत्र के माध्यम से छत्तीसगढ़ राज्य के कोरबा जिला के पाली विकासखंड स्थिति डोंगानाला एवं भंडारखोल गाँव में विस्थापन उपरांत निवास करने वाली बिरहोर जनजाति की शिक्षा एवं भाषा के महत्व को रेखांकित करना है। बिरहोर जनजाति स्वयं को 'जंगल का मानव' कहते है। यह कोरबा, जशपुर एवं रायगढ़ जिले के बीहड़ जंगलो में निवास करते है। सामान्यतः यह घुमंतु जनजाति के रूप में जानी जाती है।**

**मुख्य शब्द - भाषा, शिक्षा, स्थिति, जनजाति, घुमंतु**

वर्तमान में बिरहोर जनजाति के लोग अपनी भाषा बिरहोरी से विमुख हो रहे हैं, आवागमन के साधन, सड़क, शिक्षा संपर्क के कारण ये छत्तीसगढ़ी के संपर्क में आ रहे हैं तथा अपनी बोली भाषा से दूर हो रहे हैं। अपनी शब्दावली से स्वयं बिरहोर भी विमुख हो रहे हैं या यूँ कहें की भाषांतरण कर रहें हैं। क्षेत्र भ्रमण के दौरान दैनिक प्रयोग किये जाने वाले शब्दों को संग्रह करने का प्रयास किया गया है। अतः इस विलुप्त हो रही जनजाति की भाषा व्याकरण का प्रलेखन जरूरी है। बिरहोरी में ध्वनि, रूप, वाक्य एवं अर्थ तथा अन्य भाषा के प्रभाव को केंद्रित कर कार्य किए जाने की आवश्यकता है। इस बोली का व्याकरण तथा शब्दकोश तैयार किया जा सकता है। इस प्रकार के कार्य से भाषा का संवर्धन तो होगा ही, साथ ही बिरहोर जनजाति के बच्चों में शिक्षा के प्रति रुचि जागृत करने में मदद मिलेगी यद्यपि यह सरल कार्य नही है। बिरहोरी संस्कृति के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए प्रांरभिक प्रावधान के रूप में लोकभाषा, लोकगीत, लोककथा आदि को दृश्य-श्रव्य माध्यम के द्वारा संरक्षित किया जा सकता हैं। इस प्रकार का कार्य उन्हें

• सहायक प्राध्यापक, हिंदी, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर, छत्तीसगढ़

सामाजिक सांस्कृतिक रूप से संरक्षण प्रदान करेगा ही साथ ही शैक्षिक स्तर सुधार करने में मदद मिलेगी।

**अध्ययनित विषय का परिचय**

- अध्ययन क्षेत्र का परिचय– छत्तीसगढ़, जिला कोरबा, ग्राम डोंगानाला एवं भंडारखोल
- बिरहोर जनजाति में शिक्षा संबंधी समस्या
- बिरहोर जनजाति की भाषा शब्दावली
- निष्कर्ष एवं सुझाव

**प्रस्तावना-** भारतीय जनसंख्या का 8.2 प्रतिशत भाग वनों पहाड़ों, दुर्गम क्षेत्रों में निवास करता है।[1] इन क्षेत्रों में निवास करने वाले मानव समुदाय को सामान्यजन आदिवासी, आदिम जाति, जनजाति, वन्य जाति, आदि नामों से जानते हैं। यह आदि जातियां देश के प्रत्येक प्रांत में पायी जाती हैं। देश के उत्तर पूर्वो भाग में मंगोल प्रजाति के लक्षणों वाली ढेरों आदि जातियां अलग.अलग राज्यों में पायी जाती हैं। इसी प्रकार आदिवासियों का एक विशाल क्षेत्र देश के मध्य भाग में हैं जिनमें झारखंड, बिहार, छत्तीसगढ़, ओडिसा और मध्य प्रदेश राज्यों में इनकी जनसंख्या बहुतायत है।[2] भारत सरकार किसी भी समूह को आदिवासी करार देने के लिए जिन पांच संकेतकों का सहारा लेती है, वे निम्नलिखित हैं– आदिम लक्षण, विशिष्ट संस्कृति, भौगोलिक पृथक्करण, समाज के एक बड़े भाग से संपर्क करने में संकोच एवं पिछड़ापन का उल्लेख आदिवासी भारत पुस्तक में योगेश अटल जी ने किया है।

वर्तमान में जनजाति समाज में तीव्र गति से परिवर्तन हो रहे हैं, इसलिए आज के संदर्भ में पूर्णतः परिभाषित करना कठिन है तथापि जनजाति समुदाय कि कुछ विशिष्टताएँ होती हैं–

- जनजाति का एक नाम होता है।
- जनजाति परिवारों का एक समूह होता है।
- जनजाति की अपनी एक भाषा एवं संस्कृति होती है।
- एक सुनिश्चित भूभाग पर वितरण होता है।
- गोत्र एवं अंतर्विवाही समूह की विशेषता होती है।
- स्वतंत्र राजनीतिक संगठन होता है, जिसमें मुखिया सर्वोच्च होता है।

**बिरहोर जनजाति-** बिरहोर ऑस्ट्रो एशियाटिक प्रो ऑस्ट्रेलाइड परिवार की जनजाति है। बिरहोर दो शब्दों से मिलकर बना है। बीर+होर जिसका शाब्दिक अर्थ है, जंगल का आदमी। बिरहोर प्रारंभ से ही जंगलों में घुमंतू जीवन व्यतीत करते रहे हैं और जंगल में ही रहकर कंदमूल खाकर एवं बांसो से काश्तकारी कर, रस्सी बनाने जैसे कार्य कर जीवन यापन करते हैं। ये रोटी और आवास के लिए आज भी संघर्ष कर रहे हैं। बिरहोर का घर कुंबा कहलाता है बड़े घर को कोड़ा कुंबा तथा छोटे घर कोचो कुंबा कहते हैं, ये पितृसत्तात्मक हैं इनका निवास टंडा कहलाता है।

**छत्तीसगढ़-** छत्तीसगढ़ प्राचीन काल में दक्षिण कोसल कहलाता था प्रसिद्ध चीनी यात्री हवेनसांग ने सिरपुर की यात्रा की थी। वर्तमान में ओडिशा, झारखंड, तेलंगाना, महाराष्ट्र,

मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश इसकी राज्य सीमा बनाते हैं। यहां पर्वतीय एवं मैदानी क्षेत्रों की बहुलता है। रिहंद, हसदो, शिवनाथ, महानदी, इंद्रावती छत्तीसगढ़ के प्रवाहमान प्रमुख नदियां है। अधिकांश क्षेत्रों में लाल पीली मिट्टी पाई जाती है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राज्य की साक्षरता दर 71.04 प्रतिशत है।

**कोरबा-** छत्तीसगढ़ में ऊर्जा राजधानी के रूप में जाना जाता है। यहां राष्ट्रीय स्तर की उद्योग स्थापित है। यहां के मुख्य निवासी आदिवासी है जो की कुल जनसंख्या आबादी का 51.67 प्रतिशत है।[3] पाली विकासखंड स्थित डोंगानाला एवं भंडारखोल में बिरहोर जनजाति के लोग निवास करते हैं। इन गांवों में राऊत, मरार एवं तेली जाति के लोगों के साथ साथ धनवार, गोंड, सांवता एवं कंवर जनजाति के परिवार यहां निवास करते हैं। इन्हीं परिवारों की शिक्षा एवं भाषा की समस्या का अध्ययन उद्देश्य रहा है।

भाषा संरक्षण एवं संवर्धन के लिए गणेश एन. देवी ने महत्वपूर्ण बात कही है। हाशिए पर जा चुकी कई भाषाओं तथा कुछ प्रमुख भाषाओं में अपनी उन्नति के प्रति उदासीनता दिखाई देती है। बच्चों की बड़ी तादाद अत्याधिक फीस देकर अंग्रेजी माध्यम की स्कूलों में पढ़ रही है। जब कोई बच्चा किसी भारतीय भाषा माध्यम कि स्कूल में प्रवेश लेता है तो उसे एक सामाजिक पिछड़ेपन के रूप में देखा जाता है। इन परिस्थितियों में भाषाओं के संरक्षण का काम, विशेष रुप से ऐसी भाषाएं जिनके संरक्षण की नितांत आवश्यकता है, काफी चुनौतीपूर्ण है। यहां काम महज व्यवस्था संबंधी परिवर्तनों से संभव नहीं होगा।[4]

जाहिर बात है उक्त परिस्थितियों में जनजातियों के लिए शिक्षा और भाषा संवर्धन और ज्यादा कठिन कार्य होगा। तमामशिक्षाशास्त्री एक मत है कि प्राथमिक शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए क्योंकि मातृभाषा में पुस्तकें पढ़ने से छात्रों के सोचने समझने की क्षमता में वृद्धि होती है। वे ज्यादा क्रियाशील रहते हैं तथा अपनी भाषा संस्—ति से जुड़े भी रहते हैं।

**बिरहोर जनजाति में शिक्षा संबंधी समस्या-** शिक्षक किसी भी समाज के लिए अत्यंत आवश्यक होता है। शिक्षा का महत्व केवल नौकरी या व्यवसाय से ही नहीं होता बल्कि शिक्षा अपने आंतरिक और बाह्‌ जगत के संबंध में जानने का अवसर प्रदान करता है। जनजातियों में शिक्षा स्थिति जटिल समाज के समान एक स्वतंत्र चर के समान नहीं होती बल्कि वहां अनेक तत्वों से प्रभावित होती है। जैसे जटिल समाज में एक बालक या बालिका अपने शिक्षा संबंधी कार्य के अतिरिक्त अन्य कार्यों में संलग्न नहीं होते परंतु जनजातियों में जीवन निर्वाह व्यवस्था में परिवार के सभी सदस्य प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से अपने घर के आर्थिक गतिविधियों में संलग्न रहते हैं।

अध्ययन किस भाग में अध्ययनित ग्राम की बिरहोर जनजाति की शैक्षणिक स्थिति को जानने का प्रयास किया है एवं इसके साथ ही बिरहोर जनजाति के बच्चों द्वारा अनुभव की जाने वाली शिक्षा संबंधित समस्याओं को जानने का प्रयास किया गया है।

**बिरहोर बालक-बालिकाओं के परिवार की संरचना-** अध्ययन के इस भाग में बिरहोर बालक-बालिकाओं की परिवारिक संरचना को जानने का प्रयास किया गया है। किसी भी परिवार का प्रकार, परिवार में भीड़-भाड़ की स्थिति बच्चों को घर में किस

प्रकार का माहौल मिलता होगा, पर बहुत अधिक निर्भर करता है। क्योंकि संयुक्त और विस्तृत परिवार में यदि आवास स्थल छोटा हो तो अध्ययन के लिए पर्याप्त और शांत स्थान मिलने की संभावना कम हो जाती है।

**तालिका क्रमांक 01**

**बिरहोर बालक - बालिकाओं के परिवार की संरचना**

| क्रमांक | परिवार का प्रकार | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 01 | एकल | 22 | 62.9 |
| 02 | संयुक्त | 08 | 22.9 |
| 03 | विस्तृत | 05 | 14.2 |
| | योग | 35 | 100 |

**बिरहोर बालक-बालिकाओं की आयु-** अध्ययन के इस भाग में सामान्य जानकारी के रूप में अध्ययनित ग्राम की बिरहोर बालक-बालिकाओं की आयु स्थिति को जानने का प्रयास किया गया है। बढ़ती आयु के साथ समाज और संसार को समझने और जानने का अनुभव भी बढ़ते जाता है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव शैक्षणिक स्थिति पर पड़ता है।

**तालिका क्रमांक 02**

**बिरहोर बालक - बालिकाओं की आयु**

| क्रमांक | बिरहोर बालक-बालिकाओं की आयु | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 01 | 5-10 | 25 | 71.4 |
| 02 | 11-15 | 09 | 25.7 |
| 03 | 15-17 | 01 | 2.9 |
| | योग | 35 | 100 |

अध्ययन समुदाय में शाला त्यागी बच्चों की आयु का अध्ययन करने से एक अत्याधिक संवेदनशील स्थिति प्राप्त होती है। अध्ययन समूह के अधिकांश बच्चे केवल 5 से 10 वर्ष की आयु में ही शाला त्याग कर दिए हैं, जो उनकी संपूर्ण आयु के लिए अत्याधिक गंभीर समस्या है। जबकि द्वितीय क्रम में 25.7 प्रतिशत बच्चे 11 से 15 वर्ष की आयु में शाला त्याग किए हैं और 2.9 प्रतिशत बच्चे 15 से 17 वर्ष की आयु में शाला त्याग किया हैं। निश्चित रूप से इतने कम आयु में बच्चों द्वारा शाला त्याग करना प्रारंभिक स्तर पर उनमें शिक्षा संबंधी जागरूकता का उत्पन्न नहीं कर पाना है।

**बिरहोर बालक-बालिकाओं का लिंगानुपात -** आयु के समान अध्ययन के इस भाग में बिरहोर जनजाति के बच्चों के लिंग स्थिति को भी जानने का प्रयास किया गया है। हालांकि शिक्षा संबंधी कार्यों में लिंक कोई विशेष स्थान नहीं होता परंतु घर की गतिविधियों और आर्थिक क्रियाकलापों में लिंग का महत्वपूर्ण और प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है, जहां एक और घर में बालिकाएं अपने घरेलू कार्य में संलग्न रहती है वहीं दूसरी ओर बालक घर की आर्थिक क्रियाकलापों में संलग्न रहते हैं जो बच्चों के शिक्षा और स्कूल से दूर होने का कारण हो सकता है।

**तालिका क्रमांक 03**
**बिरहोर बालक - बालिकाओं का लिंगानुपात**

| क्रमांक | बिरहोर बालक-बालिकाओं की आयु | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 01 | स्त्री | 25 | 71.4 |
| 02 | पुरुष | 09 | 25.7 |
| | योग | 35 | 100 |

अध्ययन समूह में अधिकतम 65.7 प्रतिशत पुरुष और 34.3 प्रतिशत स्त्री है। जनजाति समुदाय के बालकों को अधिकांशतः अपने आर्थिक क्रियाकलापों में संलग्न रहना पड़ता है। परंतु जनजाति समुदाय की 35.3 प्रतिशत स्त्री जो शाला त्याग किए हैं, वह भी घर के विभिन्न प्रकार के कार्यों में संलग्न रहते हैं। इस प्रकार से बिरहोर जनजाति के बालक-बालिका दोनों शाला त्याग जैसे समस्या से जूझ रहे हैं।

**बिरहोर बालक-बालिकाओं की परिवार की आर्थिक स्थिति-** किसी भी परिवार की आर्थिक स्थिति उस परिवार के अन्य पक्षों को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। क्योंकि आर्थिक स्थिति से सामाजिक प्रतिष्ठा के निर्धारण, आवश्यकता की पूर्ति सभी तत्व निर्भर करता है। शिक्षा संबंधी खर्चों में भी जनजाति समुदाय अपने जीवन निर्वाही व्यवस्था के कारण खर्च का वहन नहीं कर पाते। इसके अतिरिक्त जनजातियों के जीवन निर्वाही अर्थव्यवस्था के कारण परिवार के सभी सदस्य कार्य करते हैं जिसमें बच्चे भी संलग्न रहते हैं। विशेषकर तेंदूपत्ता संग्रहण, चार संग्रहण, महुआ संग्रहण इत्यादि के समय, बच्चे लघु उत्पाद संग्रहण को स्वाला से अधिक महत्व देते हैं।

**तालिका क्रमांक 04**
**बिरहोर बालक - बालिकाओं की परिवार की आर्थिक स्थिति**

| क्रमांक | बिरहोर बालक-बालिकाओं की आयु | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 01 | निम्न | 29 | 82.9 |
| 02 | निम्न-मध्यम | 06 | 17.1 |
| | मध्यम | 00 | 00 |
| | योग | 35 | 100 |

महत्वपूर्ण अध्ययन के रूप में शाला त्यागी बालक.बालिकाओं के घर की आर्थिक स्थिति को जानने का प्रयास किया गया है। क्योंकि आर्थिक स्थिति अन्य लगभग सभी आयामों को प्रभावित करती है। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है अध्ययन समुदाय के अधिकांश परिवार निम्न आय वर्ग से संबंधित है, जिनका प्रतिशत 82.9 है, जबकि अन्य बच्चे निम्न-मध्यमवर्ग वाले परिवार से है। अध्ययन समूह का कोई भी परिवार मध्यम वर्ग से संबंधित नहीं है।

**बिरहोर बालक बालिकाओं की माता-पिता की शैक्षणिक स्थिति-** किसी भी परिवार में माता-पिता के प्रत्येक प्रकार के व्यवहार और योगदान का बच्चों पर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। यदि माता-पिता शिक्षित हो तो वे बच्चों को भी शिक्षा संबंधी कार्यों के लिए उत्साहित करते हैं। परंतु जनजाति समुदाय में बच्चों के माता-पिता के अशिक्षित होने के कारण इनके इच्छा के आधार पर नहीं अपितु उनकी मजबूरी के कारण हैं। अनेक जनजातीय यदि पढ़ना भी चाहते है तो जंगल के विपरीत परिस्थितियों के कारण में पढ़ नहीं पाते हैं।

**तालिका क्रमांक 05**

**बिरहोर बालक-बालिकाओं के माता-पिता की शैक्षणिक स्थिति**

| क्रमांक | बिरहोर बालक-बालिकाओं की आयु | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 01 | निम्न | 29 | 82.9 |
| 02 | निम्न-मध्यम | 06 | 17.1 |
| | मध्यम | 00 | 00 |
| | योग | 35 | 100 |

महत्वपूर्ण अध्ययन के रूप में शाला त्यागी बालक-बालिकाओं के घर की आर्थिक स्थिति को जानने का प्रयास किया गया है। क्योंकि आर्थिक स्थिति अन्य लगभग सभी आयामों को प्रभावित करती है। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है अध्ययन समुदाय के अधिकांश परिवार निम्न आय वर्ग से संबंधित है, जिनका प्रतिशत 82.9 है, जबकि अन्य बच्चे निम्न-मध्यमवर्ग वाले परिवार से है। अध्ययन समूह का कोई भी परिवार मध्यम वर्ग से संबंधित नहीं है।

**बिरहोर बालक-बालिकाओं के अनुसार उनके शाला त्यागने का कारण-** अध्ययन के इस भाग में बिरहोर बालक बालिकाओं के द्वारा शाला त्यागने के कारणों को जानने का प्रयास किया है। जनजाति जीवन पद्धति में शाला त्यागने के अनेक कारण हो सकते हैं जिसमें उनकी जीवन निर्वाही अर्थव्यवस्था महत्वपूर्ण कारण हो सकती है।

**तालिका क्रमांक 06**

**बिरहोर बालक-बालिकाओं के अनुसार उनके शाला त्यागने का कारण**

| क्रमांक | बिरहोर बालक-बालिकाओं के अनुसार शाला त्यागने का कारण | आवृत्ति | प्रतिशत |
|---|---|---|---|
| 01 | आर्थिक समस्या | 10 | 28.6 |
| 02 | किसी विषय से डर लगना | 08 | 22.8 |
| 03 | पाठ्यक्रम समझ नहीं आना | 10 | 28.6 |
| 04 | घर में छोटे भाई बहनों की देखरेख करना | 03 | 8.6 |
| 05 | घर के काम में हाथ बंटाना | 04 | 11.4 |
| | योग | 35 | 100 |

तालिका क्रमांक 07 से स्पष्ट होता है कि बिरहोर जनजाति के बच्चों में शाला त्यागने के अलग-अलग कारण प्राप्त हुए हैं। अध्ययन समुदाय के अधिकांश बालक बालिकाएं समान प्रतिशत 28.6 प्रतिशत में अपने शाला त्यागने का कारण आर्थिक समस्या और पाठ्यक्रम की समझ में नहीं आना को मानते हैं। जबकि 22.8 प्रतिशत बच्चे किसी ना किसी विषय के प्रति अपने डर को अपने साला त्यागने का कारण मानते हैं। जिसमें अधिकांशतः गणित और अंग्रेजी जैसे विषय है। जबकि घर में छोटे भाई-बहनों की देखरेख करना, घर के काम में हाथ बंटाने को भी अपने साला त्यागने का कारण मानते हैं।

**बिरहोर जनजाति की शब्दावली-** गोत्र एवं उनसे संबंधित टोटम शब्दावली

| गोत्र | गण चिन्ह |
|---|---|
| बादी | बरगद पेड़ |
| गंधेर | शेर |
| बाड़ी | मछली |
| कोसोंदी | कोसा पेड़ |
| सोनवानी | स्वान |

**बिरहोर नामकरण शब्दावली-**

| नाम | कारण अथवा आधार |
|---|---|
| समारू राम | सोमवार को जन्म होने के कारण |
| मंगलू | मंगलवार को जन्म होने के कारण |
| बुधराम | बुधवार को जन्म होने के कारण |
| गुरुवारिन बाई | गुरुवार को जन्म होने के कारण |
| इतवारिन बाई | इतवार को जन्म होने के कारण |
| चौतराम | चौत माह में जन्म होने के कारण |
| फागुनी बाई | फागुन माह में जन्म होने के कारण |
| सावन साय | सावन माह में जन्म होने के कारण |
| कातिक राम | कार्तिक माह में जन्म होने के कारण |
| बिहानी बाई | सुबह जन्म होने के कारण |

**जानवरों व पक्षियों के लिए प्रयुक्त शब्दावली-**

| हिंदी | बिरहोरी | हिंदी | बिरहोरी |
|---|---|---|---|
| गाय | ऊरी | बैल | बैल |
| भैंस | भैंसा | बछड़ा | बेलाती |
| सांड | सोड़ाती | कुत्ता | सेता |
| बिल्ली | मुनु | शेर | कुला |

**पेड़ों- पौधों की शब्दावली**

| हिंदी | बिरहोरी | हिंदी | बिरहोरी |
|---|---|---|---|
| पीपल | पीपर | नीम | लीम |
| बांस | माइन, माऊ | सरई (साल) | सरजोम |
| सागौन | सगतान | केला | केरा |
| पपीता | पपीता | आम | ऊली |

**दैनिक बोलचाल में उपयोग होने वाली शब्दावली-**

| हिंदी | बिरहोरी | हिंदी | बिरहोरी |
|---|---|---|---|
| पानी | दाअ | आग | सिंगेल |
| हवा | होयतांते | मिट्टी | आसा |
| जंगल | बीर | आसमान | बादर |
| पेड़ | घारू | घास | मरचा |

## गृहस्थी की शब्दावली

| वस्तु का नाम | निर्मित सामग्री का नाम | वस्तु का उपयोग |
|---|---|---|
| चटाई | पत्ते से निर्मित | बैठने अथवा सोने हेतु उपयोगी |
| लोटा | एल्युमिनियम से निर्मित | पानी रखने व पीने हेतु उपयोगी |
| सूपा | बांस से निर्मित | अनाज साफ करने हेतु |
| टोकरी | बांस से निर्मित | अनाज रखने हेतु |
| चलनी | लोहे से निर्मित | अनाज साफ करने हेतु |
| थैला | रस्सी से निर्मित | सामान रखने हेतु |
| चिमनी | शीशी से निर्मित | प्रकाश व्यवस्था हेतु |
| झाड़ू | पत्ते से निर्मित | सफाई कार्य हेतु |
| बाल्टी | लोहे से निर्मित | पानी भरने हेतु |
| चिमटा | लोहे से निर्मित | आग पकड़ने हेतु |
| गिलास | एल्युमिनियम से निर्मित | पानी पीने हेतु |
| डूआ | एल्युमिनियम से निर्मित | भोजन निकालने हेतु |

## बिरहोर भाषा में प्रचलित शब्दावली का हिंदी शब्दार्थ

| बिरहोरी भाषा | हिंदी अर्थ | बिरहोरी भाषा | हिंदी अर्थ |
|---|---|---|---|
| हुरू | धान | घैला | मिट्टी का घड़ा |
| मांडी | चावल से बना भात | नाहैर | हल |
| माई | माता | आपु | पिता |
| दाई | दादी | झाड़ी होरमी | गर्भवती महिला |
| राडी | विधवा | हनहर | सांस |
| होईहार | ससुर | कोंदा | गूगा लड़का |
| पटिया | चटाई | किचरी | कपड़ा |
| सेता | कुत्ता | पोखरा | तलाब |
| बिहागीत | विवाह का गीत | खोदा | गेदना |
| चुरी | हाथ का गहना | बुरु | पहाड़ |

**निष्कर्ष-** जनजाति समाज की जीवन शैली सामान्य ग्रामीण जनों और शहरों में निवास करने वाले व्यक्तियों के जीवन शैली से अलग होती है अत: मुख्यधारा में लाने के लिए उनकी संस्कृति और रीति-रिवाजों को ध्यान में रखकर पाठ्य सामग्री तैयार की जानी चाहिए। यदि उन्हें गणित सिखानी हो तो उनके यहां प्रचलित खेलों के माध्यम से सिखाया जा सकता है इतिहास में उनके नायक, समाज और संस्कृति से जुड़े पाठ तैयार किए जाने चाहिए। जनजाति में शिक्षा तथा उनकी भाषा को समृद्ध करने के लिए पारंपरिक लोक साहित्य, लोक संगीत, पारंपरिक खेलों से उन्हें जोड़ा जाए जिससे उनकी रूचि पठन-पाठन में बने। इस अध्ययन के दौरान देखा गया है कि बिरहोर जनजाति के बालकों में शिक्षा के प्रति लगाव ना होने का कारण पाठ्यक्रम एवं सामग्री का उनकी भाषा-बोली एवं संस्कृति से भिन्न होता है। अत: आवश्यकता इस बात की है उनकी बोली को व्याकरण शब्दकोश तथा लिपि के माध्यम से व्यक्त किया जाए। उनके लोक गीत, लोक कथा दृश्यश्रव्य माध्यम से संरक्षित कर उनके समक्ष प्रस्तुत किया जाए।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


1. योगेश अटल, (2011), आदिवासी भारत. दिल्ली रू रावत पब्लिकेशन. पृ.14
2. वही पृ.15.
3. https://korba-gov-in/hi- 09/01/2020
4. देवी एन.गनेश.(2015) भारतीय भाषा लोक सर्वेक्षण plsi-07. हैदराबाद, ओरियंट ब्लेक्स्वान, संपादकीय 28

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# नाद क्या है? संगीत में नाद साधना की उपयोगिता तथा मानव जीवन में इसका महत्त्व

• दीपिका तिवारी

**सारांश- नाद, संगीत में एक महत्वपूर्ण प्रत्याहार (Element) है जिसका अर्थ होता है 'ध्वनि' या 'आवाज'। संगीत में नाद विभिन्न स्वरों, तालों, लयों, और संगीतीय तत्वों को प्रकट करने के लिए उपयोग किया जाता है। यह संगीत की आधारभूत ईंधन है जो संगीतकारों और गायकों को संगीतीय अनुभव के साथ रूपांतरण करता है। नाद साधना की उपयोगिता उसके माध्यम से मानव के अंतरंग शक्तियों को जानने और समझने का माध्यम है। इससे न केवल संगीतकार, गायक, या संगीत प्रेमी को संगीत में सुधार होता है, बल्कि यह आध्यात्मिक विकास में सहायक होता है। नाद साधना के जरिए मन को शांत करते हुए, ध्यान में लगने में, और मानसिक समृद्धि को प्राप्त करने में सहायता मिलती है। इसके माध्यम से मानव अपने अंदर के गहराइयों को समझने और अध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ने का सामर्थ्य प्राप्त करता है। मानव जीवन में नाद का महत्व संगीत के साथ-साथ मानव के शारीरिक, मानसिक, और आध्यात्मिक अस्तित्व को पोषण करता है। संगीत के माध्यम से नाद साधना आत्मसाक्षात्कार और स्वयं-संवेदनशीलता का अनुभव करने का मार्ग प्रशस्त करती है। इसके अलावा, नाद संगीत मानव जीवन को सुख, समृद्धि, से भर देने में भी सहायक होता है। इस प्रकार  नाद साधना का महत्व संगीत तथा  मानव जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित करता रहता है, और यह व्यक्ति के एकाग्रता, आनंद और उन्नति में मदद करता है।**

**मुख्य शब्द - नाद, संगीत, साधना, ध्यान, योग**

**प्रस्तावना-** समस्त जगत नाद के आधीन माना गया है। जहाँ कहीं भी संसार में जीवन है उन सभी जगहों में नाद अर्थात ध्वनि  विद्यमान है। संगीत सुखजनक नाद विशेष है। महर्षि भरत ने नाद उत्पत्ति की सुंदर व्याख्या की है, बोलने की इच्छा रखने वाली आत्मा मन को प्रेरित करती है, मन के द्वारा अग्नि को प्रेरणा मिली यह अग्नि वायु को प्रेरित करती है। अग्नि तथा प्राणवायु के संयोग से नाभि, हृद्य कंठ, मूर्ध्न (सिर ) तथा तालु को स्पर्श करता हुआ नाद उत्पन्न होता है। संगीत रत्नाकर के अनुसार -

नकारं प्राणमामानं दकारमनलं बिन्दु ।(1/376)

जात:प्राणाग्निसयोगात्तेन नादोऽभिधीयते ॥ -संगीतद रत्नाकर (1/376)

• शोध छात्रा, संगीत, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

अर्थात् – 'नकार' प्राण – वाचक ( वायु – वाचक ) तथा 'दकार' अग्नि – वाचक है , अत रू जो वायु और अग्नि के योग ( सम्बन्ध ) से उत्पन्न होता है , उसी को 'नाद' कहते है।

**शोध प्रविधि-** शोध की प्राविधि वर्णात्मक है। इस लेख में द्वितीयक स्त्रोतों से तथ्य संकलन कर उनका सरलीकरण किया गया है।

नाद एक अभ्यास है जिसमें नाद (संगीतिक ध्वनि) के माध्यम से अपनी चेतना को स्थिर करने और मन को शांत करने का प्रयास किया जाता है। यह एक प्राचीन और प्रभावशाली तकनीक है जिसे भारतीय संगीत और योग परंपरा में महत्व दिया जाता है। नाद साधना में, अभ्यासक विभिन्न सुरों, तालों, और रागों के माध्यम से ध्यान और मनोयोग को स्थापित करने का प्रयास करते हैं। इसका उद्देश्य अपने अंतर्मन की शांति, सुख, और अच्छे स्वास्थ्य को प्राप्त करना है। नाद साधना द्वारा, अभ्यासक संगीत के आनंद का अनुभव करते हैं और अपने अंतरंग अवस्था में स्थिरता और सामर्थ्य का विकास करते हैं। नाद ईश्वर प्राप्ति के बीच एक गहरा संबंध है। जिस तरह योग में आसान के लिए सिद्धासन और कुम्भक प्राणायाम किया जाता है उसी तरह परमात्मा तत्व को जानने के लिए नाद को ही महान बताया गया है। जब इस विशेष साधना में किसी व्यक्ति को सफलता प्राप्त होने लगती है तब नाद सुनाई देने लगता है, नाद का सुनाई देना सिद्धि प्राप्त का संकेत है।

शब्द को ब्रम्हा कहा गया है, क्योंकि ईश्वर से जुड़ने का मार्ग शब्द के माध्यम से होता है। सृष्टि की उत्पति का प्रारम्भ भी शब्द ही है। पंचतत्व में सर्वप्रथम आकाश बना यह शब्द है, अन्य समस्त पदार्थों की भांति शब्द है। शब्द दो प्रकार के हैं– सूक्ष्म और स्थूल जहाँ सूक्ष्म शब्द विचार का घोतक है तथा स्थूल शब्द नाद का। शब्द ब्रह्म का दूसरा रूप जो विचार की अपेक्षा कुछ स्थूल है वह नाद है। ॐ शून्य पद में स्थित परब्रह्म सदा शिव अक्षर है। यह निराकार है जिसे सामान्य दृष्टि से देखा जाना संभव नहीं यह ज्ञान की दृष्टि द्वारा अंतर्मन में दर्शनीय है। केवल नाद –नाद रटने से मात्र साधना की सिद्धि नहीं होती इसमें मन को सम्पूर्ण रूप से एक चित्त कर, अमनस्क कर चित्तवृत्ति का नरोध कर नाद की अंतिम अवस्था प्राप्त की जाती है।

नाद हमारे जीवन में एक महत्वपूर्ण ध्वनि है जो हमें सुनाई देती है। यह संगीत की एक प्रकार की ध्वनि है जिसे सुरों के संगठन द्वारा उत्पन्न किया जाता है। नाद विशेष रूप से संगीत और ध्यान के अभ्यास में महत्वपूर्ण होता है। यह सूर, ताल और लय के विविध तत्वों को मिलाकर एक सुंदर और एकीकृत संगीतिक अनुभव प्रदान करता है। नाद की मान्यता है कि यह विश्व में एक सर्वव्यापी शक्ति है और इसका अभ्यास हमारे मन, शरीर और आत्मा को संतुलित कर सकता है। नाद एक ऊर्जा का रूप है जो हमें संगीत के माध्यम से आनंदित कर सकती है और हमें एक अद्वितीय सामर्थ्य और भावनाओं का अनुभव करने में सहायता कर सकती है।

नाद संबंधित श्लोक और उनके अर्थ –

1. 'नादब्रह्मतत्त्वं निश्चितं निरन्तरं निशाकरभास्करादित्ययोर्यथा।
तथैव ब्रह्मणः स्वरूपं नित्यं निर्विकल्पं निर्गुणं निराकारमेव।।'

अर्थात 'नाद ब्रह्म की तत्त्व की निश्चितता और अविरतता रवि और चंद्रमा के

उदाहरण की तरह होती है। उसी तरह ब्रह्म की स्वरूपता सदा अविच्छिन्न, निर्विकल्प, निर्गुण और निराकार होती है।'

2. 'आत्मनं रतिरेव स्यात्तन्त्री वादिनी तथैव च। नादब्रह्मं वदेन्नित्यं संसारतारकं शिवम्।।'

अर्थात जैसे वीणावादिनी रति अपनी वीणा में रमती है, उसी तरह नित्यता के साथ नाद ब्रह्म का वर्णन करने वाला व्यक्ति संसार से पार करने वाले शिव के समान हो जाता है।

सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं सच्चिदानन्दलक्षणम्।
नादं न भेदं न संज्ञायां न गुणं न दोषं न लक्षणं नात्मार्थं।।

अर्थात यह श्लोक नाद के स्वरूप की महत्वपूर्णता को व्यक्त करता है। इसमें कहा गया है कि नाद भेद, संज्ञा, गुण, दोष, लक्षण या आत्मार्थ के रूप में नहीं होता है। नाद सच्चिदानन्द की लक्षण है, जो सभी उपाधियों से मुक्त होता है।

इस श्लोक में नाद को अपने स्वरूप के परे और परमात्मा के साथ एकीकृत करने की प्रेरणा है। यह उपाधियों से रहित आत्मा के आनंदमय स्वरूप की प्रतिष्ठा करता है। नाद से पारम्य, अद्वैत और आनंद की अनुभूति होती है।

नाद और ईश्वर प्राप्ति के बीच एक गहरा संबंध होता है। नाद, जो अव्यक्त ध्वनि को दर्शाता है, एक आध्यात्मिक साधना का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसके माध्यम से, मनुष्य आंतरिक शांति, मेधा, और आध्यात्मिक उन्नति की प्राप्ति कर सकता है।

ईश्वर प्राप्ति में नाद का महत्वपूर्ण योगदान होता है। नाद साधना द्वारा, मनुष्य अपने अंतरंग मन को स्थिर करता है और अविराम ध्यान में प्रवेश करता है। इस अवस्था में, मनुष्य अपने स्वभाविक स्वरूप के पार ईश्वरीय अनुभवों को प्राप्त करता है। नाद साधना ईश्वर से अनुभूत सामर्थ्य, शक्ति और प्रेम का अनुभव करने में सहायता करती है।

इस प्रकार, नाद साधना के माध्यम से मनुष्य ईश्वर के साथ एकीभाव में जाने की सामर्थ्य प्राप्त करता है। यह उसे आत्मा के साथ संयोग स्थापित करता है और आंतरिक आनंद, शांति और समृद्धि का अनुभव कराता है। यही समृद्ध अनुभव मोक्ष की प्राप्ति में सहायक है।

**नाद के प्रकार-** आहतो नाहतश्चेति द्विधा नादो निगद्यते । सोऽय प्रकाशते पिंडे तस्तापिडोऽभिधीयते।। -संगीत रत्नाकर के अनुसार। अर्थात् नाद के दो प्रकार जाने जाते हैं – 'आहत' तथा 'अनाहत'। ये दोनों पिड (देह) में प्रकट होते हैं , इसलिए पिड का वर्णन किया जाता है ।

**1. अनाहत नाद-** यह नाद होता है जो बिना किसी अघात के उत्पन्न होते हैं अर्थात बिना किसी कारण के स्वत: उत्पन्न होता है तथा सामान्य रूप से सुना ना जा सके अनाहत नाद है। जैसे- दोनों कान जोर से बंद करने पर अनुभव करके देखा जाए , तो 'चन्न – घन्न' या 'सांय- साय' की आवाज़ सुनाई देती है । इसके बाद नादोपासना की विधि से गहरे ध्यान की अवस्था में पहुंचने पर सूक्ष्म नाद सुनाई पड़ने लगता है जो मेघ गर्जन या जोर की बारिश आदि के स–श होता है। जो बिना वाद्य यंत्र या उपकरण के उत्पन्न वाइब्रेशन होता है। इसे मेधावी योगियों द्वारा ध्यान के अवस्था में सुना जा सकता है। इसे सूक्ष्म और गुप्त

नाद भी कहा गया है यह नाभिकमल में स्थिर है जो स्वयं से उत्पन्न होता रहता है। अनहत शब्द प्रमुखतः 10 होते हैं जिनके नाम क्रमशः - 1. संहारक, 2. पालक, 3. सृजक, 4. सहस्त्रदल, 5. आनद मंडल, 6. चिदानंद, 7. सच्चिदानंद, 8. अखण्ड, 9. अगम, 10. अलख।

**2. आहत नाद-** वह नाद जो आघात करने पर उत्पन्न होता है अर्थात वह ध्वनि जो घर्षण वा चोट लगने से उत्पन्न हो आहत नाद कहलाता है। वाद्य यंत्र या उपकरण के द्वारा उत्पन्न होता है। वाद्ययंत्र जैसे ताल वाद्य, सारंगी, तबला, वायोलिन आदि द्वारा उत्पन्न होने वाले ध्वनि नाद इस प्रकार के होते हैं। यह नाद होता है जो किसी संगीत यंत्र के संगीत उद्यम द्वारा उत्पन्न होता है। इसमें वाद्य यंत्रों या संगीत उपकरणों के नाद शामिल होते हैं जैसे कि घंटी, ट्रंपेट, पियानो, गिटार आदि। ये दो प्रमुख नाद के प्रकार हैं। आहत नाद संगीतोपयोगी हैं।

**नाद की विशेषता एवं लक्षण-** नाद के मुख्यतः तीन विशेषता अथवा लक्षण हैं -

**तारता अथवा (उँचापन-नीचापन)**– इसे अंग्रेजी में Pitch भी कहते हैं। तारता के द्वारा हम नाद के ऊँचेपन-नीचेपन को समझ सकते हैं। यह नाद की प्रति सेकेण्ड होने वाली आंदोलन संख्या पर निर्भर करता है। आंदोलन संख्या जितनी अधिक होगी, नाद तना उतना ही ऊँचा होगा तथा आंदोलन संख्या जितनी कम, होगी, नाद तना उतना ही नीचा होगा।

**तीव्रता अथवा (छोटा-बड़ा पन)**– इसे अंग्रेजी में Magnitude या Loudness भी कहते हैं। यह आघात की शक्ति पर निर्भर करता है। आघात जितना ही हल्का होगा, नाद उतना ही हल्का व कम दूरी तक सुनाई देगा और यदि आघात जोरदार होगा तो नाद अत्यधिक दूरी तक तथा देर तक सुनाई देगा । विशेषतः हम तीव्रता से यह जान पाते हैं कि ध्वनि वातावरण के कितने क्षेत्र को प्रभावित करता है।

**नाद की जाती अथव गुण** – इस गुण की विशेषता यह है कि इसमें अमुक वाद्य द्वारा बजने वाली ध्वनि की पहचान की जाती है। साधारण शब्द, में हम यह कहा सकते है कि नाद की जाती वाद्यों की बनावट एवं स्वयं-भू स्वरों पर निर्भर करती है। जाती से हमें ध्वनि की प्रकृति अथवा व्यक्तित्व का परिचय प्राप्त होता है। इस प्रकार तारता नाद की प्रति सेकण्ड आवृत्ति पर, तीव्रता कम्प-विस्तार पर तथा जाती स्वरों पर निर्भर करता है।

**नाद का विकास-** नाद का विकास कई प्रकार के साधनों और अभ्यासों के माध्यम से होता है। यहां कुछ महत्वपूर्ण तत्वों का उल्लेख किया गया है जो नाद के विकास को प्रोत्साहित कर सकते हैं-

**1. संगीत अभ्यास-** संगीत के सुरों, तालों और रागों के अभ्यास द्वारा नाद का विकास होता है। एक संगीत गुरु या शिक्षक के मार्गदर्शन में संगीत का सतत अभ्यास करने से नाद की गहराई और गुणवत्ता में सुधार हो सकता है।

**2. ध्यान और प्राणायाम-** नाद के विकास के लिए ध्यान और प्राणायाम महत्वपूर्ण हैं। योग और मेधावी अभ्यासों में नाद शांति और आत्मा के साथ संगीतिक जुड़ाव को प्रोत्साहित करने में मदद कर सकते हैं।

**3. संगीतीय अनुभव-** संगीत के अध्ययन और प्रशंसा के माध्यम से नाद का विकास हो सकता है। संगीतीय कार्यक्रमों, संगीत संघों और कन्सर्टों में शामिल होने द्वारा आप उच्च गुणवत्ता

वाले नाद को सुन सकते हैं और नाद के संगीतिक अनुभव को विस्तारित कर सकते हैं।

'नाद चित्र' एक शब्द है जो संगीत की एक विशेषता को दर्शाता है। यह शब्द भारतीय संगीत परंपरा में प्रयुक्त होता है। नाद चित्र संगीतीय विज्ञान के एक अद्वितीय भाग को दर्शाता है, जिसमें संगीतिक रागों और तालों को वर्णित किया जाता है। यह एक चार्ट या डायग्राम होता है जिसमें संगीत के संकेतों का उपयोग करके संगीतिक राग और ताल की संरचना को प्रदर्शित किया जाता है। नाद चित्र शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इसके माध्यम से छात्र संगीतिक रागों और तालों की समझ और अध्ययन कर सकते हैं।

**संगीत में नाद उत्पन्न करने के माध्यम-** जैसा की हमने पूर्व में वर्णन किया है कि संगीत में उपयोगी नाद दो प्रकार के हैं आहत और अनाहत। अनाहत नाद संगीतोपयोगी नहीं होता क्योंकि यह आम जनसाधारण को सुनाई नहीं देता परंतु अनाहत नाद से ही आहत नाद की उत्पत्ति संभव है। अनाहत से ही आहत नाद संगीत के लिए उपयोगी होता है, आहत नाद को सामान्य जनसाधारण आसानी से सुन सकता है। अनाहत नाद की उपासना ऋषि-मुनि, तथा योगी साधक किया करते थे।

**संगीत में नाद उत्पन्न करने के विभिन्न प्रकार के माध्यम हैं -**

**1. स्वर नाद-** संगीत में स्वर नाद महत्वपूर्ण होते हैं। यह वह नाद है जो एक स्वर का उत्पन्न होने पर सुनाई देता है। संगीत में स्वरों के संगठन और उनके मध्य गति और मेल का आधार यही स्वर नाद होता है। संगीत में स्वरों की सही और स्थिर गति को सुनिश्चित करने के लिए स्वर स्थान नाद (तुणी, सारंग, पंडुरंग) उपयोगी होते हैं। इन नादों का संगीतीय अभिनय और रियाज में महत्वपूर्ण योगदान होता है।

**2. ताल नाद-** ताल नाद संगीत में अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। ये नाद ताल की माप और अंकन में मदद करते हैं। ताल नाद (ताल कस्सी, ताल तुरका, ताल माला) संगीतीय गतिविधियों को संरचित करने के लिए उपयोगी होते हैं। ताल नाद संगीतीय अभिनय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

**3. राग नाद-** राग नाद संगीत में विशेष महत्व रखते हैं। राग नाद संगीतीय स्वरों की व्याख्या, संगठन और मेल की आधार बनाते हैं। ये नाद एक राग की पहचान में महत्वपूर्ण होते हैं।

**4. वाद्य नाद-** वाद्य नाद संगीत में वाद्य यंत्रों द्वारा उत्पन्न होते हैं। ये नाद वाद्य यंत्रों की ध्वनि और बाज़ी की आधार बनाते हैं, जैसे कि तबला, सारंगी, वायोलिन, गिटार, पियानो, और अन्य संगीतीय उपकरणों के नाद।

**संगीत में नाद साधना की उपयोगिता-** संगीत में नाद साधना कई प्रकार से उपयोगी होता है। यहां कुछ महत्वपूर्ण उपयोगों का उल्लेख किया गया है-

**1. मन को शांत करना-** संगीत मन को शांत और स्थिर करने में मदद करता है। नाद साधना में संगीत की ध्वनि में लीन होने से मन की चंचलता कम होती है और ध्यान का अभ्यास सुगमता से होता है।

**2. स्वर का अभ्यास-** संगीत नाद साधना में स्वर का नियमित अभ्यास करने से नाद की गहराई और गुणवत्ता में सुधार होता है। स्वर के सही रूप में गाना और उच्चतर स्तर की रचनात्मकता को विकसित करना संगीत नाद साधना में महत्वपूर्ण है।

**3. भावना को व्यक्त करना-** संगीत के माध्यम से आप अपनी भावनाओं को व्यक्त कर सकते हैं। नाद साधना के दौरान आप संगीत के माध्यम से आनंद, भक्ति, शांति और आत्मा के साथ संबंध जोड़ सकते हैं। इससे मन को शांत, जागृत और अभिवृद्धि के साथ रखने में मदद मिलती है।

**नाद साधना का मानव जीवन पर प्रभाव-** नाद साधना और योग साधना दोनों ही आध्यात्मिक अभ्यासों का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। ये दोनो साधनाओं का लाभ परस्पर साधना तथा नियमित्तता से ही प्राप्त किया जा सकता है। शारीरिक स्वास्थ्य को नाद साधना और योग साधना द्वारा सुधारा जा सकता है। योगासन, प्राणायाम और मुद्राएं शरीर के शक्ति संतुलन को बढ़ाते हैं, मस्तिष्क में स्थिरता लाते हैं और ऊर्जा स्तर को उच्च करते हैं।

नाद में योग का महत्त्व आध्यात्मिक एवं मानसिक सुख और स्वास्थ्य को प्राप्त करने का एक महान तत्त्व है। योग के माध्यम से, हम नाद ध्यान करके मन को चंचलता से मुक्त एकाग्र बना सकते हैं। नाद योग में, हम अपनी श्वास-प्रश्वास और विभिन्न ध्वनियों के माध्यम से मन को वशीभूत करके अनुभव करते हैं। इस विधि से हमारे शरीर, मन और आत्मा का संयोग होता है, जो हमें स्वास्थ्य, सुख और उन्नति की अनुभूति कराता है। नाद साधना द्वारा शरीर के ऊर्जा केंद्रों को जागृत किया जाता है। इन अभ्यासों के प्रभाव से हृदय की स्वस्थता, पाचन तंत्र, शरीर की लचीलापन, और ऊर्जा स्तर में सुधार होता है। नाद साधना और योग साधना करने वालों में एक अलग जोश देखने को मिलता है। उनका चेहरा सूर्य के समान तेज चमकता है। शरीर में अश्व के समान ऊर्जा होती है। नाद तथा योग साधना का आपस में बहुत गहरा संबंध है, इनमे किसी एक मात्र की साधना से दूसरी साधना स्वयं ही उत्पन्न होने लगेगी।

वैदिक परंपरा के अनुसार मोक्ष की प्राप्ति ही मानव जीवन का परम लक्ष्य है ऐसे में नाद साधना मोक्ष की प्राप्ति का एक मार्ग है। नाद साधना, मानव जीवन में विभिन्न रूपों में प्रभावकारी होता है। यहां कुछ मुख्य प्रभाव इस प्रकार हैं -

**1. मानसिक स्वास्थ्य-** नाद साधना मनोविज्ञान और मानसिक स्वास्थ्य के लिए उपयोगी है। संगीत की ध्वनि और मन के लिए मनोहारी होती है और मन को शांति और स्थिरता की अनुभूति प्रदान करती है। यह मानसिक तनाव को कम करने, चिंता को दूर करने और सक्रिय ब्रेन प्रोसेस को संतुलित करने में मदद करती है। दरअसल नाद साधना पर हुए एक शोध से इस बात की जानकारी मिलती है कि चिंता और अवसाद को कम करने में नाद की साधना ,नाद योग साधना कितनी सहायक है। यह शोध कोरोना कल में चिंता और अवसाद की समस्या से ग्रसित लोगों पर किया गया था और यह पाया गया कि मानसिक संतुलन बनाने में यह बहुत उपयोगी रहा।

**2. ध्यान और मन:स्थिति-** नाद साधना ध्यान और मन:स्थिति के लिए एक महान उपकरण है। संगीत के ध्वनि में लीन होने से मन की चंचलता कम होती है और ध्यान का अभ्यास सुगमता से होता है। इससे मन को शांत, जागृत और अभिवृद्धि के साथ रखने में मदद मिलती है।

**2. भावनात्मक संवाद-** नाद संगीत भाषा के रूप में कार्य करता है और मानवीय

भावनाओं को संवादित करने में मदद करता है। संगीत की माध्यम से व्यक्त किए जाने वाले राग और गीत मन को प्रभावित करके खुशी, दु:ख, प्रेम, उत्साह, आत्मीयता, शांति आदि के भावों को जगाते हैं। इसके माध्यम से, संगीत मन की गहराई में जा पहुंचता है और अनुभवों की साझा भाषा बनता है।

**3. नाद साधना से रोग की मुक्ति-** नाद साधना के माध्यम से रोग मुक्ति प्राप्त की जा सकती है, लेकिन यह सभी प्रकार के रोगों के लिए एक मात्र समाधान नहीं है। नाद साधना एक नियमित ईश्वरीय अभ्यास है जो स्वास्थ्य को समर्थ बनाने और रोगों के बढ़ने को रोकने में मदद कर सकती है। दृढ़ इक्षाशक्ति को प्रबल करने में सहायक है। यह कई प्रकार के रोग से मुक्ति पाने में प्रोत्साहित कर सकती है।

**निष्कर्ष-** इस प्रकार हमे ज्ञात होता है कि सृष्टि नाद के आधीन है। नाद ऐसा तत्व है जो सम्पूर्ण संसार के प्रत्येक स्थान पर व्याप्त है। सम्पूर्ण लोक व्यवहार नाद पर आश्रित है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


- संगीत रत्नाकर, पंडित शारंग देव ,सन 1210 से 1247 के मध्य
- नाद बिंदु , डॉ. जोगिन्दर कैरो ,नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया 2017
- नाट्यशास्त्र , भरत मुनि
- अनहद नाद , प्रताप सहगल 1999
- अंडरस्टैंडिंग राग म्यूजिक , संदीप बागची ,मोहन क,परेटिव इंड्रस्टियल एस्टेट नई दिल्ली 110044 इंडिया
- नाद सुनना पड़ता है ,प्रियंका मिश्रा
- Classical music A divine power of yoga, kumud Diwan, shubhi publications
- ई साक्ष्य

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# मीरा स्त्री विमर्श

• खुशबू

**सारांश- अनंत काल से नारी को केवल शोभा और प्रदर्शन का ही पर्याय माना जाता रहा है। जब कभी भी नारी ने इस घेरे से बाहर आने का प्रयास किया है उसे सदैव उपहास और व्यंग का ही पात्र बनना पड़ा है। वेद, पुराण, उपनिषदों आदि ने भी नारी का चित्रण इस प्रकार किया है कि समाज उसे माँ, बहन, बेटी व पत्नी से परे एक स्वतन्त्र व्यक्ति के रूप में नहीं देख पाता। सदियों से रीति-रिवाजों और परम्पराओं में जकड़ी नारी अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिए संघर्षरत रही है। इसी परिप्रेक्ष्य में मध्यकालीन सामाजिक रूढ़ियों और मान्यताओं के बीच आत्मसंघर्ष करती मीरा का व्यक्तित्व और कृतित्व अपने लिए नये विमर्श की माँग करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र भक्तिकाल की सशक्त साधिका व अनन्य कृष्ण भक्त मीराबाई के सामाजिक रूढ़ियों के विरूद्ध स्त्रीवादी दृष्टिकोण को प्रकट करता है व साथ ही भक्तिकालीन संत परम्परा में मीरा के संघर्ष और उनके द्वारा स्त्री मुक्ति तथा स्त्री चेतना के संदर्भ में उनके क्रान्तिकारी कदमों का भी अवलोकन कराता है।**

**मुख्य शब्द - पितृसत्तात्मक व्यवस्था, विद्रोह, महिला संत, स्त्री चेतना, आत्मनिर्णय**

**भूमिका-**

"राणा जी म्हॉने या बदनामी लागे मीठी।
कोई निन्दो करे बिन्दो, मैं चलूँगी चाल अपूठी।
साँकड़ली सरसे्याँ जन मिलिया क्यूँ कर फिरूँ अपूठी।
सत सँगति मा ग्यान सुणैद्दी, दुरजन लोगाँ ने बीठी।
मीराँ रो प्रभु गिरधर नागर, दुसरजन जलो जा अंगीठी।"[1]

उक्त पंक्तियों द्वारा पुरूष-वर्चस्ववादी पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरूद्ध स्त्री स्वाधीनता का एक समूचा दर्शन कराने वाली मध्यकालीन महिला संत व विश्व विख्यात भक्त शिरोमणि मीराबाई सम्पूर्ण भारतीय नारी समाज का गौरव है। मीराबाई की विचारधारा आधुनिक स्त्री से ज्यादा आधुनिक और क्रान्तिकारी है न केवल विचार बल्कि व्यवहार में भी मीरा समाज के प्रत्येक बंधन तोड़कर बाहर आती हैं तो कई बंधन और टूटतें नजर आते हैं जिनमें पहला अन्तःपुर का, दूसरा घराने का, तीसरा वैभव का, चौथा समाज का, पाँचवा देश का, छठा काल का और सातवाँ विवाह का। मीरा कृष्ण भक्ति साहित्य की प्रतिनिधि है। उनके काव्य से स्त्री काव्य की तीखी सुगन्ध आती है जो उन्हें

• **असिस्टेन्ट प्रोफेसर (तबला), जुहारी देवी गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, कानपुर**

भक्तिकाल में अन्य कवियों से अलग करती है।

**मुख्य विषय-** हाथ में तम्बूरा दिल में प्रेम और कंठ में गीत लिए मीरा चलती फिरती आग की लपट थी। मध्ययुगीन समाज में स्त्री की भूमिकाएँ आज की स्त्री से भिन्न थी। उसके लिए उड़ान भरने के लिए अनंत आकाश नहीं था। तत्कालीन समाज में किसी स्त्री को भक्ति भी सहज, सुलभ न थी। क्योंकि स्त्री को भक्त के रूप में स्वीकार करने के लिए समाज में कोई भी तैयार नहीं था। मीरा की राह काँटों से भरी हुई सबसे कठोर डगर थी। जहाँ मीरा ही नहीं बल्कि उस युग की सभी स्त्रियों के लिए उस राह पर चलना कठिन था। मध्यकालीन समाज का पूरा ढाँचा पितृसत्तात्मक है, जिसे मीरा तोड़ देना चाहती है। वे कहती हैं-

"माई साँवरे रंग राची।
साज सिंगार बाँध पग घूँघर लोकलाज तज नाँची।
गया कुमत लयाँ साधाँ संगत, "याम प्रीत जग साँची।"[2]

उस युग में स्त्री के लिए ऐसा संघर्ष अत्यन्त कठिन था। मीरा विधवा होने के बाद भी तत्कालीन रूढियों के अनुकूल सती नहीं हुई। वह लगातार लाँछन, अपमान, और यातना सहती हुई कृष्ण भक्त बनी रहीं। उन्होंने निर्भय होकर भ्रामक युगधर्म और लोकभय का सामना करते हुए स्पष्ट कहा-

"भजन करस्याँ सती न होस्यां,
मन मोहयो धण नामी।"

स्त्री के बारे में मीरा का दृ'टिकोण बाकी भक्त कवियों से सर्वथा भिन्न है। उनकी कविता में एक ओर सामंती समाज में स्त्री की पराधीनता और यातना का बोध है तो दूसरी ओर उस व्यवस्था के बंधनों का पूरी तरह निषेध और उससे स्वतंत्रता के दीवानगी की हद तक संघर्ष भी है। अत: मीरा का जीवन और काव्य उस काल के अन्य भक्त कवियों की स्त्री सम्बन्धी मान्यताओं का प्रतिकार है और प्रत्युत्तर भी। उनके स्त्री विमर्श को निम्नलिखित बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है:-

**1.सती प्रथा का विरोध-** मीरा ने उस समय प्रचलित पति के साथ सती होने की प्रथा का विरोध किया। तत्कालीन व्यवस्था में सती प्रथा की अमानवीयता को महसूस न करके इसे स्त्री के त्याग व बलिदान से जोड़ा जाता था। मीरा ने पति की मृत्यु के बाद इसी क्रूर व्यवस्था को अपनाने से मना कर दिया। वे विधवा होने के बाद भी कुल की रीति नहीं अपनाती-

"गिरधर गास्याँ सती न होस्यां।
मन मोह्यो धन नामी।।"[3]

**2.वैभव व ऐश्वर्य का त्याग-** अलंकरण, वैभव, साज-सज्जा को साधारण स्त्री आभू'ाण मानकर जीवन भर इन्हें संजोती है। परन्तु मीराबाई इन सबको बाह्य आडम्बर मानती हैं। उनका मत है कि नारी का असली गहना तो उसके हृदय में बसा प्रेम है। जब स्त्री अपने हृदयतल में किसी को स्थान देकर उसे सच्चा प्रेम करती है तो वह वास्तव में सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बन जाती है। वे कहती हैं-

"हार सिंगार सभी ल्यो अपना, चूड़ा कर की पटकी।

मेरा सुहाग अब मोकूँ दरसा और न जाने घटकी।
महल किला राणा मोहि न चाहिए, सारी रेशम पटकी।
हुई दीवानी मीरा डोलै, केस लटा सब छटकी।"[4]

**3. सजसत्ता का बहिष्कार व पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विरोध-** घरेलू हिंसा की शिकार, तिरस्कृत और उत्पीड़ित मीरा राजसत्ता, पितृसत्ता और लोकलाज को पानी की तरह बहा देने की शक्ति रखती हैं-

"राणाजी थे जहर दियो म्हे जाणी।
जैसे कचन दहत अगनि में, निकसत बाराबाणी।
लोकलाज कुल काण जगत की, दूइ बहाय जस पाणी।
अपणो घर का परदा करले, मैं अबला बौराणी।
तरकस तीर लग्यो मेरे हियरे, गरक गयो सनकाणी।"[5]

मीरा का विद्रोह उन स्थितियें की पड़ताल करने की नैतिक जवाबदेही है जो अबला कही जाने वाली निरीह पराश्रित स्त्री को बौराने और आक्रामक होने को विवश करती है। बार-बार उन पूर्वाग्रहों और जड़ताओं को छीन लेने की आकांक्षा करता है जो स्त्री की आत्मविश्वास की नैसर्गिक इच्छा को लोकलाज के उल्लंघन से जोड़ता है। उस कुत्सित मानसिकता को तुरन्त निषिद्ध कर देने की मांग करता है जो पुरूष वर्चस्ववादी व्यवस्था की हर अमानुशिकता को अनुशासन और नियमपालन का पर्याय बना देती है। मीरा ने अपने विरोधियों को सीधी चुनौती देते हुए कहा हैं-

"सीसोद्यो रूठ्यो तो म्हाँरो कोई करलेसी।
म्हें तो गुण गोविन्द का गास्याँ हों माई।
हरि रूठ् कुम्हलायाँ, हो भाई
लोकलाज की काणा न मानूँ
निरभै निसाण घुरास्याँ हो माई।"[6]

मीरा का उपर्युक्त स्वर निश्चय ही पुरूष वर्चस्ववादी व्यवस्था के प्रति खुला विद्रोह है और पितृसत्ता के निरंकुश नियन्त्रण के विरूद्ध आत्मनिर्णय के अधिकार का प्रयोग है।

**4.स्त्री की वैचारिक स्वतन्त्रता का समर्थन-** मीरा आरोपित विवाह सम्बन्ध को अस्वीकार कर स्त्री द्वारा स्वयं की इच्छानुसार पति रूप में पुरूष का वरण करने की पक्षधर हैं। विवाह संस्था स्त्री की देह पर की जाने वाली द्विपक्षीय संधि नहीं और न ही प्रतिकार की अमानुशिकता। विवाह सम्बन्ध देह का कामुक खेल या कुलवृद्धि का शुष्क दायित्व नहीं बल्कि जीवन सहचर पाने की अनुराग भरी प्रक्रिया है। अतः सम्बन्ध जोड़ने में मीरा स्त्री की पूर्ण स्वतन्त्रता की पक्षधर रहीं है। उनका काव्य स्त्री की वैचारिक स्वतन्त्रता पर बल देता है। वे कहती हैं-

"माई मैं तो लियो रमैया मोल।
कोई कहै छानी, कोई कहै चोरी लियो है बजता ढ़ोल।
कोई कहै कारो, कोई कहै गोरो, लिया है अंखी खोंल।
कोई कहै हल्का कोई कहै महँगा, लिया है तराजू तोल।

तन का गहना मैं सब कुछ दीन्हा, दियो है बाजूबन्द खोल।
मीरा के प्रभु गिरधरनागर, पूरन जनम का कोल।"[7]

इस तरह मीरा जिस पुरूष का वरण करती है तो यह पहली नज़र का अल्हड़ प्रेम नहीं अपितु वह हीरे जैसे अपने साँवरिया को पूरा, बराबर अपने घूँघट के पट खोलकर तोलती हैं। इस प्रकार वे अपनी वरण की स्वतन्त्रता के अधिकार का प्रयोग करती है।

**5.जातिगत रूढ़ियों का खण्डन-** भक्तिमार्ग में गुरु का जो महत्व है वही महत्व मीरा भी अपने गुरु को देती हैं। यहाँ भी वह अपनी राह स्वयं चुनती हैं। वे समाज की परवाह किये बिना संत रविदास को अपना गुरु बनाती हैं जो कि जाति से चमार थे। मीरा ने अपने गीतों में गुरु रविदास का कई बार बड़े गर्व के साथ उल्लेख किया है–

"मीरा ने गुरु मिल्या है रविदास,
सुरंगा (स्वर्ग) से आयी पालकी।"

जब मीरा संत रविदास को गुरु बनने का आग्रह करती है तो वे अपनी जाति का वास्ता देते हुए कहते हैं–

"मीराबाई म्हं तो जात से चमार।
तूं तो बड़ा घरां की डाबड़ी एजी।।"
तो इस पर मीरा कहती है–
"गुरु जी जाति–पांति से कारण कोय नी,
बाई ने गुरु मिल्यो को रविदास।"

**उपसंहार-** निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि मीरा हिन्दी काव्य जगत में स्त्री विवर्शकार के रूप में सर्वप्रथम पहचानी जाती है। एक भक्त के रूप में तत्कालीन समाज के पुरूष वर्चस्ववादी पितृ सत्ता के उत्पीड़न, अपमान, घरेलू हिंसा को झेलते हुए भी वे अपने निर्णय में दृढ़, अचल और अडोल रही। यह श्री कृष्ण प्रेम की ही शक्ति थी जो उन्हें संसार के भौतिक सुखों से विरक्त करके अति इन्द्रिय सुख में सराबोर करती हैं। संसार का कोई प्रलोभन, राजसत्ता उन्हें अपने मार्ग से विचलित नहीं कर पाया। उन्होंने जिस स्वतंत्रता से निर्णय लिया उसे जीवन पर्यन्त निभाया। मीरा का स्वातंत्रय चेतना, खुलकर विद्रोह करने की भावना और साहस हमें आज भी प्रभावित करता है। मीरा मध्यकाल में स्त्री की अस्मिता को प्रमाणित करने वाली यशस्वी स्त्री के रूप में प्रतिष्ठित व वन्दनीय है। पं. गिरिमोहन गुरु नगर श्री मीरा की प्रशस्ति में लिखते हैं–

"नारियों की शक्ति की पहचान है मीरा।
पीढ़ियों के लिए गौरव गान है मीरा।
भाव की भीनी सुरभि से युक्त है–
भक्ति कानन का सुमन अल्लान है मीरा।"

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


1. मीराबाई और उनकी पदावली, प्रो. देशराज सिंह भाटी, पृष्ठ सं.–227
2. वही, पृष्ठ सं.–207
3. भक्त कवियित्री: मीरा, हिन्दी पॉकेट बुक्स, दिल्ली, संस्करण 2002, सुदर्शन चोपड़ा

(सम्पादक), पृष्ठ सं.–112
4. मीराबाई और उनकी पदावली, प्रो. देशराज सिंह भाटी, पृष्ठ सं.–163
5. वही, पृष्ठ सं.–234
6. वही, पृष्ठ सं.–230
7. वही, पृष्ठ सं.– 170–171

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April - Sept. 2023

# ब्रह्मण्ड पुराण में वर्णित धार्मिक मान्यतायें

• प्रत्यूष वत्सला द्विवेदी

**सारांश- भारतीय वाङ्मय में वैदिक वाङ्मय के पश्चात् पुराणों का स्थान आता है। प्राचीन साहित्य में पुराणों का एक विशेष स्थान है। पुराणों में प्रायः सर्वत्र भारतीय संस्कृति प्रतिबिम्बित हुई। वास्तव में पुराणों की रचना का मूल उद्देश्य धर्म और अध्यात्म रहा है। धार्मिक दृष्टि से पुराणों का अत्यधिक महत्व है। ये सनातन धर्म के प्राण हैं। सनातन धर्म इनकों वेदों के तुल्य आप्त और प्रामाणिक मानता है। वायु पुराण के अनुसार पुराणों में बहुत से धर्मो का निरूपण हुआ है। प्राचीन भारत में सभी लोग धर्म में तत्पर थे। धर्म में लगन-श्रृद्धा और निष्ठा भाव होने के कारण सभी लोगों ने धार्मिक उन्नति की। व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्युपर्यन्त धार्मिक कार्यो से घिरा रहता है। धर्म के द्वारा मनुष्य को सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत किया जा सकता है। महाभारत में कहा गया है-**

**धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।**
**यदिहास्ति तदन्यत्र। यन्नेहास्ति न तत् क्वचित।**

**मुख्य शब्द - अभ्युदय, परिध्वंस, भृत्यगण, द्विजगण, समावृत, दुर्दान्त**

प्राचीन काल में ही धार्मिक क्षेत्र में भारत की पर्याप्त उन्नति हुई। भारत में वेदों से ही धार्मिक प्रवृत्ति का प्रारम्भ हुआ। भारतीय धर्म और संस्कृति और मूलाधार वेद है। वैदिक ज्ञान और इसके अनुसार आचरण के लिये निरन्तर प्रेरणा दी गई है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार धर्म उसे कहते हैं जिसमें अभ्युदय व निःश्रेयस् की सिद्धि होती है।

यतोभ्युदयनिः श्रेयससिद्धी स धर्मः।।

भारतीय जीवन मे धर्म का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि भारतीय जीवन धर्ममय जीवन है। मनुष्य बिना धर्माचरण किये हुए मोक्ष को प्राप्त नहीं कर सकता। मोक्ष प्राप्ति के लिये मनुष्य कर्म में निहित कार्यों, अनु'ठानों और मर्यादाओं का पालन करता है। धर्म के द्वारा नियन्त्रित अर्थ और काम कल्याण कारक और प्रशंसनीय माने गये हैं। यदि अर्थ और काम दोनों पर धर्म का अंकुश न हो तो वे निरंकुश हो जाते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय मानव के जीवन में धर्म का अत्यधिक महत्त्व है।

पुराणों में धर्म को विशेष महत्व दिया गया है। भारतीय संस्कृति धर्म से अनुप्रासित है और पुराण उसके प्रतिपादक है। अतः पुराणों में धर्म का मुख्य रूप से वर्णन सर्वथा स्वाभाविक है। ब्रह्मण्ड पुराण के प्रारम्भ में ही धर्म का सत् पुरुषों के द्वारा सेवन

• एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, डी.बी.एस. कालेज, कानपुर

करने योग्य बतलाया गया है।

ज्ञानमप्रतिमं तस्य वैराग्यं च जगत्पतेः।
ऐश्वर्यंचैव धर्मश्च सद्‌भिः सेव्यं चतुष्टयम्।।[1]

पौराणिक संस्कृति ऋषि प्रधान है और ऋषि सुधार्मिक है।[2] धर्म का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है जो मानव मात्र के अभ्युदय और कल्याण के लिये है। पुराणों के माध्यम से सर्वप्रथम ब्रह्म ने धर्मशास्त्र का श्रवण किया था और उनके मुख से धर्मशास्त्र और उसके तत्व प्रकाशित हुए थे –

प्रथमं सर्वशास्त्राणां पुराणं ब्राह्मणा श्रुतम्।
अनन्तरं च वक्तृेभ्यो वेदास्तस्य विनिः सृताः।।
अंगानि धर्मशास्त्रं च व्रतापि नियमास्तथा।[3]

नैमिष क्षेत्र धर्माचार के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ ऋषियों ने धर्म में स्थित होकर विशेष साधना की थी। सम्पूर्ण वसुन्धरा में भारत देश श्रेष्ठ है क्योंकि यह देश धर्म पालन में अग्रणी है।[4] ब्रह्मण्ड पुराण में त्रेता युग में धर्म की विशेष रूप से प्रतिपत्ति दृष्टिगोचर होती है।

अंतरिक्षे समुद्रे च पाताले पर्वतेषु च।
इज्या दानं तपः सत्यं त्रेतायां धर्म उच्यते।।
तदा प्रवर्तते धर्मो वर्णाश्रम विभागशः।
मर्यादास्थापनार्थं च दण्डनीतिः प्रवर्तते।।[5]

धर्म के विषय में कहा गया है कि सत्‌युग में जो धर्म है वह त्रेता युग में प्रवृत्त होता है। द्वापर युग मे वह धर्म व्याकुल होने लगता है और कलियुग में विनष्ट हो जाता है –

आद्ये कृते यो धर्मोऽस्ति स त्रेतायां प्रवर्तते।
द्वापरे व्याकुली भूत्वा प्रणश्यति कलौ युगे।।
वर्णानां विपरिध्वंसः संकीर्यन्ते तथाश्रमाः।
द्वैविध्यं प्रतिपद्येते युगे तस्मिच्छु तिस्मृतिः।[6]

धर्म के विनष्ट होने पर सभी वर्णों का परिध्वंस हो जाता है। आश्रम व्यवस्था विकृत हो जाती है। कलियुग में अनेक विद्वान् श्रुतियों और स्मृतियों के भिन्न अर्थ करने लगते हैं। अतएव धर्म प्रभावित होने लगता है। धार्मिकता के न रहने से मित्र मनुष्यों की मति का भेद हो जाया करता है। इन सबकी आपस में किसी के साथ सहानुभूति नहीं होती है। सबकी दृष्टि में विभ्रम हो जाया करता है। यह धर्म है अथवा यह अधर्म है – इसका कोई भी निश्चय नहीं हुआ करता है। कारणों के विकल्प होने से और कार्यों के निश्चय नहीं होने से धर्माधर्म का कोई निश्चय नहीं हुआ करता है। उन मनुष्यों की मति के विभेद होने से उनकी दृष्टियों का भी विभ्रम हो जाता है।

कलियुग में धर्म के विध्वंस से विविध प्रकार के उप्रदव होने लगते हैं। वृष्टि का अभाव, व्याधि, उपद्रव, अकाल मृत्यु आदि होने लगते हैं। कायिक, वाचिक और मानसिक सभी प्रकार के दुःख होने लगते हैं। कलियुग में धर्म के प्रवाहित होने से हिंसा, असूया, माया और वध की भावनायें उत्पन्न हो जाती हैं। स्वार्थी मनुष्य अधर्म को ही धर्म मानने लगता है। अतएव कलियुग में धर्म के अभाव में रोग प्रकृष्ट रूप से मारक होता है

और क्षुधा तथा भय होते हैं। कलियुग में वृष्टि के समय पर न होने से घोर भय होता है तथा देशों का विपर्यय हो जाता है। कलियुग में लोगों में स्मृति का कोई भी प्रमाण नहीं माना जाता है। कोई तो माता के गर्भ में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, कोई युवावस्था में ही मर जाया करता है, कोई-कोई वृद्ध होकर मर जाते हैं। इस कलियुग में प्रजाजन कुमारावस्था में ही परलोक मे ले जाया करते हैं।[7]

तेषां विपर्ययोत्पन्ना भवन्ति च कलौ पुनः।
अवृष्टिर्मरणं चैव तथैव व्याध्युपद्रवाः।।
वाङ्मनः कर्म जैर्दुः खैर्निर्वेदो जायते पुनः।
निर्वेदाज्जायते तेषां दुःख मोक्ष विचारणा।।[8]

चौर्य कर्म करने वाले पुरुष राजाओं के समान आचरण वाले हैं और जो पार्थिव हैं वे चोरों के समान आचरण करने वाले हैं। इस युग के अन्त समय के उपस्थित होने पर भृत्यगण प्राणों का भरण करने वाले हैं। नारियाँ शील से शून्य मिथ्याचार वाली तथा मदिरा और मांस से प्रेम, चौर्य कर्म करने वाली होती हैं। इस युग के अन्त में सभी स्त्रियाँ माया रचने वाली होती हैं।

पुरुष भी एक ही पत्नी रखने के व्रत वाले नहीं होते हैं। युग के अन्त समय में सर्वत्र ऐसा ही दिखलाई देता है। सब जगह अन्य पशुओं की प्रबलता होती है और गौओं के कुल का क्षय होता है। उस युग के क्षय में साधु जनों की विशेष रूप से निवृत्ति होती है। उस समय में अपने आपको बहुत ऊँचा उठाना ही धर्म है और दान के मूल वाला धर्म परम दुर्लभ होता है। ब्रह्चर्य, गृहस्थ-वानप्रस्थ और संन्यास- इन चारों आश्रमों की शिथिलता वाला धर्म ही सब जगह चलता है। उस समय में भूमि भी अल्प फल देने वाली होती है और कहीं पर महान फल वाली होती है। राजा केवल अपनी बलि का भोग करने वाले होते हैं प्रजा की रक्षा करने वाले नहीं होंगे और युग के अन्त में ये नृपगण ही रक्षा करने में तत्पर रहा करते हैं।

राजा लोग संरक्षण नहीं करने वाले और विद्वतगण शूद्रों से उपजीविका चलाने वाले हो जाते हैं और युग के अन्त में श्रेष्ठ द्विजगण भी ''ूद्रों को अभिवादन वाले होते हैं। इस युगान्त के समुपस्थित होने पर सभी प्रमदायें केशों के शूल वाली हैं। श्रेष्ठ द्विज भी अपनी तपस्या और यज्ञों के फल को द्रव्य लेकर बेच देने वाले होंगे। इस कलियुग में काषाय वस्त्रों के धारण करने वाले बहुत से यतिगण हो जाते हैं। इस युग को क्षय युग कहते हैं।

इस आधार युग में सभी वर्णो के मानव वाणिज्य व्यवसाय करने वाले होते हैं। मनुष्य कूटमानों के द्वारा अधिक कुशील चर्या-पाखण्ड, ईर्ष्या और अंधों से समावृत होते हैं। पुरुष के रूप से युक्त मनुष्य प्रायः अत्याचारकर्ता, क्रूर वाक्य बोलने वाला कुटिल-निन्दक और किए हुए का उपकार का प्रत्युपकार न करने वाला होगा।

युगानुरूप धर्म की स्थिति बतलाई गई है। जो धर्म त्रेता युग में एक वर्ष में बलवान और पूर्ण होता है, वही धर्म द्वापर में एक मास में सांग सफल हो जाता है और वही धर्म इस कलियुग में अपनी शक्ति के अनुसार समाचरित होने पर एक ही दिन में बुद्धिमान् मनुष्य प्राप्त कर लेता है -

तदा चाल्पेन कालेन सिद्धि गच्छति मानवः।
धन्याः धर्म चरिष्यति युगान्ते द्विजसत्तमाः।।
श्रुतिस्मृत्युदितं धर्म ये चरंत्यनसूयकाः।
त्रेतायामाब्दिको धर्मो द्वापरे मासिकः स्मृतः।।
यथाशक्ति चरन्प्राज्ञस्तदह्ना प्राप्नुयात्कलौ।[9]

ब्रह्मण्ड पुराण में धर्म को वर्णों और आचारों से युक्त माना गया है। कलियुग के मनुष्यों का सप्तर्षियों के द्वारा प्रदर्शित श्रौत और स्मार्तधर्म है –

कालिजैः सह ते संति निर्विशेषास्तदाभवन्।
तेषां स्पतर्षयो धर्मं कथयंतीतरेषु च।।
वर्णाश्रमाचार युक्तः श्रौतः स्मार्न्तो द्विधा तु सः।।
तत्स्तेषु क्रियावत्सु वर्तते वै प्रजाः कृते।
श्रौतस्मार्त्ते कृतानां च धर्मे सप्तर्षिदर्शिते।।[10]

इस प्रकार ब्रह्मण्ड पुराण में मानव समाज के लिए धर्म के पालन से लाभ और धर्म के न पालन से हानि को बतलाया गया है। व्रत, उपवास, जप, तप, होम, स्नान, तर्पण, अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्चर्य, अपरिग्रह, शौच, संतोष, स्वाध्याय, प्रणधान आदि धर्म के अंग के रूप में प्रतिपादित हुये हैं। ब्राह्णों का क्षमा परम धर्म है और क्षत्रियों का धर्म दुष्टों को दण्ड देना है –

क्षमावत्त्वं ब्राह्णाणानां दण्डः क्षत्रस्य पार्थिव।[11]

ब्रह्मण्ड पुराण में धार्मिक और धर्मात्मा, पुरुषों का वर्णन हुआ है। साथ ही इसमें अधार्मिक दुष्ट दैत्यों का भी वर्णन हुआ है। धार्मिक, ऋषि, सत्पुरुष, लोक कल्याण में तत्पर रहे हैं और इस मार्ग से उन्हें मोक्ष की प्राप्ति हुयी है। वहीं अधार्मिक भण्डासुर जैसे दुर्दान्त दानव पराभव को प्राप्त करते हैं और धर्म का पालन न करने से उनका पतन हो जाता है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/1/4
2. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/1/15
3. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/1/40-41
4. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/8
5. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/9/38-39
6. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/10/5-6
7. ब्रह्मण्ड पुराण – पृष्ठ संख्या-109
8. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/10/19-20
9. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/10/71-73
10. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/10/106-108
11. ब्रह्मण्ड पुराण – 1/18/56

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# नैतिकता और खेल भागीदारी

• ममता

**सारांश- अच्छी नैतिकता किसी भी पेशे की मूलभूत आवश्यकता है, नैतिकता से तात्पर्य मानवीय आचरण से है जो सही और गलत के बीच निर्णय लेता है। नैतिक समाज द्वारा स्वीकृत व्यक्तिगत व्यवहार के नियम है। नैतिकता को 'आचार संहिता' के रूप में जाना जाता है। हमारे व्यक्तिगत मूल्य सकारात्मक व्यवहार और सकारात्मक दृष्टिकोण के साथ हमारी नैतिकता की ताकत में योगदान करते हैं। शिक्षा का एक व्यक्ति को न केवल शिक्षा में, बलिक मानसिक और नैतिक क्षेत्र में भी आगे बढ़ने में सक्षम बनाती है। नैतिकता चरित्र का अध्ययन है। नैतिकता किसी व्यक्ति के उद्देश्यों, इरादों और कार्यों से सम्बन्धित है जैसे कि उचित या अनुचित, अच्छा या बुरा, खेल में सामाजिक और नैतिक दो अलग-अलग प्रकार के चरित्र मूल्य है जहाँ सामाजिक चरित्र मूल्यों में वफादारी, समर्पण, बलिदान, टीम वर्क और अच्छी नागरिकता शामिल है, जबकि नैतिक मूल्यों में ईमानदारी, निष्पक्षता, निष्पक्ष खेल शामिल है। न्याय और जिम्मेदारी खेल का मैदान एक खिलाड़ी को ईमानदारी सीखने के कई अवसर प्रदान करता है। खेल के दौरान विभिन्न परिस्थितियों में सत्यनिष्ठा और खेल के नियमों का पालन करना चाहिए। ऐथलेक्टिस जैसी प्रतिस्पर्धा में अधिक नैतिक दृष्टिकोण के साथ अधिक भावना है। खेल भावना मॉडल के अन्तर्गत या तहत स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को एक साधन के रूप में देखा जाता है। खिलाड़ियों में व्यक्तिगत सम्मान सदगुण और चरित्र का विकास करना है। यह प्रतिस्पर्धियों और समाज के बीच सम्मान और विश्वास के समुदाय में योगदान देता है। खेल कौशल में लक्ष्य केवल जीतना नहीं है, बल्कि अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास करके सम्मान के साथ जीत प्राप्त करना और लोगों के हृदय में स्थान प्राप्त करना है। खेल के दौरान विभिन्न परिस्थितियों में सत्यनिष्ठा और नैतिक व्यवहार और मानवीय का सृजन करना चाहिए। प्रत्येक खिलाड़ी को नशीली दवाओं के प्रयोग के प्रति बहुत सावधान रहना चाहिए और खेल के नियमों का पालन करना चाहिए।**

**मुख्य शब्द- शारीरिक शिक्षा एवं खेल, नैतिकता, चरित्र, खेल प्रतिस्पर्धा, भागीदारी, खेल आयोजन, खेल नियमों का पालन**

**प्रस्तावना-** दर्शनशास्त्र के अन्तर्गत उचित और अनुचित मानवीय कार्यों से संबंधित

• एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, शारीरिक शिक्षा विभाग, इस्माईल नेशनल महिला महाविद्यालय, मेरठ

क्योंकि फुटबाल का खेल किसी एथलीट की फ्लॉप होने की क्षमता को मापने के लिए नहीं बनाया गया है। झूठ किसी अधिकारी को गलत काल करने के लिए जानबूझकर धोखा देने का एक तरीका है, जो केवल कार्य करने वाले की विश्वसनीयता को नुकसान पहुँचाता है। अन्ततः खेल की अखंडता को कमजोर करता है।

**जिम्मेदारी-** अच्छा खिलाड़ी बनने के लिए खिलाड़ियों और प्रशिक्षकों को अपनी जिम्मेदारी लेनी होगी। अपने प्रदर्शन और साथ ही मैदान पर उनके कार्य अर्थात् व्यवहार, कौशल्य प्रदर्शन और मानवीय मूल्यों का सृजन करने की इसमें उनकी भावनाएँ शामिल है कई बार एथलीट (खिलाड़ी) और खिलाड़ी बहाने बनाते है जैसे उनकी टीम क्यों हार गयी या व्यक्तिगत स्कोर क्यों हासिल नहीं बनाया इससे भी अधिक है स्थानान्तरण को दोषी ठहराना। इसके अलावा सम्मानजनक बात यह है कि खेल के केवल उन पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करें जिन्हें आप नियंत्रित कर सकते हैं। अपना प्रदर्शन और खुद से प्रश्न करें कि आप कहाँ-कहाँ बेहतर हो सकते थे। जिम्मेदारी के लिए ये नितांत आवश्यक है कि खिलाड़ी और कोच अपने खेल को नियंत्रित करने तथा नियमों और विनियमों के बारे में बेहतर स्थापित करें।

जिम्मेदारी यह माँग करती है कि खिलाड़ी और कोच मैदान के साथ-साथ मैदान के बाहर भी सम्मानजनक तरीकों से आचरण करें।

**आदर-** सभी एथलीट खिलाड़ियों को टीम के साथियों, विरोधियों, कोचो और अधिकारियों के प्रति सम्मान दिखाना चाहिए। सभी कोचो को अपने खिलाड़ियों विरोधियों और अधिकारियों के प्रति सम्मान दिखाना चाहिए।

सभी प्रशंसकों, विशेष रूप से माता-पिता को अन्य प्रशंसकों के साथ-साथ दोनों टीमों के प्रति सम्मान दिखाना चाहिए। खेल अधिकारियों, खेल कौशल्य के मॉडल इस विचार बनाये गये है कि खेल चारित्रिक विकास को प्रदर्शित और प्रोत्साहित करता है। खेल व्यापक रूप से समुदाय को नैतिक चरित्र को प्रभावित करता है, हम में से प्रत्येक खेल में प्रतिभागिता करता है इसका प्रभाव हमारे व्यक्तिगत नैतिक व्यवहार पर पड़ सकता है।

प्रतियोगिता में खेल समाज के लोगों व खेलों के अन्तर्गत व्यापक नैतिकता के लिए तर्क देते हैं। इस दृष्टिकोण का मानना है कि खेल और प्रतिस्पर्धा वास्तविक जीवन में अलग है, और एक ऐसे क्षेत्र पर कब्जा करते है जहाँ नैतिकता और नैतिक संहिता लागू नहीं होती हैं। इसके बजाए कुछ लोग तर्क देते है कि खेल और हमारे मौलिक जीवन के लिए एक निर्गम के रूप में कार्य करता है।

आक्रामकता और प्रतिद्वंदी पर विजय पाने के माध्यम से प्राप्त मान्यता और सम्मान की भावना का स्वार्थ आवश्यकता है। इस दृष्टिकोण में आक्रामकता और जीत ही एकमात्र गुण है उदाहरण के लिए एक फुटबॉल खिलाडी को मैदान पर अपशब्द और बुरा बताया जा सकता है, लेकिन दयालु और सौम्य अपनी दैनिक जीवन की जिंदगी में नहीं। मैदान पर उसका हिंसक स्वभाव आचरण गलत नहीं है। एक खिलाड़ी जब तक खेल, खेल रहा होता है तो वह एक अनैतिक वास्तविकता का हिस्सा होता है जो केवल जीतने के सिद्धान्त से तय होता है। खेल के प्रति एक नैतिक दृष्टिकोण के इस अभद्र

अनुशासन है। नैतिकता मानव जीवन की आवश्यकता है यह दिशा निर्देशों को तय करने का हमारा साधन है। इसके बिना हमारे कार्य यादृच्छिक और लक्ष्यहीन होंगे। किसी लक्ष्य की ओर काम करने का कोई और तरीका (खोज) नहीं है क्योंकि असीमित संख्या में लक्ष्यों के बीच चयन करने का कोई तरीका नहीं होगा। नैतिक मानक के साथ भी हम सफलता की संभावना वाले अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असमर्थ हो सकते है जिस सीमा तक तर्कसंगत नैतिक मानक अपनाये जाते है। हम अपने सबसे महत्वपूर्ण मूल्यों को पूरा करने के लिए अपने लक्ष्यों और कार्यों को सही ढ़ंग से व्यवस्थित करने में सक्षम होते हैं। हमारी नैतिकता में कोई भी दोष हमारे प्रयासों में सफल होने की क्षमता को कम करता है। नैतिकता की उचित नींव के लिए मूल्यों के एक मानक की आवश्यकता होती है जिसमें सभी लक्ष्यों और कार्यों की तुलना की जा सके। यह मानक हमारा अपना जीवन है, और वह खुशी है जो उन्हें जीने योग्य बनाती है। यह हमारे मूल्यों का अन्तिम मानक है, वह लक्ष्य जिसमें अनैतिक लोगों को हमेशा लक्ष्य रखना चाहिए। यह मनुष्य के स्वभाव की जांच और उसकी विशिष्ट आवश्यकताओं को पहचानने से प्राप्त होता है। नैतिकता की एक प्रणाली में न केवल आपातकालीन स्थितियाँ शामिल होनी चाहिए बल्कि हमारे द्वारा प्रतिदिन चुने जाने वाले विकल्प।

**खेल में निष्पक्षता-** खेल में निष्पक्षता के नियमों के साथ खेलने से कहीं अधिक परिभाषित किया गया है। इसमें मित्रता, दूसरों के प्रति सम्मान और हमेशा अच्छी भावना से खेलने की अवधारणा शामिल है। निष्पक्ष खेल को सोचने के कथन के रूप में परिभाषित किया गया है, न कि केवल व्यवहार करने के एक तरीके के रूप में। इसमें धोखाधड़ी भावना, डोपिंग, हिंसा (शारीरिक और मौखिक दोनों) बच्चों, युवाओं और महिलाओं के यौन उत्पीड़न, दुर्व्यवहार, शोषण, असमान अवसर, अत्यधिक व्यावसायीकरण और भ्रष्टाचार के उन्मूलन से संबंधित मुद्दे शामिल है।

खेल में निष्पक्षता एक सकारात्मक अवधारणा है खेल एक सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधि है, जो निष्पक्ष रूप से अभ्यास करने पर समाज और राष्ट्रों के बीच मित्रता को समृद्ध करती है। खेल को एक व्यक्तिगत गतिविधि के रूप में भी मान्यता प्राप्त है, जो निष्पक्ष रूप से खेला जाता है। जो आत्मज्ञान, आत्म अभिव्यक्ति और संतुष्टि का अवसर प्रदान करता है। व्यक्तिगत उपलब्धि, कौशल अधिग्रहण और प्रदर्शन क्षमता, सामाजिक सम्पर्क, आनंद, अच्छा स्वास्थ्य और आनंद को खेल प्रतियोगिताएँ बढ़ावा देता है। स्वेच्छा से काम करने वाले क्लबों और नेताओं की विस्तृत श्रृंखला के साथ समाज में भागीदारी और जिम्मेदारी इसके अलावा कुछ गतिविधियों में जिम्मेदारी को बढ़ावा देने में यह मदद मिल सकती है और समाज के संवेदनशील वातावरण को अच्छा बनाता है।

**अखण्डता-** निष्पक्षता के समान इसमें कोई भी एथलीट जो किसी कौशल्य के माध्यम से अपने प्रतिद्वंदी पर बढ़त हासिल करना चाहता है, जिसे खेल में परीक्षण करने के लिए डिजाइन नहीं किया गया है, वह व्यक्तिगत ईमानदारी की कमी को और खेल की अखण्डता का उल्लंघन करता है। उदाहरण के लिए जब कोई खिलाड़ी फुटबॉल में घायल होने या फाउल होने का नाटक करता है, तो वह खिलाड़ी की तरह व्यवहार नहीं कर रहा है,

नैतिकता को अस्वीकार करता है और खेल का सम्मान कता है और कठिन लेकिन निष्पक्ष खेल के माध्यम से किसी का प्रतिद्वंदी नहीं होता है। इसका मतलब है नियमों और उनके महत्व को समझना अपने प्रतिद्वंदी के प्रति सम्मान को प्रोत्साहित करता है जो उनको नैतिकता के क्षेत्र में अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित करता है। खेल आचार संहिता उन सभी से आग्रह करती है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बच्चों और युवाओं को खेल में भाग लेने के लिए प्रभावित और प्रोत्साहित करते हैं।

खेल नैतिकता, माता, पिता, शिक्षक, प्रशिक्षक, रेफरी, प्रबंधक, प्रशासक, पत्रकार, डॉक्टर और फीजियोथेरेपिस्ट, शीर्ष स्तर के खिलाड़ी और महिलाएँ जो मॉडल और यहाँ तक कि दर्शकों के रूप में सेवा करते है। खेल प्रतियोगिताओं में समापन के दौरान पुरस्कार देने से इन्कार करके बच्चों और युवाओं के लिए एक सकारात्मक उदाहरण स्थापित करना चाहिए। खेल के अन्तर्गत अनुचित व्यवहार आँखों से दिखाई देता है, ऐसा होने पर उचित प्रतिबंध लगाया जाता है उन्हें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि प्रशिक्षण और योग्यता का स्तर बच्चों के खेल में भागीदारी के विशेष चरण को ध्यान में रखते हुए उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप हो। बच्चों और युवा खिलाड़ी का स्वास्थ्य सुरक्षा और कल्याण पहली प्राथमिकता होनी चाहिए। बच्चों के साथ युवा वयस्कों जैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए। खेल से संबंधित सभी लोगों को उनके विकास के साथ होने वाले शारीरिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के बारे में पूरी तरह से अवगत होना चाहिए और ये कैसे स्थिर प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं। खेल जगत में उन लोगों के लिए भी समान चिंता दिखानी चाहिए जो कम प्रभावशाली है और न केवल प्रतिस्पर्धा में सफलता बल्कि व्यक्तिगत प्रगति और जीवन कौशल के अधिग्रहण को भी बढ़ावा देना चाहिए और पुरस्कृत करना चाहिए। छोटे बच्चों को अपने स्वयं के खेल और नियम विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और स्वयं निर्णय लेना चाहिए। खेल निष्पक्षता को कैसे प्रोत्साहित किया जाए और दण्ड कैसे दिया जाए अनुचित प्रतिस्पर्धा और अपने कार्यों की जिम्मेदारी लेना।

खेल संघों और खेल से जुड़े अन्य निकाय, विशेष रूप से खेल महासंघों और शासी निकायों, शारीरिक शिक्षा संघों, प्रशिक्षण निकायों और संस्थानों और चिकित्सा, फीजियोथेरेपिस्ट और मीडिया व्यवसायों को सरकार और अन्य अधिकारियों के साथ सहयोग करने के लिए आमंत्रित किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए भ्रष्टाचार खेल उत्पादों के उत्पादन बिक्री और विपणन में शामिल कंपनियों सहित व्यापार जगत से भी खेल नैतिकता और निष्पक्ष खेल को बढ़ावा देने में मद्द करके अपनी जिम्मेदारियों को स्वीकार करने की उम्मीद की जाती है। प्रतियोगिता और टूर्नामेंट आयोजकों को उन युवा व्यक्तियों और बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं को ध्यान में रखना चाहिए तो अभी भी बढ़ रहे है, ताकि वे विशुद्ध रूप से मनोरंजक से लेकर अत्यधिक प्रतिस्पर्धा तक विभिन्न स्तरों पर भाग ले सके। खेल संघों को बच्चों की सुरक्षा करनी चाहिए। युवा लोगों और महिलाओं को यौन उत्पीड़न और दुर्व्यवहार और शोषण के खिलाफ विशेष रूप से असाधारण प्रतिभा के शुरूआती लक्षण दिखाने वाले बच्चों का सहयोग और सुरक्षा करनी चाहिए। उन्हें यह सुनिश्चित करना होगा कि बच्चों और युवाओं के प्रति जिम्मेदार संगठनों

के सभी सदस्यों या सहयोगियों के पास उनके मार्गदर्शन, प्रशिक्षण और कोचिंग के लिए आवश्यक योग्यताएँ होनी चाहिए। बच्चों की परिपक्वता प्रक्रिया के साथ होने वाले शारीरिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों और भावनात्मक और रिश्ते के दृष्टिकोण से वे एक इंसान के रूप में कैसे कार्य करते है। इस पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

आचार संहिता की प्रयोज्यता– खिलाड़ी व्यक्तिगत व्यवहार और निजी गतिविधियों के कई पहलू अधिशिक्षण के अधिकारिक कर्त्तव्यों से बहुत दूर प्रतीत होते है। सभी प्रशिक्षिकों को अपने एथलीटों के लिए रोल मॉडल के रूप में अपनी स्थिति के प्रति संवेदनशील होनी चाहिए। अनैतिक या अनुचित अभद्र समझी जाने वाली निजी गतिविधियाँ कोचिंग के माहौल को प्रभावित कर सकती है और प्रशिक्षकों को आचार संहिता का लगातार पालन करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

सरकार को निम्नलिखित जिम्मेदारियाँ स्वीकार करनी चाहिए– खेलों में सट्टेबाजी से होने वाली आय के आधार पर खेल वित्त पोषण की अखंडता और नैतिकता की निगरानी में सुधार करने के लिए जहाँ भी खेल का अभ्यास किया जाता है, वहाँ नैतिक मानकों की मांग को बढ़ावा देना। अपने खेल–संबंधी गतिविधियों के स्वस्थ नैतिक सिद्धान्तों को लागू करने वाले संगठनों और व्यक्तियों को प्रोत्साहित करना और समर्थन करना। खेल आचार संहिता को बढ़ावा देने और इसके अनुपयोग की निगरानी में सहयोग करना। शारीरिक शिक्षकों को स्कूली खेल पाठ्यक्रमों में खेल नैतिकता को केन्द्रीय भूमिका देने और मानवता और समाज में खेल के सकारात्मक योगदान पर जोर देने के लिए प्रोत्साहित करना। खेल की अखण्डता को बनाये रखने के लिए खुद को प्रतिबद्ध कर रहा है, जो इस तरह के बड़े खतरों का सामना करता है। मैचफिक्सिंग, रिश्वतखोरी, युवा खिलाड़ियों और महिलाओं की तस्करी और अवैध सट्टेबाजी विशेष रूप से युवा लोगों के बीच खेल नैतिकता को बढ़ावा देने के लिए किसी भी पहल का समर्थन करना, और इसे प्राथमिकता बनाने के लिए संबंधित संस्थानों को प्रोत्साहित करना।

यह मान्यता सुनिश्चित करना कि शारीरिक और मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य अत्यधिक पूरक है। मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य को किस तरह से कैसे विकसित करे? अनुसंधान विकसित करना और ज्ञान का प्रसार खेल के आभास से जुड़ी भावनाओं को प्रतिबंधित करें। खेल नैतिकता के साथ असंगत उद्देश्यों के लिए अनुवंशिक, यांत्रिकी के उपयोग का प्रसारित करना। खेल नैतिकता दो शब्दों में निहित है सम्मान और शिक्षा, नैतिक संदर्भ में खेल और खेल प्रतिबद्धता को बढ़ावा देने के किसी भी सफल प्रयास की कुंजी है।

निष्कर्ष– खेलों में भाग लेना हर किसी के लिए सीखने का अनुभव है और नैतिक मानवीय मूल्यों को बढ़ाने में सहायक है जो किसी भी पेशे में सफलता की कुंजी है। खेल में भाग लेने से खिलाड़ी बिना कुछ खोए जीवन के सफल गुण सीख सकता है। खेलों के बारे में यह कहा जाता है कि खेलों में हर कोई विजेता होता है। कुछ इसमें जीतते है और बाकी इससे सीखते है।

नैतिक मुद्दे खेल चिकित्सा के लिए अद्वितीय है क्योंकि एक टीम के संदर्भ में एथलीट खिलाड़ियों की देखभाल के असामान्य नैदानिक वातावरण के कारण जिसका प्राथमिक लक्ष्य जीतना है। चिकित्सा साधनों को गैर–चिकित्सीय उद्देश्यों के साथ

संतुलित करने का प्रयास करते समय जो तनाव उत्पन्न हो सकता है। वास्तव में एथलीटों का चिकित्सा उपचार विशेष कानूनी और नैतिक दिशा निर्देशों के अन्तर्गत आ सकता है। खेल चिकित्सक को इस लगातार बदलते नैतिक मानकों की सावधानीपूर्वक जांच करनी चाहिए और तदनुसार एथलीट की देखभाल का निर्देश देना चाहिए। राष्ट्रीय संगठनों की सिफारिशों और कानूनी परिवर्तनों और खेल चिकित्सा शासी निकायों की नीतियों और चर्चाओं सेमिनार जागरूकता जारी रखना चाहिए। एथलीट के लिए सर्वोत्तम सबसे नैतिक देखभाल प्रदान करने के लिए महत्वपूर्ण है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


1. http://www.coe.int/t/dg4/epas/resources/texts/code_en.pdf
2. http://www.scu.edu/ethics/publications/submitted/sports-ethics.html
3. http://www.sportssearchdata.com/articles/628/1/Importance-of-Ethics-in- Sport/Page1.html
4. Mackenzie, B. (2001) Code of Ethics and Conduct for Sports http://www.brianmac.co.uk/ethics.htm
5. Bruno Avelar Rosa. Ethics in Sport, http://www.pned.pt, Luso-Illyrian Institute for Human Development (iLIDH)
6. David Carr. Professionalism and ethics in teaching (professional ethics). London, UK: Taylor & Francis Publishers, Ltd, 2000.
7. Definition of sport. Sport Accord. Archived from the original on 28 October, 2011.
8. Council of Europe. The Europien sport charter. Retrieved 5 March, 2012.
9. Hums MA, Barr CA, Gullion L. The Ethical Issues Confronting, 1999.
10. Saunders AM. Professions: Their Organisation and Place in Society. Oxford: The Clreendon Press. 1928.31.
11. Wang X. Armstrong A. An Empirical Study of Professional Commitment to their Profession and employing Organisation. International Journal of Project Management. 2004; 15(20):377-386.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 4.875, ISSN 0975-4083
Vol.- 25, Hindi Edition, Year-13, April 2023- Sept. 2023

# बलौदाबाजार जिले के कसडोल तहसील में पर्यटन की संभावना

• प्रशांत कुमार गौरहा

**सारांश- पर्यटन संभावना युक्त क्षेत्रों, स्थानों को मुख्यतः प्राकृतिक दृश्य अर्थात नदी, नाले, झरने, पहाड़, पठार, वनसम्पदा और वन्य जीवन, पुरातात्विक, ऐतिहासिक स्थल, स्मारक, धार्मिक तीर्थ और आधुनिक औद्योगिक तीर्थ कल कारखाने आदि में विभक्त किया जा सकता है । कसडोल तहसील के अन्तर्गत एवं सीमावर्ती क्षेत्रो में ऐसे विभिन्न महत्वपूर्ण स्थान है, जो दर्शनीय है, और पर्यटन संभावनायुक्त है।**

**मुख्य शब्द- पर्यटन, प्राकृतिक, पुरातात्विक, ऐतिहासिक स्थल, स्मारक**

प्राकृतिक सौन्दर्य के स्थलों में इस तहसील का सिद्ध खोल जल प्रपात जो कसडोल से मात्र 01 किलोमीटर दूर है, प्रमुख । पर्यटन संभावनायुक्त ऐतिहासिक, पुरातात्विक स्थलों की सूची भी इस तहसील में बड़ी लम्बी हो सकती है। क्योंकि इस अचल में बौद्ध धर्म के मतावलम्बी अपनी लम्बी पैदल यात्रा के दौरान इस तहसील के अनेक मैदानी, पठारी प्रदेशों में नदियों के तटवर्तो स्थानों पर मन्दिर बनाकर बिहार बनाकर रहते रहे है। तिरपुर, तुरतुरिया, सिंहनगढ़ इसके प्रमुख उदाहरण है, जिनको और भी अधिक विकसित करने की संभावना है। इसके अलावा ऐतिहासिक दृष्टि से वीरनारायण सिंह के जन्म एवं कर्मस्थली के रूप में सोनाखान प्रमुख है। जिसका विकास किया जाना पर्यटन के विकास की संभावना की दृष्टि से प्रमुख है। सिरपुर सीमावर्ती क्षेत्र का प्रमुख ऐतिहासिक और धार्मिक स्थल है, जहाँ पर होने वाले पर्यटन के लिये कसडोल तहसील अच्छा बाजार बन सकता है। पुरातात्विक महत्व की दृष्टि से नारायणपुर का विकास पर्यटन की संभावना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

पर्यटन स्थलों का महत्व स्वाभाविक ही पर्यटकों से जुड़ा रहता है, और अंचल में पर्यटन का स्वभाव अधिकांश स्थानीय तथा धार्मिक प्रकार का है। इसलिये पर्यटन इस या सरसपाटे के कार्यक्रम में कहीं-न-कहीं धार्मिक स्थल जोड़ लिया जाता है। साथ ही पर्यटन संभावना की दृष्टि से यह विशेष महत्वपूर्ण होता है, कि किसी स्थल के साथ उसकी पहचान का कोई विशिष्ट बिन्दु निश्चित हो।

**बार नवापारा अभ्यारण्य-** शासन ने बार नवापारा सुरक्षित वनप्रांतर में उपलब्ध दोर, तेन्दुआ, भालू, बायसन, नाभर, चीतल, जोसिंगा, कोटरी, जंगली कुले, जंगली सुअर,

• प्राचार्य, बी. डी. महंत महाविद्यालय, पाली, कोरबा, छत्तीसगढ़

उदबिलाव जंगली बिल्ली, लकड़नध्घा, मोर, भड़िया, खरगोश तथा 244 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फ्ले बहुमूल्य वृक्षों के महत्व को देखते हुए दुगे अभ्यारण्य घोषित कर दिया है। इस अभ्यारण्य में जंगली जानवरो के पीने हेतु पानी का तालाब है। जिसके पास एक वा टावर बनाया गया है। इस टावर पर चढ़कर और रात्रि का इन्तजार करते हुए, वन्य जीवों को इस तालाब में पानी पीते देखा जा सकता है। बार नवापारा क्षेत्र के अभ्यारण्य के अतिरिक्त पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण निम्न क्षेत्र है –

**8018 सिट खोल-** यह कसडोल से मात्र 01 किलोमीटर पर स्थित एक जलप्रपात है, जिसकी वर्ष के 8–10 माह तक अदभूत दृश्यावली दर्शनीय रहती है।

**8028 देवधारा-** कसडोल से लगभग 35 किलोमीटर की दूरी पर स्थित यह भी एक जलप्रपात है, किन्तु उस प्रपात की धारा पतली और ऊँचाई भी कम है।

**8038 देवपुर हिल्स-** देन्धारा से कोई 13–14 किलोमीटर दूर देवपुर की पहाड़ियाँ है, जिसकी समुद्र सतह से ऊँचाई 2,900 फीट है, और इसे रायपुर जिले की सबसे ऊँची जगह मानते है। इस पहाड़ी चोटी से शिवरी– नारायण, बलौदा बाजार साफ दिखाई देता है। जहाँ से शिविरी–नारायण दिखाई देता है, उस स्थान को शिवरीनारायण प्वाइंट कहा जाता है।

**8048 सिंहनगढ़-** यहाँ जो खण्डहर एवं भग्नावशेष पाये जाते है। उससे ऐसा प्रतीत होता है, कि यहाँ बौद्ध संस्कृति कभी अपने वैभव में थी। बताते है, कि यह स्थान महायान बौद्ध सम्प्रदाय के लोगो की कर्मभूमि था, और उसी युग की बौद्ध कन्याओं काआगम था। सिंहनगढ़ की पहाड़ी, गुफा, पहाड़ी पर चौरस समतल मैदान, सघन वन पर्यटकों को आकर्षित करते है।

**8058 नारायणपुर-** कडील से मात्र ।। किलोमीटर दूर पुरातत्व विभाग द्वारा संरक्षित नारायणपुर मन्दिर है, जो महानदी के तट पर बसा है, और वन विभाग ने नदी तट पर छतरियाँ लगाकर पर्यटन के लिये आकर्षण उत्पन्न किया है। यहाँ मन्दिर भोरमदेव और खुजराहो शैली पर पत्थरों पर मूर्तियाँ तररश कर बनाया गया है।

**8068 सोनाखान-** जोंक नदी तट पर बसे इस गाँव सोनाखान को मध्यप्रदेश सरकार के तात्कालीन मुख्य मन्त्री अर्जुन सिंह ने वीर नारायण सिंह की स्मृति स्वस्थ इसे विकसित कर दिया है। ।,0008 एक हजार 8 से उपर की आबादी वाले इस गाँव में अस्पताल, स्कूल, छात्रावास आदि सभी आवश्यक कार्यालय उपलब्ध है। वीरनारायण सिंह का किला भग्नावेश के रूप में आज भी विद्यमान है।

इन सभी स्थानों पर पर्यटकों के लिये सिंचाई, वन और लोक निर्माण के द्वारा विश्रामगृह बनाये गये है। कुछ विश्रामगृह पहाड़ी चोटियों पर तथा कुछ वनों से घिरे प्रदेश के बने होने के कारण पर्यटको का मन बरबस मोह लेते है।

- 8018 नवागाँव का रेस्टहाउस
- 9028 देवपुर का रेस्टहाउस
- 8038– पकरीद का रेस्ट हाऊस यह बार और देवपुर के मध्य है !
- 8048 बार का रेस्ट हाउस

**छाता पहाड़-** छाता का अर्थ छतरी है, जो पानी और धूप से रक्षा करता है। यहां जंगल इतने घने है कि यदि इस पहाड़ पर पहुंचा जाय, तो मनुष्य धूप और वर्षा से सुरक्षित हो जावेगा। इस स्थान का नामकरण कोई 400-500 साल पूर्व हुआ है. अतः यदि आज वृक्षों की इतनी सघनता है, तो 4000-500 पूर साल निःसन्देह इतना घना रहा होगा कि जनजातीय भावार्थ में इसे छाता पहाड़ नाम दे दिया गया। इस पहाड़ पर चट्टानी गुफा है, जहां धूप, पानी, ठंड के साथ-साथ जंगली जानवरों से भी मनुष्य अपनी रक्षा कर सकता है।

गिरोधपुरी का संपूर्ण क्षेत्र पहाड़ी और वन से युक्त होने के कारण सतनाम संप्रदाय के मतावलंबियों के लिए वार्षिक मेले में आकर्षण का केन्द्र रहता ही है, किंतु प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण सामान्य पर्यटक भी यहां नियमित रूप से अवकाश के दिनों में आते हैं। इस धार्मिक-प्राकृतिक स्थल पर घासीदास के जीवन से जुड़े पर्यटन उत्पाद के अलावा पहाड़ी, चट्टानों, झरनों का भी विशाल संग्रह इसे तरतुरिया कहा गया। कुंड में गिरने वाले जल के नीचे स्नान करते हुए लोग अपनी संतान प्राप्ति की इच्छा करते हैं, जो पूरी होती है, ऐसा इस अंचल में विश्वास है। इच्छा पूरी होने के उपरांत वही दंपत्ति पुनः अपनी मनोकामना पूर्ण होने के उपलक्ष्य में उपर स्थित राम-लक्ष्मण मंदिर में भेंट चढ़ाता है। उपर मालागढ़ पहाड़ी पर, जहां से इस जलप्रवाह का उदगम है, मनोकामनापूर्ण होने पर बकरे की बली देने का रिवाज है, जो  शासन द्वारा अब प्रतिबंधित कर दिया गया है।

पर्यटक के लिए इस धार्मिक, सामाजिक मान्यता के अलावा प्रकृति का मनोरम दृश्य महत्वपूर्ण है। चारो और पहाड़ियां, घने वन, पहाड़ी चढ़ाई सूर्योदय का आनंद, हर वक्त पक्षियों का कलरव, रात्रि में जंगली हिंसक पशुओं की चिंघाड़ प्रफुल्लित और भयभीत करती हती है. बुंदिया बांध, तेन्दुआ, भालू प्रायः दिखाई देते हैं. नीचे नदी के पास किवदंति के अनुसार बाल्मिक मुनी का आश्रम बताया जाता है। कुछ खण्डहरनुमा कमरो की कतार है, जिसे बौद्धकालीन भिक्षुक बिहार बताया जाता है।

**निष्कर्ष-** कसडोल तहसील के महानदी तट क्षेत्र में प्राचीन बस्तियां है जिनका महत्व एवं वैभव पूर्व के इतिहास मे मिलता है मध्यवर्ती क्षेत्र प्राकृतिक कारणों से दर्शनीय है जबकि पूर्वो क्षेत्र वर्तमान में गिरौदपुरी या बलार बांध के कारण अस्तित्व मे आया है निःसंदेह पूरा तहसील पर्यटन की हार से महत्व पूर्ण है, साथ ही यहां की फसले भी ग्रीष्म मे नदी तट पर मनोरम दृश्य होते हैं। मात्र इन क्षेत्रों को प्रचार प्रसार का अभाव, सड़क मार्गो का आभाव दूर कर दिया जाय तो पर्यटन की समझा दशाएँ स्वयं स्थापित हो सकती है। क्षेत्र की आर्थिक सवलता एवं राज्य के लिये आय का स्रोत बन सकता है। अंग्रेजो ने इस क्षेत्र की प्राकृतिक केन्द्रो को पर्यटन एवं रेस्टहाउस बना कर महत्व दिया, परंतु धार्मिक केंद्रो को महत्व नही दिया जो जीर्ण है, तुरतुरिया, नारायणपुर, सिंहनगढ़ की बाँह गुफा आदि मात्र अपनी स्थानीय प्रथा, मेला के कारण अस्तित्व में है इसे सुहह करन भावी पीढ़ी के लिये आवश्यक भी है।

## संदर्भ ग्रन्थ सूची-


- Sen. A.K. Tourism in India
- Sen. A.K. Successful tourism management
- Sethi P. Successful Tourism management
- Rai H.C. Hill tourism
- Bhatia Ak. Tourism Development
- JHA S.M. Tourism marketing
- Bhatia Ak Turism management & marketing
- Bhatia AK International tourism - fundamental practice
- Sarkar A. K. Action plan and priorities in tourism Department
- Sarkar AK. Indian tourism - Economic planning and strategy
- रामचरित्र मानस – तुलसीदास, लवकुश कांड
- सतनाम पंथ धर्म ग्रंथ
- कबीर पंथ धर्म ग्रंथ –
- डॉ. रमेन्द्र मिश्रा छत्तीसगढ़ का इतिहास

**Journal of Centre for Research Studies**

**Rewa- 486001 (M.P.) India**

**Registered under M.P. Society Registration Act, 1973**

**Reg. No. 1802, Year 1997**

ISSN 0975-4083

9 770975 408002

Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications Rewa- 486001 (M.P.)
Printed at Glory Offset, Nagpur